शौकत उस्मानी

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

गिरधारी लाल व्यास

राजस्थान पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि.
चमेलीवाला मार्केट, एम.आई. रोड, जयपुर-302001

प्रथम संस्करण, 1996
[आर.पी.पी.एच.68]

ISBN 81-7344-011-5

मूल्य : 160.00 मात्र

रामपाल द्वारा न्यू एज प्रिंटर्स, ई-5, मालवीया इन्डस्ट्रियल एरिया, जयपुर-302017 से मुद्रित एव उन्हीं के द्वारा राजस्थान पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि., चमेलीवाला मार्केट, एम.आई. रोड, जयपुर के लिए प्रकाशित।

स्वतंत्रतासंग्राम के क्रांतिचेता
अमर सेनानियों को

शौकत उस्मानी के जीवन की घटनाओं का सार, उनके व्यक्तित्व की रूपरेखा, रचनाकार का स्वरूप, उनकी उपलब्ध रचनाओं का परिचय और कुछ पत्रों के अंश देकर महत्त्वपूर्ण किन्तु धुंधलती ऐतिहासिक याद को ताजा करना दायित्व था, जिसे इस आकृति से रेखांकित किया गया है। उम्र का तक़ाज़ा था।

उस्मानी की समग्रता ही प्रेरकता रही है और आगे भी रहेगी।

* * * *

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी और उसके केन्द्रीय कार्यालय, अजय भवन, नई दिल्ली, उस्मानी की स्वयं की रचनाओं, बीकानेर में उनके सुपुत्र उस्मान ग़नी, भतीजे इफ्तिखार अहमद व अन्य परिजनों एवं राजस्थान पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस [प्रा.] लि., जयपुर के प्रबन्ध निदेशक का. रामपाल को इस प्रस्तुतीकरण के संभव होने का समूचा श्रेय है जिनके सकारात्मक सहयोग के बिना जो कुछ बन सका, वह न हो पाता।

—गिरधारी लाल व्यास

चरण

मौलाबक्श : उस्मानी

बीसवीं सदी के प्रथम दो दशक ...

20 दिसम्बर, 1901। बीकानेर नगर ... उस्तों का मौहल्ला। तंग दरवाज़े वाले मकान में जेल की सैलनुमा कोठरी में जन्मा मौलाबक्श, भूरी माँ के गर्भ से पत्थर नक्काश बाउदीन का बेटा।

उछल पड़ी दादी नूरजहाँ। पुलकित थे चाचा गुलाम मौहम्मद, अहमद बक्श, उमरुद्दीन तथा चाचियाँ।

छः माह की उम्र में चल बसे पिता तो एक साल की उम्र में माँ।

'गोरा, गुदगुदा, तगड़ा, गोल-मटोल·... कितना सुंदर बच्चा!' कहा सबने।

एक साल का बे माँ-बाप का शिशु— दादी और चाचा-चाचियो का इकलौता प्यारा मौलाबक्श!

6 साल तक दादी नूरजहाँ 'माँ' रही और एक दिन भेद खुलते ही चोट लगी 'दोनों नहीं!' फिर भी उसके लिए उसकी दादी ही 'माँ' बनी रही जब तक वह रही ... वह रहा।

कुछ होश संभाला मालूम हुआ चाचा गुलाम मौहम्मद द्वारा संरक्षित वंशवृक्ष-से कि परिवार दो जातियों का या कहिये दो संप्रदायों का सम्मिश्रण है–'मुस्लिम राजपूत' या कि राजपूत मुस्लिम। लालसिंह ... लाल मौहम्मद, 'लालानी' 'उमरानी' 'पंवार साय्यल' आदि।

कलाकार बुजुर्ग को 'वाह! उस्ताद!' कहा और कालांतर में 'उस्ताद' का 'द' हट कर बोली में 'उस्ता' रह गया और 'उस्ता' को संशोधित कर जब 'लालानी' की तर्ज पर 'उस्मानी' कहा जाने लगा तो एक नई संज्ञा पैदा हो गई। आज यह समुदाय कहलाता है 'उस्ता'। राजाशाही के ज़माने तक यह एक सम्मानित जाति रही अपनी कला-कुशलता की वजह से।

मौलाबक्श दादी से बेहद प्यार करता था और वह उससे। वह उसके कहे-कहे सब नाच नाचती थी–'कहानी सुना तभी सोऊंगा' और वह सुनाने लगती सन् 'सत्तावन' की जंगे आज़ादी का दास्तानें 'फिरंगी' के ख़िलाफ़ बगावत की। ये वे घटनाएँ थीं जो दादी के जीवनकाल में घटी थीं।

बालहृदय के भावभवन की नींव भरी थी दादी के अंदाज़-ए-बयां ने।

* * * * *

मौलाबक्श को मकतब भेजा गया, पास की मस्जिद में जहाँ मुल्लाजी क़ुर्आन रटा रहे थे, लेकिन उन्हें खुद को नहीं मालूम था उसके अरबी शब्दों का मतलब जिसे वह समझने को उत्सुक था। सिलसिला टूटना था–टूट गया। अंधी आस्था

का प्रवेश हो गया 'निषेध'। दादी और चाचा उसकी पढ़ाई को लेकर चिंतित। दादी ने अपने बड़े भाई भूरजी से अपनी चिंता जताई और उन्होंने उसे पास के जैन उपासरे की पाठशाला में भेजने की सलाह दी।

जैन उपासरे में गणित की मार्फत पढ़ाई चालू हो गई, लेकिन कुछ अरसे के बाद एक शाम को सबसे छोटे चाचा उमरुद्दीन के आग्रहपूर्ण आदेश से उसे अंग्रेजी स्कूल में भर्ती करवा दिया गया बावजूद उसके इस विरोध के कि 'मैं फिरंगी काफ़िर के स्कूल में नहीं जाऊँगा' उसे जाना पड़ा। यदि वह दादी से फरियाद करता तो संभवतः वह भी अंग्रेजी स्कूल जाने से रोक देती क्योंकि वह थी 'फिरंगी' की कट्टर विरोधिनी, लेकिन वह उमरुद्दीन के आग्रह को नहीं टालती क्योंकि वह उसका सबसे छोटा बेटा था और सबका प्यारा भी इसलिए उसके आग्रह को कोई नहीं टालता था।

अंग्रेजी स्कूल में पहली कक्षा से पढ़ना शुरू किया अंग्रेजी और तब से लेकर छठी कक्षा तक मौलाबक्श उर्दू, अंग्रेजी और गणित में अव्वल आने का इनाम जीतता गया। आगे चल कर इनके अतिरिक्त इतिहास और भूगोल भी उसके रुचिकर विषय हो गए।

किशोरावस्था की देहलीज पर पाँव रखा ही था कि मौलाबक्श की दादी उसे छोड़ कर चल बसी। बहुत बड़ा आघात लगा उसे पहली बार महसूस हुआ मौत की निर्ममता का। खूब रोया, पर बेकार। लगते ही उसे बाप का सा प्यार देने वाले सबसे बड़े चाचा का साया भी न रहा। वह सूना और उदास हो गया।

डूंगर मैमोरियल कॉलेज अथवा कॉलेजियट स्कूल की नई इमारत बनने पर उपर्युक्त अंग्रेजी स्कूल को उसमें स्थानांतरित कर दिया गया।

यह प्रथम विश्वयुद्ध का समय था। मौलाबक्श और उसके साथी स्कूल के समय के बाद युद्ध की उत्तेजक घटनाओं को पढ़ते और अपने तरीके से उन पर बहस करते। 'अपने दुश्मन का दुश्मन अपना दोस्त' इसलिए उनकी समझ बनती कि जर्मनी अपना दोस्त यानी भारत को आज़ादी दिलाने में मददगार! शिक्षकों के शब्दों में इन लड़कों की 'चंडाल चौकड़ी' अंग्रेजी के पीरियड से भाग खड़ी होती और अखबार की सुर्खियों पर माथामारी करती थी। जर्मनी की आरंभिक जीतों पर खुशी के मारे उछल पड़ती थी।

बीकानेर रियासत में इस समय महाराजा गंगासिंह का राज था, जो 'अंग्रेजी हुकूमत' के सबसे बड़े चरणसेवी राजभक्त, भारत के स्वतंत्रता संग्राम के नंबर एक शत्रु और बीकानेर में देश की आज़ादी के नामलेवाओं को रातोंरात दमनचक्की में पीस कर आतंक बनाए रखने वाले संवेदनशून्य व्यक्ति थे। वे युद्ध में अंग्रेजी प्रशासन के आदेशानुसार उनकी मदद के लिए खुद अपनी फ़ौज को लेकर जाते थे और वफादारी की एवज में उपाधियाँ और तमगे हासिल करने का मकसद पूरा करते थे। अपने फौजियों को मरवाकर उन्होंने अंग्रेजी वर्णमाला के अधिकांश वर्णों के पदक बटोर

लिए थे। अंग्रेजी गवर्नर, वायसराय, सम्राट्-सम्राज्ञी और औपनिवेशिक यंत्र का प्रत्येक पुर्जा सबसे अधिक खुश था तो इस बात से कि गंगासिंह छः सौ रियासतों के राज्यों में आजादी की आवाज़ के गले को दबाकर मार डालने वाले शासकों में सिरमौर 'नरेन्द्र शिरोमणि' या 'महाराजाधिराज' है। पुरातत्व का रिकार्ड और स्वंतत्रता संग्राम में रियासती राजाओं की भूमिका के दस्तावेज़ इसके जीते-जागते प्रमाण हैं।

ऐसे माहौल में मौलाबक्श की दादी जैसी अल्पसंख्यक मुस्लिम बुज़ुर्ग महिला का 'फिरंगी विरोधी' रुख अपना कर प्रेरणास्रोत बन जाना निश्चय ही असाधारण बात थी और यह भी कम आश्चर्यजनक नहीं कि मौलाबक्श जैसे किशोर व्यक्तित्व में क्रांतिकारी भावना का अंकुर फूटने लगे। यह उल्लेखनीय है कि बीकानेर में मौलाबक्श की दादी ऐसी पहली महिला थी तो मौलाबक्श ऐसा पहला किशोर।

परिवार वालों ने मौलाबक्श का नाम बदल कर 'मौहम्मद शौकत' कर दिया और उसने खुद तत्काल 'मौहम्मद' को हटा कर शौकत के आगे अपने दादा के नाम 'उस्मान' को 'उस्मानी' बना कर अब 'शौकत उस्मानी' कर दिया। अंग्रेजी स्कूल से यही नाम चलता आ रहा है।

सन् 1917, मौलाबक्श या शौकत उस्मानी व कुछ सहपाठियों के लिए सर्वाधिक उत्प्रेरक। वे आसानी से 'बोम्बे क्रॉनिकल' पढ़ते—अवगत होते रहते समाचारों से। काफी अरसे बाद मोतीलाल नेहरू द्वारा संचालित पत्र 'इन्डिपेंडेंट' मिलने लगा। खूब रुचिकर लगा उन्हें। यह आता था शहर के प्रमुख पुस्तकालय 'सज्जनालय' में। इस समय भारत में 'होम रूल' आन्दोलन चल रहा था। बालगंगाधर तिलक और श्रीमती एनी बेसेंट के नाम का बोलबाला था।

बीकानेर में चेम्सफोर्ड का दौरा हुआ। 9वीं कक्षा के उस्मानी और कुछ छात्रों को महाराजा के महल और किले पर नियुक्त किया गया टेलीफोन ड्यूटी पर। वह नहीं चाहता था इसे, किन्तु उसने रुक कर फिर से सोचा 'यदि इन्कार कर दूँगा तो जीवन से धोना पड़ेगा हाथ, परिवार के सारे सदस्यों को।' उसने स्वीकार किया बेजान मन से। बाद में उसे यह अनुभव भी हो गया कि व्यक्तिगत दुस्साहसिक कार्य निरर्थक हो जाता है यदि यह 'सामूहिक' न बन सके और बीकानेर में उस समय असंभव था ऐसी स्थिति का पैदा होना।

इस शहर में संप्रदायवाद का प्रवेश हुआ। रियासती सरकार के अनुदान से विकसित और पं. मदनमोहन मालवीय द्वारा उद्घाटित नागरी भंडार के सुन्दर पुस्तकालय-वाचनालय में ग़ैर हिन्दुओं के लिए समाचार पत्रों और साप्ताहिक पत्रिकाओं का पढ़ना वर्जित कर दिया गया। मौलाबक्श उर्फ शौकत उस्मानी ने संस्था के संस्थापक और कॉलेज-स्कूल के प्रधानाचार्य तिवाड़ीजी से इसकी शिकायत की कि यदि मुसलमानों को मांसाहारी होने की वजह से कॉलेज में पानी के बर्तनों को नहीं छूने दिया जाता और भंडार में पढ़ने से वंचित किया जाता है तो सिखों और राजपूतों पर भी इस प्रकार के प्रतिबंध लागू किए जायें क्योंकि वे भी तो मांसाहारी हैं। अत्यंत सज्जन

और राष्ट्रवादी तिवाड़ीजी ने अपनी असमर्थता जाहिर की। बाद में अ.भा. राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में भाग लेने के कारण तिवाड़ीजी को रियासती प्रशासन की नाराजगी का सामना करना पड़ा और संभवतः इसी सदमे से लगभग सन् 1918 में उनका हृदयाघात से निधन हो गया।

तिवाडीजी के बाद प्रधानाचार्य के पद पर आगमन हुआ डॉ. संपूर्णानन्द का, जो बाद में उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री और राजस्थान के राज्यपाल बने। उनके आते ही उस्मानी को जल्दी ही समझ में आ गया कि वे पक्के राष्ट्रवादी हैं। वे हुए पहले राजनीतिज्ञ जो उसकी किशोरावस्था में उसके प्रेरणास्रोत बने।

यह समय था कि अनेक भारतीय राष्ट्रवादियों और छात्र क्रांतिकारियों का आदर्श जर्मनी परास्त हो गया तो ब्रिटिश उपनिवेशवाद के नए दुश्मन की तलाश की जाने लगी। रूस की लाल फौज की कामयाबियों और अक्टूबर क्रांति ने फिर से छात्रों को रोमांचित कर दिया। बीकानेर जैसे दूर-दराज और अलग-थलग पड़े इलाकों में भी अब उस्मानी और उसके कुछ साथी बोल्शेविकों के विषय में बहस करने लगे। बोल्शेविकों को संज्ञा दी जाने लगी-'बालसेवक।' मजदूरों और किसानों के क्रांतिकारी आश्चर्यों ने उन पर अभूतपूर्व प्रभाव डाला। अब यह धारणा पनपने लगी कि बिना विदेशी शस्त्र सहायता के नहीं जीता जा सकता हिन्दुस्तान की आजादी का जंग।

इसके पश्चात् 'जालियाँवाला बाग' के निर्मम सामूहिक हत्याकांड की बेहद दर्दनाक खबर ने उस्मानी और उसके दोस्तों का दिल दहला दिया। वे रोए और साथ ही ब्रिटिश शासन के विरुद्ध जूझने के लिए कटिबद्ध हो गए। एक ओर उनके दिमाग में बीस हज़ार निहत्थे, निरपराध बच्चों, औरतों, जवानों और बूढ़ों की आखिरी चीत्कार की अनुगूंज जोर मार रही थी तो इसके साथ ही खून में डूबी हुई लाशों के चित्र आह्वान कर रहे थे। इस नई पीढ़ी के लिए स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के लिए संकल्पबद्ध होने के अलावा और कोई विकल्प नहीं बचा था।

1919 का वर्ष था भारतीय इतिहास में अत्यंत महत्वपूर्ण क्रांतिकारी उभार का... स्वयंस्फूर्त जन-आन्दोलन का। एक ऐसा अभूतपूर्व था जनाक्रोश कि देखते ही देखते जला दिए गए डाकघर, रेल्वे स्टेशन और की जाने लगीं यूरोपियनों की हत्याएँ। अवरुद्ध किया जाने लगा सैनिक यातायात माध्यमों को। हड़तालें, आगजनी, प्रतिशोध और अनेक प्रकार के आवेगात्मक क्रियाकलाप फैलने लगे। ब्रिटिश साम्राज्य गोलियों और बमों से क्रूरतम दमन करके बड़ी मुश्किल से स्थिति काबू कर सका।

यही वह वातावरण था जिसने छात्रों में उत्तेजना पैदा की और वे येन केन प्रकारेण हथियार बटोरने में विश्वास करने लगे। बीकानेर में उच्चवर्गीय छात्रों को छोड़कर (क्योंकि वे उस समय प्रिंस ऑफ वेल्स के स्वागत में कविताएं रच रहे थे) बाकी छात्र ब्रिटिश राज को मार भगाने के लिए उबल रहे थे।

इधर खिलाफत आन्दोलन जोरों से फैलने लगा था जो कांग्रेस द्वारा संचालित

आन्दोलन के साथ जोड़ दिया गया था। इसने मुसलमानों, हिन्दुओं और अन्य जातियों को विदेशी शासन के विरुद्ध खड़ा कर दिया था। 'खिलाफ़त आन्दोलन' का मकसद जहाँ 'खलीफ़ा' को बचाने का था, वहाँ वह अंग्रेज़ी हुकूमत की 'खिलाफ़त' का अर्थ भी देने लगा।

जब मौलाबक्श या कहें शौकत उस्मानी और मैट्रिक के कुछ छात्रों ने पुस्तिकाएँ बाँटनी चालू कीं और पोस्टर चिपकाए तो रियासती पुलिस का ध्यान उस ओर गया। यद्यपि कोई खास दिक्कत तो नहीं हुई लेकिन मौलाबक्श के चाचा को यह निर्देश दिया गया कि वह अपने भतीजे को काबू करे। जब चाचा ने उसे मना किया तो वह परेशानी में पड़ गया–'क्या वह विदेशी राज के खिलाफ़ आन्दोलन में हिस्सा न ले?' उसने परिवार के भविष्य को सोचा और अपने कर्तव्य को भी। इस अन्तर्द्वन्द्व में उसने अपने आप को 'भूमिगत कार्यवाही' जारी रखने के निर्णय पर पहुँचा दिया।

साल के अंत में 'प्रिपेरेशन लीव' शुरू हुई और फिर परीक्षा देने उसे अजमेर जाना पड़ा। संयोगवश उस समय अजमेर में एक ओर उर्स का मेला चल रहा था और दूसरी ओर वहाँ राजस्थान के कार्यकर्त्ताओं का सम्मेलन। सम्मेलन में तिलक आए थे और साथ में वी. पटेल और खापरडे। तिलक ने ईदगाह पर हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल दिया। इसी में राजस्थान की राजनीति के प्रेरणास्रोत अर्जुन लाल सेठी भी थे। मौलाबक्श ने पहली बार इस प्रकार के राजनैतिक सम्मेलन में भाग लिया था और उसके दिल पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा।

परीक्षा देकर लौटते ही मौलाबक्श को हल्की चेचक ने आ घेरा। बाद में जब नतीजा निकला तो वह अच्छे अंक लेकर उत्तीर्ण हुआ। उसकी शादी किशोरावस्था में ही भूरी के साथ कर दी गई और अठारह साल की उम्र में उसकी एकमात्र संतान उसके पुत्र उस्मान गनी का जन्म भी हो गया था, यद्यपि इसका उल्लेख और कहीं नहीं मिलता केवल इन पंक्तियों के लेखक के एकाध आलेख में ही किया गया है; किन्तु यह तथ्य है क्योंकि वह उससे बीकानेर में बहुत बार मिलता रहा है और आज के इस क्षण तक जीवित है। उसकी एकमात्र संतान उसका पुत्र उसकी देखभाल करता है। यह परिवार निहायत मुफलिसी की जिन्दगी बसर कर रहा है। मौलाबक्श की माँ का नाम भी भूरी था और पत्नी का भी।

अहिंसक असहयोग आन्दोलन आरंभिक दौर में था और उसने चंद मुस्लिम नेताओं को प्रेरित किया कि वे अपने अनुयायिओं को हिजरत के लिए तैयार करके अफगानिस्तान में प्रवासी के रूप में प्रवेश कराएँ। आह्वान हुआ और मौलाबक्श जैसे सशक्त राष्ट्रीय क्रांति की समझ रखनेवाले नौजवानों ने रूस से हथियार बटोरने तक के मकसद को मद्देनज़र रखते हुए इस मौके का फायदा उठाने का इरादा बना लिया।

यहाँ इस बात पर ज़ोर देना अनुपयुक्त नहीं होगा कि सन् 1857 के प्रथम संघर्ष के बाद पैदा हुई अन्यमनस्कता और हताशा को तोड़ने का असरदार माहौल

पैदा किया सन् 1919 की राष्ट्रीय क्रांतिकारी लहर ने। इस लहर ने ही वह भूमिका तैयार की जो भगतसिंह, अशफाकउल्लाह, सुखदेव और राजगुरु जैसे क्रांतिकारी शहीदों की आधाशिला साबित हुई।

मौलाबक्श ... सुन्दर, स्वस्थ, किशोर व शौकत उस्मानी नाम का होनहार नवयुवक!

भूरी ... वैसी ही नवयुवती!

उस्मान गनी ... उनका सुन्दर, स्वस्थ नवजात शिशु!

दादी माँ से सुनी सन् सत्तावन की गाथाओं और बाद में डॉ. संपूर्णानन्द से प्राप्त प्रेरणा/ हताशामय विस्फोटक खुद का मिजाज़ और अध्ययन/ 1919 का उबलता हुआ वातावरण/ खिलाफत की असलियत को समझते हुए भी किसी बड़े मकसद के लिए उसका उपयोग करने का बढ़ता हुआ भीतर का दबाव/ सावेग परिपक्वोन्मुख विचार और उद्देश्य का निरंतर साग्रह उद्वेलन।

'तीर पर कैसे रुकूँ मैं आज लहरों में निमंत्रण!'

महाभिनिष्क्रमण

मई 1920 के प्रथम सप्ताहांत की वह निर्णायक रात!

तीसरे अफ़ग़ान युद्ध में अफ़ग़ानों की ब्रिटेन पर विजय से उत्पन्न मुस्लिम नवयुवकों और भारतीय क्रांतिकारियों में अपूर्व उल्लास! हिजरत लहर का आह्वान/ हर हालत में फिरंगी से मुक्त कराने की तमन्ना/ उस पार से सर्वहारा महाक्रांति की दिखाई देती हुई लालिमा का आकर्षण/ भीतर मेहनतकश इन्सानों की कसमसाहट ... बंधन ... पराधीनता।

'आ, आजा ... आना ही होगा, मैं जो बुला रही हूँ!'

'माँ! तुम ... आ रहा हूँ। निश्चय ही।' उसने मन में कहा और 'माफ करना मेरी अर्द्धांगिनी भूरी ... मेरे बच्चे! जा रहा हूँ युद्धक्षेत्र में तुम्हें बिना कहे।'

और दूसरे दिन के ढलने के बाद एक छोटा-सा पत्र घरवालों के नाम, 'मैं एक सम्मेलन में भाग लेने दिल्ली जा रहा हूँ।' और सात की रात को घर से निकला मोची का वेश बना रियासती खुफिये को चकमा देकर चल दिया ट्रेन से।

वह फिरोजपुर पहुँचा। यूरोपियन ट्रैफिक सुपरिन्टेन्डेन्ट ने सब तरह के सवाल किए। उस्मानी ने फिर चकमा दिया 'पेशावर में पिताजी सख्त बीमार हैं आगे का टिकट चाहिए।' (याद रहे उसके पिताजी कभी के गुज़र चुके थे) बात फिट बैठ गई और उसे लाहौर तक का टिकट मिल गया।

उस समय लाहौर ज्वलंत राजनीतिक सरगर्मी का केन्द्र था। कांग्रेस आन्दोलन के शीर्षस्थ मौलाना जफर अली खाँ मजदूर और राजनीतिक दोनों मोर्चों पर सक्रिय

थे। उन दिनों मौलाना अता उल्लाह ख़ान बुख़ारी आग उगल रहे थे। उस्मानी पेशावर जाने की फ़िराक में मौलाना ज़फ़र अली ख़ाँ और सैयद हबीब के संपर्क में आया जो कांग्रेस-खिलाफ़त आन्दोलन के महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे। मौलाना ने उसे 'ज़मींदार' पत्र में सवैतनिक काम करने को कहा किन्तु अपने आप को मध्य एशिया में जा कर क्रांतिकारी भूमिका अदा करने के अरमान वाले इस नौजवान ने इसे मंज़ूर नहीं किया। यद्यपि उसके पास पैसे की तंगी थी, फिर भी उसने किसी से पैसा नहीं लिया और पेशावर जाने के लिए अपना गर्म कोट बेच दिया। 36 रुपए में सेकन्ड क्लास का टिकट लिया और लाहौर से रवाना हो गया।

डिब्बे में एकाकी वह 'जनरल' बनने का दिवास्वप्न संजोने लगा। उसे क्या पता था कि भारतीय क्रांति के ठेकेदार एक दिन उसके इस स्वप्न को तोड़ देंगे।

रात के दस बजे गाड़ी पेशावर पहुँची। वह अपनी दरी पर तीसरे दर्जे के प्रतीक्षालय में लेट गया। इतने में पुलिसवाला आया, उसने पूछताछ की कि उसके पास कोई हथियार तो नहीं है। जब उसे तसल्ली हो गई तो उस्मानी ने उसे कहा कि वह हिजरत कमेटी के दफ्तर जाना चाहता है। लेकिन उसे पता चला कि उस समय वहाँ तक जाने के लिए कोई सवारी नहीं है। रात भर वह वहीं रहा।

सुबह जल्दी ही वह हिज़रत कमेटी के अतिथिगृह में पहुँचा। आगंतुक मुहाज़िरों के लिए वहाँ का प्रबंध बहुत अच्छा था। यहाँ रफ़ीक़ अहमद, फ़ज़ल इलाही और फ़िरोजदीन से उसकी अच्छी दोस्ती हो गई। मुहाज़िरों में आपस में अच्छा खासा भाईचारा था। विदेशी राज के ख़िलाफ़ लड़ने का गहरा जज़्बा था। वहाँ से खैबर दर्रे से होते हुए काफ़िला लांदीखाना पहुँचा। आगे दो पड़ावों पर ठहरने के बाद उसने अफ़गानिस्तान की दक्षिणी राजधानी जलालाबाद में प्रवेश किया।

शौकत उस्मानी वाले 300 के काफ़िले ने पैदल चलते हुए जबल-उस-सिराज की यात्रा की। यहाँ पहुँचने पर आगे जाने के लिए अनेक प्रतिबन्धों का सामना करना पड़ा। फिर भी सुविधा यह थी कि हरेक को प्रतिदिन डेढ़ सेर गेहूँ का आटा दिया जाता था जिसमें से बचे हुए को वे एक सिख दूकानदार को दे देते थे और बदले में जरूरत की चीजें ले लेते थे।

यहाँ एक प्रवासी कमेटी का गठन किया गया जिसका अध्यक्ष अकबर ख़ाँ क़ुरैशी को चुना गया। अकबर ख़ाँ क़ुरेशी असाधारण हिम्मत और योग्यता के व्यक्ति थे। यही वह पहले व्यक्ति थे जिन्हें 1921 में भारत में बोल्शेविक प्रचार के लिए दस साल की सख़्त कैद की सजा दी गई थी। केवल वही उन चंद राजनीतिज्ञों में थे जिनको एक दिन की भी छूट नहीं दी गई थी।

प्रवासी कमेटी ने बहुत अच्छा प्रबंध किया। काफिले के स्वास्थ्य का रखना, खेलकूद का इंतजाम करना, कुछ पूर्व सैनिको की मदद लेकर ड्रिल सैनिक अभ्यास करवाना, पोशाक और लाठियों से लैस करना आदि। इस दो महीनो में काफिला अच्छी सैनिक टुकड़ी की तरह हो गया। जबल-उस

के गवर्नर ने स्वयं उनकी परेड देखी और उन्हें अफ़गान सेना में अच्छे वेतन पर *शामिल होने को कहा लेकिन काफिले ने इन्कार कर दिया।*

गर्वनर ने काफ़िले में दरार डालने की साजिश रची, नतीजा यह हुआ कि दूसरी अर्जी पर केवल 198 हस्ताक्षर ही हुए और प्रवासियों के आगे बढ़ने की अर्जी को दबा दिया गया। तीसरी बार 82 मुहाजिरों के हस्ताक्षर से एक अल्टीमेटमनुमा दरख्वास्त दी गई और तब गवर्नर की मार्फत इन लोगों को निष्कासन के आदेश दे दिए गए। लेकिन साथ ही जो वहाँ पर रहकर नौकरी करना चाहते थे उन्हें लालच भी दिया गया। फिर दो और टूट गए। अब 80 में से 40 राष्ट्रवादी (उस्मानी सहित) और 40 शुद्ध खिलाफ़त वाले रह गए जो धर्म के लिए खून देने तक को तैयार थे।

चरित्र नायक के अनुसार 'खिलाफ़त' के रूप में भारतीय मुसलमानों की भावनाओं को कृत्रिमता के साथ उभारना अंततः उपनिवेशवाद के विरुद्ध क्रांतिकारी संघर्ष को *धार्मिक अथवा सांप्रदायिक जड़ों को मजबूत करने की दिशा में ही मोड़ देना था।* इसी का परिणाम था कि ब्रिटिश कूटनीति ने इसका फ़ायदा उठा कर अपनी विभाजन की नीति को सफल बनाने में इसका उपयोग किया। भारतीय मुस्लिम नवयुवकों को इस रूप में भड़काना जंग-ए-आजादी के विश्वव्यापी प्रगतिशील सिद्धांत के मापदंडों के बिल्कुल विपरीत था। यही वह विकृत नीति थी जिसे देश के टुकड़े करने के लिए जिम्मेवार ठहराया जाना चाहिए। मुस्लिम अभिजात्य वर्ग तो ब्रिटिश साम्राज्य से मिल ही चुका था, कांग्रेस के नेतृत्व का एक हिस्सा भी इसके लिए उत्तरदायी था। इधर टटपूंजिये हिन्दू और मुस्लिम राष्ट्रवादी भी गठजोड़ कर चुके थे।

अब होती है उस्मानी के कारवां की विषमतम यात्रा की शुरूआत। सबने उन सब चीजों को वहीं छोड़ दिया जिनको वे पीठ पर लाद कर नहीं चल सकते *थे। यहाँ तक कि न चाहते हुए भी उनको किताबों का मोह छोडना पड़ा। उन्हें* काबुल पुस्तकालय में जमा करा दिया गया। फिर वे चार-चार की कतार में सैनिकों की तरह चल दिए। नकली राइफलें उनके कंधों पर थीं।

यह डरावने पहाड़ों की तंग घाटियों की सुदूर तक ऊँची चढ़ाई और फिसलनभरी एवं मृत्युविभीषिका उत्पन्न करने वाली पगडंडियों के आमंत्रण को स्वीकार कर क्रूरतम परीक्षा से गुजरना था। कल्पना करिए अफ़गानिस्तान के मार्गों से पैदल पार पा सकने की भयंकरता की–चट्टानी पहाड़ियाँ, नीचे की घाटियाँ, तेजी से बहती हुई ठंडी नदियाँ, कहीं बीच में रेगिस्तान। अत:सलिलायुक्त गहरे दर्रे और गुफाएँ मानो मुँह बाए दैत्य हों। इन्हें देख कर तो कुशलतम सर्वेक्षकों के हौसले भी पस्त हो जाएँ। कहीं-कहीं तो एक ही आदमी का गुजर सकना मुश्किल–इतनी सिकुड़न।

काफिले की यात्रा का सबसे मुश्किल पहलू शुरू होता है गुल बहार से। यदि प्रवासी कमेटी में कुशलता की कमी होती तो पता नहीं जिन्दगी किस मुसीबत में फंस जाती। अकबर खाँ कुरेशी और अब्दुल मजीद के साहस और उनके खूबसूरत प्रबंध की बदौलत किसी को न तो भूखा रहना पड़ा और न ही अन्य किसी बाधा

का सामना करना पड़ा। कॉमन फंड से ही सारा काम निकाल लिया गया। यदि प्रबंध सही न हो तो इतने थोड़े पैसों का कॉमन फंड तो कभी का चुक गया होता।

यात्रा पैदल थी। पाँवों में फफोले पड़ गए थे, लेकिन मन के उच्च आदर्शों ने उन्हें आगे से आगे बढ़ाए रखा। शौकत उस्मानी सबसे अधिक दर्द झेल रहा था। ऊँची पहाड़ियों के मुकाबले उन्नत आशाएँ थीं।

फिर आई काफिले को चुनौती देती हुई बर्फीली ठंडी पंजशीर नदी जो छाती से ऊपर तक बहती हुई मुख्य मार्ग को विभाजित कर रही थी। पंजशीर के दोनों ओर के झुके हुए पहाड़ मानों दो दैत्य हाथ मिला रहे हों। दूसरी तरफ पहुँचना जिन्दगी से खेलना था, लेकिन काफिले ने वापिस लौटने की बजाय जिन्दगी को खतरे में डालना बेहतर समझा। उसे कायर कहलाना मंजूर नहीं था। दूसरे अफगानिस्तान छोड़ना कभी संभव न होता, क्योंकि उसके अफगान गाइड ने भी यहाँ तक ला कर उसे छोड़ दिया था। मीटिंग हुई और नेपोलियन द्वारा आल्प्स पार करने का उदाहरण सामने रखा गया। अब पंजशीर पार करने का उपाय सोचा गया। अपनी पगड़ियों को उतार कर उन्हें जोड़ा गया और वे सामने से आते हुए बहाव में एक दूसरे से जुड़ कर उतर गए। आखिर कठोर संघर्ष के बाद वे नदी को पार करने में सफल हुए। पाँवों का खून जम गया था, वे सुन्न हो रहे थे। सूखे पर पहुँच कर घास जलाया, कपड़े सुखाए और काफी देर बाद जी में जी आया।

अगले सुबह सराय से रवाना होकर मीलों तक चलने के बाद गंजू कारवां सराय पहुँचे। यह एक बढ़िया जगह थी। पहाड़ियों में से झरना बह रहा था। सरायवाले ने वहाँ रात भर ठहरने से मना कर दिया। काफिला झरने के पास जा टिका जिसका कलकल मधुर स्वर संगीत का आनंद दे रहा था।

रात को 9 बजे थकान से चूर काफिले के लोग सोए ही थे कि खतरे की सीटियाँ सुनाई दीं। सबको सावधान होना पड़ा और उन्होंने अपनी नकली राइफलें संभाल लीं ताकि हमलावर का मुकाबला किया जा सके। कुत्ते भौंकने लगे और घोड़ों की टापें सुनाई देने लगीं। इस मौके पर इन लोगों का फारसी भाषा का ज्ञान काम आया। वे समवेत स्वर में चिल्लाए कि वे भी हथियारबन्द हैं लेकिन पहल करके गोली नहीं चलाएँगे क्योंकि वे आतिथ्य को बदनाम नहीं करना चाहते। चाल चल गई और टापें जाती हुई सुनाई दीं।

काफिले ने सोचा कि संकट टल गया, किन्तु रात के तीन बजे फिर खतरे की सीटियाँ बजने लगीं। फिर वही चाल चली गई और कामयाब रही।

सुबह जल्दी ही वे गंजू से रवाना हुए। बीच में फिर नदी ने रास्ता रोका, लेकिन इस बार पानी की पारदर्शिता से पार करने में सुविधा हुई, नदी भी बहुत गहरी नहीं थी। अब की बार हिन्दूकुश की मुसीबत का सामना करना पड़ा। शिखर बर्फ से ढके हुए थे यद्यपि यह जुलाई की 21 तारीख थी। पहाड़ सीधे खड़े चुनौती दे रहे थे। रास्ता संकड़ा था। थकान से चूर और लहूलुहान काफिला बढ़ता रहा।

बर्फीली हवाएँ भी परीक्षा ले रही थीं।

विश्रामरहित रात, बेहद ठंडी हवाएँ और शिखर पर पहुँचने पर खाने को बची थीं सिर्फ 12 रोटियाँ जिन्हें बाँट कर काम चलाना था। शरीर को गरमाने के लिए गठीली जड़ें उखाड़ कर जलाई गईं। जब आग की रोशनी हुई तो सारा माहौल सुन्दर दिखाई देने लगा जैसे दीवाली हो।

सुबह आशा का संदेश लेकर आई। थका, भूखा और ऊँघता हुआ काफिला नीचे उतरते-उतरते बारह मील से अधिक चलता आया। आखिर ये लोग बाबर के मकबरे को पहुँचे जो बहुत बडी इमारत थी। वहाँ दो निगरानीदार सरकारी कर्मचारी थे। वे भले थे जिन्होंने कुछ आटा मोल दे दिया। वहाँ उन्होंने चपातियाँ बनाईं और खाना खा कर गहरी नींद ले सके। इन लोगों की दिनचर्या थी–सुबह अगले पड़ाव के लिए रवाना होना, पहाड़ों, नदी और मैदान को पार करना और शाम होते-होते किसी सराय के नजदीक पहुँच जाना।

इस तरह उन्होने डेह सालान, हैबक, घोर, बागलान और तश्करघान होते हुए अफगान तुर्किस्तान की राजधानी मजार-ए-शरीफ पहुँचे। यह शहर बहुत खूबसूरत था। वहाँ खाने को बहुत से फल मिले।

तीन सप्ताह की इस संकटपूर्ण यात्रा के कष्ट को उन्होंने आपसी हँसी-मजाक और मनोरंजन से भुला डाला। सोवियत वाणिज्य दूत की मदद से काफिले को सोवियत यूनियन की सीमा में प्रवेश करने की अनुमति मिल गई।

प्रतिभाशाली उस्मानी स्कॉलरशिप लेकर उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकता था। वह डॉक्टर, इंजीनियर या भारत की अंग्रेजी सरकार का प्रशासनिक अधिकारी बनने में कामयाब हो सकता था—सैनिक या पुलिस का अधिकारी भी यदि वह इस पुरख़तर जंग-ए-आज़ादी में उतरने के लिए सदा के लिए घर-परिवार को छोड़ कर तलवार की धार पर पांव न रखता, दिल में कभी न बुझनेवाली आग लेकर न चल पडता और इसकी बजाय रियासती राजा की चाटुकारी करता तथा फिरंगी की हर हरकत के गुण गाता। उसके पास महकते फूलों के बगीचेवाला शानदार बंगला होता, नौकर-चाकर, सशस्त्र पुलिस के पहरेदार आदि होते। बेगम खुश होती, बच्चा आगे चल कर सुन्दर, उच्च शिक्षा प्राप्त नौजवान होता। देश-विदेश की यात्रा करता। मोटरें दौड़तीं... हवाई जहाज़ उड़ते। पर उसने यह क्या किया, क्यों पाली यह बला? आज़ादी के दीवानों की कतार में खड़ा होकर क्यों कष्टों को गले लगाया, क्यों मौत का जोखम उठाता रहा? क्यों दोहराने लगा लक्ष्योन्मुख इतिहास पुरुषों और क्रांतिकारियों के गृहत्याग की कहानी?

दौर-ए-गिरफ़्तारी, गुलामी, जंग-ए-इन्कलाब

मज़ार-ए-शरीफ के सहृदय गवर्नर ने काफिले को सरलता और सहजभाव से सोवियत सीमा में प्रवेश पा सकने में सहयोग दिया। 'बोल्शेविक महाक्रूर, कातिल,

अश्लील और जंगली होते हैं।' भारत में एंग्लो-इंडियन प्रेस लगातार प्रचार कर रहा था। उस्मानी का काफ़िला उत्सुक था किसी बोल्शेविक को देखने के लिए, लेकिन यह क्या, जब वे सामने आए ... खूबसूरत चिट्टे चेहरे काफ़िले के काले लोगों से गले मिलते हैं ... हर बात में 'कॉमरेड' कह कर उच्चस्तरीय मानवीय व्यवहार का परिचय देते हैं ... हर प्रकार की सहायता करते हैं।

तिरमिज़ में आशातीत स्वागत। गगनभेदी नारे गूंज रहे हैं—'हिन्दुस्तानी इन्कलाब जिन्दाबाद!' 'दुनिया भर में इन्कलाब जिन्दाबाद!' मानवता का फैलता हुआ समुद्र—रूसी...तुर्कमानी...सर्ड...उज्बेक और ताज़िक। यूरोप और एशिया के नर-नारियों ने एक साथ मुट्ठियाँ तान कर रास्तों को कतारबन्द कर दिया था।

शौकत और साथियों की थकान जाती रही ... इसकी बजाय वे अतिथि सत्कार से आह्लादित हो रहे थे।

इसके बावजूद जल्दी ही काफ़िले को उसके कट्टर खिलाफतियों ने विभाजित कर दिया—तुर्कों के सहयोगियों और भारत की स्वंतत्रता के लिए समर्पित साथियों में। एक दल तुर्की जाने को आमादा हो गया।

दो नावों का प्रबंध किया गया क्योंकि सोवियत प्रशासन अपने ऊपर इस मिथ्या आरोप का लगना स्वीकार नहीं करना चाहता था कि उसने बोल्शेविक विरोधियों का कत्ल कर दिया और अपने पक्षधरों को जिन्दा रखा। कारण था—तुर्किस्तान के उस हिस्से में से यात्रा करने का जानलेवा खतरा मोल लेना जो प्रतिक्रांतिकारियों के कब्जे में था। तिरमिज़ के साथियों ने खतरे की पूरी चेतावनी दे दी थी।

रात को नावें भंवर में फंस गई थीं लेकिन गनीमत यह थी कि सभी सोए हुए थे इसलिए अस्तव्यस्तता से बचाव हो गया अन्यथा नावें उलट सकती थीं। इधर उज्बेक मल्लाहों की सूझबूझ भी कामयाब हुई कि उन्होंने दोनों को एक साथ संलग्न कर दिया। इस तरह खतरा टल गया।

काफ़िला सुबह किलिफ़ पहुँचा जहाँ बोखारी मुल्लाओं से उसकी भेंट हुई। दोपहर को वहाँ से फिर रवाना होना पड़ा। गाते-बतियाते चलते हुए शाम हो गई।

नदी के दक्षिणी किनारे पर राइफलें और भाले लिए प्रतिक्रांतिकारी तुर्कमान दिखाई दिए। ख़तरा पैदा हो चुका था, मल्लाह आतंकित से दिखाई दिए। नावें ज्योंही किनारे तक पहुँचीं, तुर्कमानी उनमें घुस आए। उन्होंने अनेक सवाल पूछे। काफ़िले को घेर लिया गया और उसे बंधक बना लिया गया। आग जलाने से मना कर दिया गया। इसलिए सारी रात भय और भूख के साथ बितानी पड़ी। काफ़िले के भीतर ही के एक तुर्की दोस्त ने उसे आगाह कर दिया कि मत मौत के चंगुल में है।

काफिले वालों को नावों से उतार कर कतार में खड़ा कर दिया गया। ली गई और हरेक को कुंदों और लात-घूंसों से बड़ी बेरहमी से पीटा गया।

पिटाई के बाद आहिलों ने हुक्म दिया—'तेजी से चलो।' और तब ...

और गधों पर सवार उन मुल्लाओं के पीछे-पीछे पैदल दौड़ना पड़ा। दौड़ते हुए खच्चरों के खुरों से उड़कर आँखों और नाक में घुसती हुई रेत, कोड़ों की मार, भूख-प्यास और गर्मी से बेहाल और मार खाते-खाते पशुओं की दौड़ के बराबर तेज दौड़ना! इन निरपराधों की यह नियति!

इस बेहया दौड़ ने कइयों को बेहोश कर दिया। दो साथी अपने हाथ मिलाकर बेहोश को उठाते और तीसरा पीछे से सहारा देता और उसे लेकर दौड़ते।

धूल ने चेहरों की पहचान खो दी थी और सांस को विकृत कर दिया था। कुछ पता नहीं इस हालात में उस्मानी और उसके साथियों को कितने मील दौड़ाया गया।

आखिर वे एक कारवांसराय पर आकर रुके और इन लोगों को पशुओं के बाड़े में पटक दिया गया जिसकी दीवार पर चढ़ कर लड़कों ने 'काफिर ... काफिर' कहते हुए पत्थर मारने चालू किए।

एक सप्ताह के बाद बोखारा जाने के आदेश को दोहराया गया। पहले सबकी तलाशी ली गई। कुर्आन की प्रतियों को ठुकरा दिया गया क्योंकि तुर्कमानियों के अनुसार कुर्आन जैसा पवित्र ग्रंथ छपा हुआ नहीं हो सकता, वह तो हस्तलिपि में ही हो सकता है।

ग्यारह बजे 'हैदा!' और 'हैको!' चिल्लाकर तुर्कमानी सवारियों पर और काफ़िले के लोग फिर उसी तरह पशुओं की तरह हांके गए। उसी हालत में उन्हें बेहाल दौड़ाया गया और कुछ वापिस घूम कर उन्हें 'कस्टम हाउस' की तरफ मोड़ दिया गया।

'कस्टम हाउस' कितना भयंकर स्थान! एक छोटा कमरा जिसमें से हवा के गुजरने का कोई रास्ता नहीं ... सबको बुरी तरह ठूंस दिया गया। अगस्त का गर्म महीना ... न हवा, न पानी।

फिर अचानक दरवाज़ा खुला, पीने को कुछ पानी दिया गया और फिर डंडे मार कर उन्हें हांका गया। चलते-चलाते उन्हें 'हत्या-स्थल' पर ले जाया गया जो हड्डियों से भरा हुआ था। काफिले के लोगों को एक ही सर्किल में मुस्लिम-प्रार्थना की मुद्रा में बैठने का हुकम दिया गया और उनके पीछे बंदूकधारियों को और तलवार-भाले वालों को खड़ा कर दिया गया। अब किसी को कोई शक नहीं रह गया कि मौत सिर पर खडी है। सबके सपने चूर-चूर हो गए। मरण जबडा खोले जीवन को खाने को आमादा था।

बुजुर्ग तुर्कमानी एक ऊँचे स्थान पर बैठक कर रहे थे। बारी-बारी से किश्तवार तीन दफे मौत के हुकम दिए जायेंगे और तीसरी किश्त के हुकम पर सभी लोगों को मार दिया जायेगा।

पहला हुकम हुआ—'मौत की सजा!' सिपाही सावधान हो गए और राइफलें तान लीं। 'थोड़ी भी हरकत की तो बिना तीसरे हुकम का इंतज़ार किए गोली मार देंगे!' चारों ओर मौत का सन्नाटा!

कुछ मिनटों के बाद दूसरा आदेश हुआ जिसने पहले आदेश की पुष्टि कर दी। अब अंतिम आदेश आते ही क्षण भर में इतनी बेशकीमती जिन्दगियों का एक साथ खात्मा! दया की भीख बेकार ... भाग सकना नामुमकिन! होना सिर्फ़ गर्म रक्त धाराओं का सरे राह बह कर जम जाना! मौत, मौत ... मौत!

भवितव्य अचानक बदल गया। एक-डेढ़ फर्लांग की दूरी पर गोला दागने का धमाका हुआ। कुछ देर बाद एक और धमाका। किसने किया—अज्ञात रहा। संभवतः संकट में फंसे हुओं को बचाने के लिए बोल्शेविकों ने किया हो। कुछ भी हो शौकत उस्मानी के काफिले की हत्या करने वालों में दहशत फैल गई और तीसरा और अंतिम आदेश मौत का न हो कर काफिले को गुलाम बना उसके लोगों को जोड़ों के रूप में आपस में बांट लेने में बदल गया।

उस्मानी और ज़फर उमर मसद एक फारसीदां मुल्ला के हाथ सौंप दिए गए। गर्दन में मोटी सांकल लगाकर उसे हथकड़ी के साथ जोड़ कर बांध दी गई थी। रात को उस्मानी के दाहिने पाँव की बेड़ी को ज़फर के बाएँ पैर की बेडी से जोड़ दिया जाता था ताकि रात को कोई भी करवट तक न बदल सके। रात को धूल से भरी दरी 'अल्ला हो अकबर!' कह कर मुँह पर डाल दी जाती थी। सांस से धूल फेफड़ों तक पहुँचती रहती जो सुबह खाँसी के साथ उगलनी पड़ती थी।

दो सप्ताह तक चलती यह गुलामी की हालत। एक रात अचानक सर्चलाइट बम फटते दिखाई दिए। तोपगोले छूटने और मशीनगन से गोलियाँ चलने के जोरदार धमाके और कान फाडनेवाले शोर सुनाई देने लगे। लगातार दो रातों तक यही माहौल रहा। अब मुल्ले घबराए। उन्होंने अपने बोरिए-बिस्तर समेट लिए और सुबह जल्दी ही घोड़ों पर सामान लाद कर रवाना हो गए। इससे पहले 'आज़ाद!' कह कर मुल्ला ने औरों की तरह शौकत उस्मानी और ज़फ़र को भी छोड़ दिया।

अब मैदान साफ था। काफिले के लोग आज़ादी से घूमने लगे और चाय, दूध, दही, पनीर और रोटी लेकर अपनी भूख मिटाने में सफल हुए। बिखरे हुए सब साथी आ मिले। ऊँचाई पर सफ़ेद झंडा लगाया और उस रात 57 साथी आराम से सोए।

अगले सुब शौकत उस्मानी ने केरकी जाने के रास्ते का नक्शा तैयार किया और काफिले के सबसे लंबे साथी के हाथ में झंडा देकर सब उत्तर की ओर रवाना हो गए।

तेजी से कदम रखते हुए, रास्ते में आगे की दिशा की पूछताछ करते हुए ये लोग किले की ओर बढ़ते गए। सीमा तक पहुँचने पर लाल सेना के कुछ सैनिकों ने पूछताछ की और जब उन्हें तिरमिज़ से तुर्कमान तक गुलामी का हाल सुनाया तो उन्होंने भूमिगत द्वार से इन्हें तुरंत प्रवेश करवा दिया।

जल्दी ही काफिले को रूसी क्रांतिकारी मिल गए और उन्होंने इनको दो बडे बैरकों में ठहरा दिया। यहाँ अच्छा खाना भी मिला तो अच्छे दोस्त भी और अध्ययन

का मसाला भी।

तुर्कमानी प्रतिक्रियावादियों ने केरकी को घेर लिया था। किले में केवल 300 सोवियत और जादेही सैन्यबल था। भारतीय काफिले के इन क्रान्तिकारियों ने अपनी सेवाएँ अर्पित कीं। उन्हें नदी का मोर्चा सौंप दिया गया।

सितंबर-अक्टूबर की बरसाती ठंडक की कंपकंपी लाती मौसम में खाई-खंदक की जिन्दगी कितनी असुविधाजनक होती है—भुक्तभोगी ही जान सकते हैं। फिर भी भारतीयों के लिए प्रेरक शक्ति थी क्रांति की रक्षा में प्रभावकारी सक्रियता का परिचय देना।

केरकी का घेरा डालने वाले प्रतिक्रांतिकारी तुर्कमानों की संख्या 5000 थी। इधर इन क्रांतिरक्षक भारतीयों ने दो मुख्य चौकियों पर अपना मोर्चा लगाया था—एक पुराने किले के खंडहर में और दूसरा एक पेड़ों से घिरे ऊँचाई स्थित बंगले में। दोनों के बीच खाइयाँ थीं।

दोनों ओर से गोलियाँ चलने लगीं। ये लोग रात-दिन चौकसी रखते हुए सुरक्षात्मक लड़ाई लड़ते रहे। जब इनकी तरफ खड़ी नावों को उनके गुप्तचरों ने हथियाने की कोशिश की तो इन्होंने उन्हें दस्तावेजों सहित पकड़ लिया। इस समय क्रांतिरक्षक भारतीयों की संख्या केवल 76 रह गई थी क्योंकि 4 तुर्कमानों द्वारा मार डाले गए थे। एक ओर ये भारतीय लड़ रहे थे कि दूसरी ओर से सोवियत क्रांतिकारियों ने आक्रमण कर दिया। अब तो हमलावर बीच में फंस गए, उनकी ताकत टूट गई और आखिर उन भड़काए हुए भाड़े के किसान सैनिकों ने समर्पण कर दिया।

बोखारा की क्रांतिकारी कमेटी ने तुर्कमानों के साथ ऊँचे दर्जे का शानदार व्यवहार किया और अमीर और जागीरदारों की जमीन किसानों में बांट दी। अब अमीर और उसके कारिन्दों के द्वारा उल्टी पट्टी पढ़ाए हुए तुर्कमानों को क्रांति का सही अर्थ समझ में आ गया। उन्होंने भारतीय प्रवासियों को पकड़ कर उनके साथ जो दुर्व्यवहार किया था—अब केरकी के बाज़ार में मिलकर बार-बार माफी माँगने लगे। वही लोग इस समय मुस्कराते हुए दोस्ताना अंदाज़ में पेश आ रहे थे।

अक्टूबर के अंत में सैनिक दस्ते आ पहुँचे और उन्होंने चार्ज संभाल लिया। केरकी रक्षक भारतीय दस्ते के लोगों को ताशकंद जाने को कहा गया।

शाम को काफिला चर्जुई (लेनिनिस्क) पहुँचा तो उसका 'भारतीय कॉमरेड्स जिन्दाबाद' 'केरकी के रक्षक जिन्दाबाद' के जोरदार नारों से स्वागत किया गया। रात को शानदार दावत दी गई।

उधर ताशकंद के अधिकारियों ने जल्दी पहुँचने का तार भेज दिया, बीच में बोखारावाले स्थानीय अधिकारियों ने ताशकंद से पहले वहाँ भेजने पर जोर दिया। इस तरह अभिनंदन-कार्यक्रमों की होड़ लग गई।

अपने जीवन के प्रथम दो दशकों में ही इस नौजवान शौकत उस्मानी ने अपने साथियों के साथ मिलकर आगे कदम बढ़ाते हुए अपने व्यक्तित्व को अभूतपूर्व अंतर्राष्ट्रीय

आयाम दे डाला। उम्र बीस को भी पार न कर पाई थी कि वह भारत और सोवियत संघ दोनों की क्रांतिकारी सक्रियताओं के इतिहास की कड़ियों को जोड़नेवाले प्रथमोत्तम सार्थक समुदाय का अत्यंत महत्त्वपूर्ण घटक साबित हुआ। यह गरिमा अन्यत्र दुर्लभ है। जान हथेली पर रखकर क्रांति के उद्देश्य की रक्षा के लिए भूमिका निभाना एक उच्चतम मानवीय मूल्य की यथार्थ अभिव्यक्ति ही कही जा सकती है।

यहीं से उस्मानी साधारण से ऊपर उठ कर असाधारण क्षेत्र में प्रवेश कर जाता है—एक ऐसी सीमा को पार कर जाता है जहाँ से पीछे हट सकना नामुमकिन-सा हो जाता है। इस बलिदान के मार्ग पर जो पांव रख देते हैं दूसरों के लिए ईर्ष्या के पात्र तो बन ही जाते हैं अपितु अपने लिए केवल यातनाएँ ही चुनते-बुनते रहते हैं। यहाँ तक कि ऐसों को जो श्रेय देय होता है वह भी अदेय ही रह जाता है।

शौकत उस्मानी

ताशकंद स्टेशन पहुँचने पर कुछ भारतीय अगवानी करने आए जिनमें ज्यादातर पंजाब के साथी थे। ये दो दलों में विभाजित थे और अपने-अपने नेताओं के विषय में बात कर रहे थे। एक दल के नेता एम.एन. राय, अवनी मुखर्जी और मौहम्मद अली थे तो दूसरे के मौलाना अब्दुल रब, एम.पी.टी. आचार्य और खलील थे।

उस्मानी और साथियों को 'इंडिया हाउस' में ठहराया गया जहाँ दोनों ग्रुपों के नेता अपना-अपना पक्ष प्रस्तुत करने आ पहुँचे। एम.एन. राय के मार्क्सवाद के ज्ञान से प्रभावित होकर काफ़िले के कुछ लोग उसके पक्षधर हो गए पर शौकत उस्मानी सहित कुछ साथी पक्षनिरपेक्ष रह कर स्थिति का अध्ययन करने लगे। आचार्य उस समय अन्दीजान में व्यस्त थे। राय-आचार्य विवाद ने प्रवासी भारतीय कम्युनिस्टों के विभाजन को इतना स्पष्ट रूप दे दिया था जिसका प्रभाव कॉमिन्टर्न तक की मीटिंगों पर भी पड़ा।

नवंबर 1920 के प्रथम सप्ताह में जब एम.पी.टी. आचार्य ताशकंद लौटे तो साथियों ने मिल कर 'भारत की कम्युनिस्ट पार्टी' की नींव डाली। मौहम्मद शफ़ीक को इसका जनरल सैक्रेटरी चुना गया। उस्मानी लगभग छः माह तक उसमें शामिल नहीं हुए, लेकिन वे विविध विषयों की किताबों के गहन अध्ययन में डूब गए। मानव और संपत्ति के विकास के इतिहास, ऐतिहासिक भौतिकवाद और अन्य राजनीतिक और सामाजिक घटनाओं को अब वे इतनी गहराई से पकड़ते जा रहे थे कि मानो सार्थक कम्युनिस्ट होने की पूर्वशर्त की पूर्ति कर रहे हों। उस्मानी की विशेषता इस बात में थी कि वे सैद्धांतिक ज्ञान को जितना महत्त्व देते थे, ताशकंद के आम आदमी से मिल कर व्यावहारिक पक्ष को भी उतनी ही गंभीरता से लेते थे। कारखानों के श्रमिकों और खेतों के किसानों से भी उन्होने जीवित संपर्क बना लिए थे।

परिस्थितियों ने एक ऐसा मोड़ ले लिया था कि आपसी तनावों में भारत में सोवियत हथियारों की मदद से क्रांति करने की आकांक्षाएँ डूबती दिखाई देने लगीं। इंडिया हाउस रब-आचार्य ग्रुप का मुख्य अड्डा बन गया तो बोखारा-हाउस रॉय-अवनी ग्रुप का। दोनों में अपने-अपने तरीके से अनिश्चितकालीन, अनिर्णयकारी और अनिर्धारित बहसें चलने लगीं।

दिसम्बर में एम.एन. राय की सलाह पर उस्मानी को आन्दीजन जाना पड़ा। वहाँ उनका संपर्क आचार्य से हुआ। कुछ समय बाद आचार्य ने उस्मानी को कुछ हथगोलों और अन्य हथियारों की रखवाली की जिम्मेवारी सौंप दी। वहाँ इसके अलावा और कोई विशेष कार्य तो पूरा नहीं करना था, अलबत्ता उस्मानी यहाँ अनेक रूसी और सर्ड छात्रों के साथ घुलमिल गए।

जब उस्मानी को वापिस ताशकंद बुला लिया गया तो उन्होंने लाल सेना की इकाई को हथियारों का चार्ज हवाले कर दिया जो पहले भी उसी के पास था। वहाँ पहुँचने पर उन्हें मालूम हुआ कि एक सैनिक स्कूल की स्थापना कर दी गई जहाँ लगभग सारे कम्युनिस्ट और तटस्थ उसमें भर्ती हो गए हैं और छात्रावास में रहने लगे हैं।

ताशकंद में उस्मानी को सूचित किया गया कि उन्हें और दो अन्य साथियों को प्रशिक्षण के लिए मॉस्को भेजना तय किया गया है। इस पर उस्मानी सहमत हो गए।

जनवरी 1921 के आरंभ में एम.एन. राय, एवेलिन राय, अवनी मुखर्जी और मौहम्मद अली तथा शौकत उस्मानी और उनके तीन साथी मॉस्को पहुँचे। उस्मानी और तीनों प्रशिक्षार्थियों को डेल्वोई होटल में और कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं को डी-लक्स होटल में रखा गया। यहाँ जापान के प्रसिद्ध कम्युनिस्ट नेता सेन कतायामा, ब्रिटेन के टौम क्वलेल्क और फिनलैंड के कूसिनेन मिले तो मिखाइल वोन्दिन, फाइन्वर्ग जैसे शिक्षक और रीन्स्टीन जैसे सोवियत ट्रेड यूनियन नेता भी उपलब्ध थे। जर्मनी के युवा कम्युनिस्ट नेता मुंजेन्वर्ग भी थे। प्रशिक्षण का अधिकांश भाग व्यावहारिक ही था। सैद्धांतिक पक्ष में अर्थशास्त्र, राजनीति और ट्रेड यूनियनवाद प्रमुख विषय थे।

ताशकंद में हो अथवा मॉस्को में और किसी भी हाल में हो शौकत उस्मानी की चेतना के केन्द्र में भारत का स्वंतत्रता संग्राम रहता था। वे आतुर रहते थे स्वयं को सर्वतोभावेन समर्पित करने के लिए।

मॉस्को में अध्ययन और भ्रमण ही मुख्य कार्य थे। सात फरवरी 1921 को प्रिंस क्रोपाटकिन का निधन हुआ, यद्यपि वह अराजकतावादी था, किन्तु रूसी उसका बहुत सम्मान करते थे। उसके अंतिम संस्कार के अवसर पर शोक श्रद्धांजलि देने सभी नेता उपस्थित हुए। वहाँ लेनिन भी आए और बोले। शौकत उस्मानी ने पहले पहल लेनिन को बोलते हुए देखा-सुना।

एक अन्य अवसर पर शौकत उस्मानी एक विदेशी प्रतिनिधिमंडल में शामिल होकर क्रेमलिन में लेनिन से मिले थे। उन्हें लेनिन एक अत्यंत सहज और संवेदनशील व्यक्ति लगे जिनकी आँखें तीव्रता से सामने वाले के भीतर के भेद-वेध लेती थीं। उनमें दूर तक देखने की अद्‌भुत चमक थी। उस्मानी ने लेनिन को किसी महत्त्वपूर्ण मौके पर नई आर्थिक नीति (NEP) पर बोलते भी सुना था।

एक तरफ यह वातावरण था तो उन्हीं दिनों भारत, ब्रिटेन आदि कई देशों के समाचार पत्रों में ऐसी ऊटपटांग और हास्यास्पद खबरें भी छपती रहती थीं कि मॉस्को जल गया, लेनिन मर गया, क्रेमलिन नेस्तनाबूद हो गया।

उस्मानी ने दोनों तरह के कम्युनिस्ट चरित्रों को भली प्रकार पहचान लिया था—एक ओर अवसरवादी, लफ़्फ़ाज, ऐयाश बुद्धिजीवी और गद्दार कम्युनिस्ट चरित्र तो दूसरी ओर लेनिन, स्टालिन आदि अनेक उच्चस्तरीय नेताओं के शीर्ष आदर्शों से समन्वित मानवता के उदाहरणस्वरूप कम्युनिस्ट चरित्र भी थे। अकाल के समय लेनिन द्वारा अपने भोजन में कटौती करना और किसानों से अतिरिक्त अनाज लेकर उसे मजदूरों तक स्वयं पहुँचाना आदि। स्टालिन द्वारा सैन्य निरीक्षण के समय एक सैनिक के फटे जूते देख कर अपने जूते उसे पहना देना और उसके जूते स्वयं पहन लेना और एक साधारण लाल गार्ड के द्वारा (EECI) की मीटिंग के लिए आए हुए बिना पार्टी कार्ड अन्दर घुसने की चेष्टा पर ट्रॉटस्की तक को रोक देना और उसे वापिस भेजकर कार्ड लाने पर ही अन्दर जाने देना—जैसे वाकयात ने उस्मानी के उन्नयन में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

अप्रैल के मध्य में मॉस्को में अध्ययन सत्र समाप्त हो गया। दुर्योग से शौकत उस्मानी बीमार हो गए। डाक्टरो के आयोग ने अच्छी तरह जाँच-पड़ताल करने के बाद पाया कि उस्मानी के हार्ट में बढ़ोतरी होने लगी है। आयोग ने यह तय किया कि उन्हें उचित चिकित्सा के लिए सेवेस्टोपोल भेज दिया जाय। इसके लिए जल्दी ही क्रीमिया को जानेवाली साप्ताहिक हॉस्पीटल ट्रेन में सीट सुरक्षित करवाई गई। इस ट्रेन में हर प्रकार की सुविधा थी—आधुनिक दवाइयाँ, दूध और सर्वाधिक स्वास्थ्यप्रद भोजन आदि।

यह कॉमिन्टर्न की तीसरी कांग्रेस का समय था, जिसके लिए मॉस्को में दुनिया भर से प्रतिनिधि उमड़े चले आ रहे थे। इसमें भारत से आम्प्रिस स्मैरले, वी. चट्टोपाध्याय, पी.डी. गुप्ता और नलिनी गुप्ता, लुहानी, डॉ. सी. पिल्लई, भूपेन्द्रनाथ दत्त, पांडुरंग खान्खोजी, तारकनाथदास, अब्दुल वहीद और एच. गुप्ता आदि थे। इधर समारा से सेवेस्टोपोल सीधी गाड़ी न मिलने के कारण उस्मानी को वापिस मॉस्को आना पड़ा।

यद्यपि शौकत उस्मानी ताशकंद में स्थापित भारत की कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य बन गए थे, लेकिन स्वास्थ्य की वजह से तीसरी कांग्रेस में शामिल नहीं हुए फिर भी इसकी गतिविधियों का परिचय प्राप्त करते रहे। भारत के कम्युनिस्टों

आंतरिक विवाद और गहरा गए थे इसलिए कांग्रेस में भारतीय क्रांति के कार्यक्रम पर कोई निर्णय नहीं हो सका था। उल्टे कार्यक्रम के लिए दी जाने वाली अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सहायता को भी रद्द कर दिया गया।

उस्मानी यूक्रेन होते हुए क्रीमिया पहुँचे और वहाँ से सेवस्टोपोल। सेनेटोरियम में छ: सप्ताह तक उनका इलाज चला और तब कहीं जाकर बढ़ोतरी वापिस सामान्य स्थिति में पहुँची। इसके बाद दो सप्ताह तक फिर स्वास्थ्य-परीक्षण चलता रहा और तब कहीं जाकर संकट से मुक्ति हुई।

स्वस्थ होकर वे वापस मॉस्को चले आए। लेकिन जब उन्हें सार्थक कार्यक्रम की कोई आशा नहीं रही तो उन्होंने वापस भारत लौटने का निर्णय किया ताकि यहाँ आ कर स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भूमिका अदा की जा सके। वे राय से मिले और अपना फैसला सुना दिया। राय ने इसका विरोध किया। उस्मानी ने अपनी बात फिर दोहराई तो राय ने कॉमिन्टर्न के जनरल सैक्रेटरी रियाकोवस्की से मिलने की सलाह दी। जब उससे मुलाकात की गई तो उसने उस्मानी को राडेक के पास भेज दिया और राडेक ने उन्हें सीधे स्टालिन के पास चले जाने को कहा।

उस्मानी रूसी भाषा जानते थे इसलिए बिना किसी दुभाषिये के स्टालिन के कार्यालय पहुँच गए। जाते ही उन्होंने कहा 'मैं वापिस भारत जाना चाहता हूँ, कृपया इसकी व्यवस्था करें।'

स्टालिन अप्रभावित लगे। उन्होंने उस्मानी पर अपनी नजरें गड़ाईं और पूछा—'यदि अध्ययन को पूरा नहीं करके जाना चाहते हो तो फिर यहाँ आए किसलिए?' उस्मानी ने उन्हे साफ तौर पर बता दिया कि वह और साथी सोवियत संघ से भारतीय क्रांति के लिए हथियारों की मदद लेने आए थे लेकिन कॉ. राय से मालूम हुआ कि कॉमिन्टर्न इसके खिलाफ है। अत: ठहरने का कोई अर्थ नहीं। स्टालिन ने इस बात का खंडन करते हुए कहा—'नहीं, हम तो आपकी मदद करना चाहते हैं, लेकिन आप लोग ही आपस में झगड़ते रहते हैं।'

इस पर उस्मानी ने कहा—'मैं उन लोगों में नहीं हूँ।' स्टालिन ने कहा—'अच्छा है कि तुम उनमें नहीं हो। लेकिन तुम्हारे जाने का तरीका क्या होगा?'

'मैं पर्शिया के रास्ते से चले जाने की सोचता हूँ। मुझे कॉमिन्टर्न से आर्थिक सहायता नहीं चाहिए।'

'बिना पैसे के तुम क्या करोगे?' स्टालिन ने पूछा।

'मै फकीर का वेष बनाकर अपने आपको छिपाता हुआ चला जाऊँगा।'

'क्या जाने के बाद भी तुम हम से संपर्क बनाए रखने का वायदा करते हो?'

'निश्चय ही, यदि आप हमें हथियार देने का वायदा करें।'

इस पर स्टालिन ने भारतीय कांग्रेस द्वारा चलाए जाने वाले स्वतंत्रता संग्राम के अहिंसक स्वरूप की व्याख्या की और इसी संदर्भ में गाँधीजी द्वारा विदेशों से हथियारी मदद लेने की मनाही का हवाला दिया और ऐसी स्थिति में ऐसे दु:साहसिक

कदम न उठाने की सलाह दी।

स्टालिन ने उस्मानी से हाथ मिलाया, जाने की सहमति व्यक्त की और साथ ही पूरी व्यवस्था भी करवा दी।

शौकत उस्मानी के नवयुवा व्यक्तित्व का प्रथम चरमोत्कर्ष केरकी रक्षक तक की छवि को उभारता है; जिसमें मातृपितृहीन बचपन की रिक्तता, एक किशोर के द्वारा अपनी ही रचना करनेवाले आवेग, आवेश, अवस्था आदि भीतरी उपकरणों को सजासंवार कर मौत हथेली पर ले शूलों के रास्तों पर चलते रहने की यायावरता, गुलामी के जानलेवा उत्पीड़न को झेलते हुए बढ़ते जाने की अनवरतता और एक क्रांतिकारी की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रियता का सन्निवेश है।

इस पहले शिखर के ढलान पर एक ओर उस्मानी की चेतना का विकास होता है, संपर्कों की व्यापकता से संसार की लगभग सब जानी-मानी हस्तियाँ उसकी अपनी और वह उन सबका अपना—एक 'वसुधैव कुटुंब' के 'कॉमरेड' ...सदस्य के रूप में घुल-मिल जाता है—एक फक्कड़! 'क्रांति' के ठेकेदारों के आंतरिक कलह और उसके दुष्परिणामों को भोग कर वह कटता-फटता रहता है, बार-बार अपने को सीने-पिरोने की कोशिश करता रहता है और जब जहाँ कहीं किसी प्रकार की सार्थकता की संभावना नहीं लगती तो वह सारे बंधन तोड़ कर सारे आराम ठुकरा कर फिर से कांटों पर चलने के लिए फ़क़ीर बनकर रवाना हो जाता है।

शौकत उस्मानी जहाँ लेनिन द्वारा संदर्भित किया जाता है, वह स्टालिन के लिए अपना स्थान निर्धारित करता है, अनेक कम्युनिस्ट नेताओं के साथ जुड़ता जाता है तो सोवियत यूनियन के सामान्य नागरिकों के संपर्कों की उपलब्धि बटोरने में भी कामयाब होता है। वह अब बीकानेर (राजस्थान) बल्कि भारत की सीमाओं से जुड़ा हुआ होते हुए भी अन्तर्राष्ट्रीय मानवता के शिखर का स्पर्श कर चुका है। अब वह उस स्थिति में प्रवेश कर गया है जहाँ से पीछे लौट कर पारिवारिक अथवा निजी संबंधों का निर्वाह करना संभव नहीं दिखाई देता। जितना दम उसकी अनुभवजन्य वाणी में है उतना ही उसकी लेखनी में यद्यपि उपर्युक्त अवधि तक उसने अपेक्षाकृत कम ही बोला-लिखा है।

पेशावर षड्यंत्र केस और ट्रायल

मॉस्को में सी.पी.आई. के सचिव ने उस्मानी को विदाई दी और वे स्फूरी तेज़ गाड़ी से प्रथम श्रेणी के दर्जे में बैठ कर बाकू के लिए रवाना हुए।

बीच में रोस्तोव-ऑन-डॉन जैसे खूबसूरत शहरों से गुज़रते हुए बाकू (पूर्व) के पुराने शहर पहुँचे और वहाँ दो दिनों तक ईरान जाने वाले स्टीमर के इंतज़ार में रुकना पड़ा। बाकू से शुरू होने वाली यात्रा भी कष्टप्रद थी क्योंकि स्टीमर में सो सकने की जगह उपलब्ध न हो सकी। यह वह समय था जब टर्की फ्रांस-ब्रिटेन

द्वारा उसके विरुद्ध थोपे गए युद्ध में जूझ रहा था, ग्रीस हमलावर था। टर्की के जिन सैनिकों ने सोवियत संघ में शरण ली थी उन्हें वह टर्की जाने की सब सहूलियतें दे रहे थे। इसलिए उस्मानी को मुसीबत में ही यात्रा करनी पड़ी। वैसे इसमें एक सैद्धांतिक पक्ष भी निहित था कि उस समय सभी प्रगतिशील ताकतें टर्की का समर्थन कर रही थीं। टर्की की नीति में प्रतिक्रियावादी परिवर्तन तो अता तुर्क की मौत के बाद आया।

ईरान के दक्षिण की तरफ सोवियत सेना ने प्रतिक्रियावादी डोनकिन की सेनाओं को ध्वस्त कर दिया तो पर्शियन कम्युनिस्टों ने घिलान प्रांत पर अपना वर्चस्व कायम कर दिया जिसकी राजधानी रेश्त थी।

उस्मानी लेगोन पहुँचे और वहाँ से रेश्त। उस समय रेश्त कोचक खान ब्रिगेड से घिर गया था जो डाकुओं का गिरोह था और जो विदेशियों के साथ-साथ कम्युनिस्टों के खिलाफ भी गुरिल्ला लड़ाई लड़ रहा था।

परिस्थितिवश सोवियत साथियों और कॉमिन्टर्न द्वारा ज्यों ही घिलान गणतंत्र का विलोपन स्वीकार कर लिया गया और रेश्त पर पुन: रेजा खानी फौजों ने 'कम्युनिस्ट मुर्दाबाद' 'हमारे शाह जिन्दाबाद' के नारों के साथ घेरा डाल दिया तो कम्युनिस्टों के लिए वहाँ से जाने के सिवा कोई विकल्प नहीं बचा। उस्मानी इस समय एक होटल में फंसे हुए थे और उनको सलाह दी गई थी कि वे भी कम्युनिस्टों के साथ वहाँ से वापिस बाकू चले जायें। लेकिन इस पर उस्मानी सहमत नहीं हुए।

आखिर येन केन प्रकारेण यात्रा जारी रखते हुए पर्शियन पासपोर्ट के जरिए वे 22 जनवरी, 1922 को बंबई आ पहुँचे। इस समय वे पारसी के रूप में थे और दो दिन के बाद भूमिगत हो गए। एक दिन मोची के रूप में तो कभी किसी पंजाबी के यहाँ बोतलें साफ करनेवाले के रूप में। बंबई में दो महीनों तक यही हाल रहा।

यू.पी. में एक शिक्षक की भूमिका अदा करते हुए उन्होंने भारत की स्थिति का अध्ययन किया और मॉस्को में अपने दोस्तों को रिपोर्ट भेजते रहे जिसमें प्रमुखत: उस समय के राष्ट्रीय आन्दोलन के विषय पर अपने ऊपर पड़ने वाले प्रभावों की अभिव्यक्ति होती थी।

उस्मानी को आश्चर्य था कि राय ने उनके द्वारा भेजी गई रिपोर्टों की सराहना की और 'मासेज़' 'एडवांस गार्ड' तथा 'वैनगार्ड' आदि में उस्मानी के नाम का उल्लेख किए बिना उनकी रिपोर्टों को प्रकाशित भी कर दिया था। गया-कांग्रेस-अधिवेशन को 'गया में श्राद्ध समारोह' की संज्ञा उस्मानी ने ही दी थी जो उन दिनों बड़ी चर्चित हो गई थी।

राष्ट्रीय आन्दोलन का अध्ययन करने पर शौकत उस्मानी इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इस समय विधिवत् और लिपिबद्ध किसी क्रांतिकारी संगठन का निर्माण करना आत्मघाती सिद्ध होगा, अत: सबसे सही रास्ता यह होगा कि वे एक मिशन को आत्मसात कर कार्य करते रहें। इसे मद्देनजर रखते हुए उन्होंने कम्युनिस्ट साहित्य

को घर-घर पहुँचाने का अथक परिश्रम किया। पर्शिया और यूरोप से प्राप्त सामग्री के वितरण को उन्होंने मुख्य काम बना लिया। संभवतः यही मिशनरी कार्य था जिसकी वजह से उन्होंने पद की महत्वाकांक्षा को पैदा ही नहीं होने दिया।

कानपुर जाकर उन्होंने बनारस विश्वविद्यालय और मजदूर वर्ग को कार्यक्षेत्र बनाया। उनके पूर्व अध्यापक डॉ. संपूर्णानंद ने उनका संपर्क गणेश शंकर विद्यार्थी से करा दिया जो उत्तरी भारत में सब प्रकार के क्रांतिकारियों के संपर्कों के केन्द्र-बिन्दु थे। विद्यार्थीजी उस्मानी के बहुत बड़े समर्थक सिद्ध हुए।

चार माह बाद वे एक बार फिर पर्शिया चले गए लेकिन फिर जल्दी ही वापिस बंबई आ गए। उस्मानी और राय के मतभेद संगठन निर्माण को लेकर गहराने लगे। बंबई से फिर से बनारस पहुँच कर छात्रों में काम करने लगे।

इस तरह अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हुए बंगाल, यू.पी., पंजाब और राजस्थान में जगरा जगाते घूमते रहे, लेकिन मुख्य कार्यक्षेत्र कानपुर, बनारस और रोहतक रहा। उस्मानी के काम के बारे में डॉ. संपूर्णानंद ने अपनी पुस्तक 'Memories and Reflections' में लिखा है—'हम में से अनेक मार्क्सवाद का अध्ययन करने के उत्सुक थे किन्तु मुश्किल यह थी कि शुरू कैसे किया जाए ... फिर सन् 1922 के पतझड़ में एक अवसर आया। कुछ मुहाजिरों ने 'खिलाफ़त' की नीति छोड़ दी थी। ... उनमें से कुछ रूस चले गए थे ...उनमें एक शौकत उस्मानी था जो बीकानेर में मेरा शिष्य रह चुका था। ...उस्मानी बनारस आया ...उसने बीकानेर के अपने सहपाठी के जरिए संपर्क किया। मुझे बहुत-सी अद्यतन गतिविधियों की सूचना मिली और सबसे जरूरी बात यह थी कि तब से लेकर रूस में प्रकाशित किताबें, पत्रिकाएँ और अन्य साहित्य आदि लगातार बिना व्यवधान के मिलते रहे। ...हम में से बहुत से पक्के कांग्रेसी थे फिर भी ऐसा प्रतिबंधित साहित्य दूसरों तक पहुँचाने में नहीं झिझकते थे। ...उस्मानी कुछ समय तक बनारस रहा, फिर मैंने उसे कानपुर में श्री गणेश शंकर विद्यार्थी के पास भेज दिया।'

उस्मानी के अनुसार ऐसे प्रतिबंधित साहित्य को सरकारी तंत्र से बचाकर रूस से लाने और वितरण करने की एक पूरी व्यवस्था-एजेन्सी थी जो विदेशों से लेकर बंबई तक काम कर रही थी। उस्मानी यू.पी. के केन्द्र और अजमेर के उपकेन्द्र में प्रमुख व्यवस्थापक थे। विद्यार्थीजी ने उस्मानी को कानपुर के एक राष्ट्रीय मुस्लिम हाई स्कूल में सैकिण्ड मास्टर के तौर पर नियुक्त करवा दिया था। वहाँ वे रात को किसी सुदूर गुप्त स्थान पर मजदूरों की क्लास लेते थे और दिन में छात्रों को शिक्षित करने और साहित्य वितरण करने का काम किया करते थे। लेकिन जब खुफ़िया पुलिस के पीछे लगने की सूचना विद्यार्थीजी के द्वारा दी गई तो उस्मानी को कानपुर के ठहराव को तोड़ना पड़ा। वे कानपुर से कलकत्ता चले गए। फिर कलकत्ता से अलीगढ़, क्रमशः अलीगढ़ से रोहतक जिले में पहुँचे जहाँ सहायक प्रधानाध्यापक के रूप में काम संभाला।

रोहतक जिले में उन्होंने फौज के सिपाहियों से संपर्क किया जिनमें हवालदार मेजर और कर्नल भी शामिल थे। इनमें कुछ को वे कम्युनिस्ट साहित्य पढ़ाते थे। छुट्टियों पर आए सैनिकों की छुट्टियाँ बढ़ाने की अथवा उनके प्रमोशन की अर्जियाँ लिख देते। कुछ उस्मानी से भीतर ही भीतर इतने प्रभावित हुए कि अगर देश के नेता आदेश दें तो वे बगावत पर उतर आएँ।

मई में गर्मी की छुट्टियाँ हुईं और उस्मानी को कुछ पत्र मिले कि कानपुर में कुछ साहित्य सामग्री वितरण के लिए उनकी प्रतीक्षा कर रही है। वे कानपुर में उसी स्कूल में 8 मई, 1923 को पहुँचे। वहाँ से उनका इरादा कलकत्ता जाने का था।

9 मई, 1923 को सुबह घड़ी के खराब होने की वजह से अलार्म नहीं बजा और ट्रेन चूक गई। अब शाम को जाने का तय किया। गोवाल टोली मजदूर सभा कार्यालय से सारा आवश्यक साहित्य पहले ही ले लिया था। तीसरे पहर इसी स्कूल को सेना और पुलिसवालों ने घेर लिया और शौकत उस्मानी को गिरफ्तार करके बंद गाड़ी में ले गए।

कंटूनेमेंट पुलिस थाने में ले जाकर उन्हें एक कोठरी में डाल दो दिनों तक तालाबंदी की हालत में रखा गया। एक बार पुलिस अफसर निरीक्षण करने आया और उससे पूछा गया तो उन्हें जवाब मिला—'तुम्हें जल्दी ही उस स्थान से बाहर ले जाया जायगा।'

उस कोठरी में वह समय अत्यंत कष्टप्रद रहा। तीसरे दिन सब-इंस्पैक्टर आया और उन्हें तालाबंदी से बाहर निकाल कर पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट के बंगले पर ले गया जहाँ यू.पी. पुलिस का इंस्पैक्टर जनरल और उसके कुछ सहायकों ने उस्मानी से पूछताछ चालू की। 'तुम्हारा नाम?'

उत्तर में बार-बार नकली नाम बताया गया।

'तुम्हें कुछ कहना है?'

साफ इन्कार करते हुए उस्मानी ने कहा—'मुझे मालूम है कि अधिक से अधिक तुम मुझे फांसी पर लटका दोगे जिसकी मुझे पर्वाह नहीं।'

'यदि तुम खुद कुछ भी न बताओ तो भी तुम्हें जल्दी ही मालूम हो जायगा कि तुम्हारे बारे में सब कुछ बता दिया गया है।'

उस समय तो उस्मानी को अंदाज़ नहीं लगा, लेकिन बाद में 12 मई को पेशावर ले जाने पर पता चला कि उनके खिलाफ 'मॉस्को षड्यंत्र केस' में जिसे 'पेशावर षड्यंत्र केस' के रूप में जाना-पहचाना जाता है—दो मुखबिर थे।

जब कानपुर से गाड़ी में रवाना हुए तो 40 की सीटों वाले उस बंद इंटरक्लास डिब्बे में एक उस्मानी और पुलिस सब-इंस्पेक्टर तथा सात सशस्त्र कांस्टेबल अर्थात् कुल 9 व्यक्ति थे। हर स्टेशन पर भारी भीड़ के नारों का शोर था। उस्मानी ने पूछा—'यह काहे की आवाज़ है?' सब-इंस्पेक्टर ने जवाब दिया—'ये आपको देखने आए हैं।' उस्मानी को अचंभा हुआ लेकिन उन्हें बाद में पता चला कि उनको 'बोल्शेविक

एजेन्ट' के रूप में अखबार वालों ने कई तरह से जोर-शोर से प्रचारित कर दिया था। जैसे :

'द टाइम्स' (लंदन)—12 मई, 1923—'भारत में बोल्शेविक गतिविधि'—एक आरोपित एजेन्ट की गिरफ्तारी (निजी संवाददाता द्वारा)

इलाहाबाद, मई 11—'एक बोल्शेविक एजेन्ट शौकत उस्मानी को क्रिमिनल प्रोसिज़र कोड की धारा 121ए के तहत कानपुर में गिरफ्तार कर लिया गया। उसके पास से प्रतिबंधित साहित्य और पत्राचार बरामद किए जाने की खबर मिली है।'

इसी अखबार के 14 मई, 1923 के संस्करण का अंश देखिए :

इलाहाबाद, 13 मई—'भारत में रेड (कम्युनिस्ट) एजेन्ट को ट्रायल के लिए भेजा'

—'उम्मीद है कि शौकत उस्मानी की गिरफ्तारी से भारत में सोवियत प्रचार के संबंध में कई राज खुलेंगे। यह बताया जाता है कि उस्मानी उस देश की यात्रा करता रहा था, बोल्शेविक विचारों के फैलाव के लिए दलों को संगठित कर रहा था। वह कानपुर की नेशनल मुस्लिम स्कूल में पेशावर में जारी किए गए वारंट पर गिरफ्तार किया गया। ...'उस्मानी को षड्यंत्र के आरोप पर ट्रायल के लिए पेशावर ले जाया जायगा।'

उस्मानी ने अपनी आत्मकथा में समाचार पत्र की इस भूल की ओर भी संकेत किया है जिसमें 'दलों को संगठित करने' का उल्लेख है।

कानपुर से प्रकाशित 'वर्तमान' ने उस्मानी की गिरफ्तारी पर टिप्पणी करते हुए लिखा—'यह बात ज्ञात थी कि बोल्शेविक दूत भारत के बड़े नगरों में काम कर रहे हैं, परन्तु सरकार जनता को डराने के लिए जो तरीके अपना रही है उससे वस्तुतः भारत में कम्युनिज्म मजबूत ही हो रहा है।'

लाहौर के 'नेशन' ने 20 मई, 1923 को लिखा कि 'एक ग़रीब व्यक्ति को बोल्शेविक साहित्य रखने के कारण गिरफ्तार कर लिया गया। क्या बोल्शेविक साहित्य रखना अपराध है? और वास्तव में बोल्शेविक साहित्य क्या है? ये मूर्ख लोग, यदि इनका बस चले तो कार्ल मार्क्स की 'डास कैपिटल' के साथ बाइबिल को भी अभिनिषिद्ध कर देंगे। क्या एक व्यक्ति को गिरफ्तार करके पश्चिमी सीमांत को निर्वासित कर देना कानून व व्यवस्था है? जनता को यह जानने का हक है कि हमारे घबड़ाये हुए एंग्लो-इंडियन, बोल्शेविकों का पीछा करके क्या प्राप्त करना चाहते हैं? वस्तुतः अनभिज्ञ लोग जिसे बोल्शेविज्म कहते हैं वह गाँधी के आन्दोलन के साथ (दोनों अपने ढंग से) ईसाइयत के उदय के बाद मानव जाति के लिए सबसे बड़ा वरदान है। ये एंग्लो-इंडियन, जिनके हाथ निर्दोष व्यक्तियों के खून से रंगे हैं, और निर्दयतापूर्वक लालच से बड़े नगरों को गुलामों के बाजारों और वेश्यालयों में ५ . हैं, बोल्शेविकों के विरुद्ध तथ्यों को पेश करें और हम मार्क्सवाद की सच्चाई के साथ पूंजीवाद के घृणित पाखंड पर निर्णय करें। हम ५.०

बहुत देख चुके हैं।'

इसी प्रकार 'प्रणवीर' (नागपुर), 'अकाली ते परदेशी' (अमृतसर), 'बोम्बे क्रॉनिकल', राष्ट्रीय पत्र 'प्रताप', 'महाराष्ट्र', 'प्रजापक्ष' (अकोला), 'इंडियन वर्ड', 'आज' (बनारस), 'सूर्य' (बनारस) और 'हिन्द केसरी' (बनारस) आदि सभी पत्र-पत्रिकाओं ने 'बोल्शेविक षड्यंत्र केस' के अभियुक्तों का पुरजोर समर्थन और अंग्रेजी सरकार की न्याय प्रणाली और प्रशासनिक दुर्व्यवहार का जम कर पर्दाफ़ाश किया। सारे भारतवासियों में से एक भी स्वर ऐसा नहीं था जो अभियुक्तों का विरोधी और अंग्रेजी प्रशासनिक कार्यवाही का समर्थक हो। कांग्रेस के लगभग सभी नेताओं ने अभियुक्तों का समर्थन किया था। मुखर होकर मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू और डॉ. अंसारी बचाव पक्ष की कमेटी के रूप में काम कर रहे थे तथा दूसरे वाम रुझानी कांग्रेसी भी सक्रिय थे। गाँधीजी भी जेल में अभियुक्तों से मिलने गए थे।

ट्रायल के लिए पेशावर पहुँचने पर पुलिस की गाड़ी उस्मानी को सीधे कैंट पुलिस स्टेशन ले गई जिसे सदर थाना कहा जाता है। वहाँ उन्हें स्थानीय पुलिस को सौंप दिया गया जिसने कुछ आवश्यक बातें दर्ज करके लॉक-अप में भेज दिया। कई दिनों तक लॉक-अप के स्थान बदलते गए ताकि बच कर निकलने की कोशिश कामयाब न हो सके।

एक सप्ताह तक उस्मानी से बयान हासिल करने की हर प्रकार की कोशिश की गई, लेकिन पुलिस को कुछ भी हासिल नहीं हुआ। तब उन्हें हथकड़ी-बेड़ी लगा कर बुर्ज हरिसिंह पुलिस थाने में भेज दिया गया। भयंकर बदबू मारती हुई कंबल को गीले फर्श पर बिछाने और ऐसी ही दूसरी घिनौनी कंबल को ओढ़ने के लिए दिया गया। हर रोज पूछताछ के लिए दो सशस्त्र पुलिसवालों के साथ सदर थाने जाना, उस्मानी द्वारा किसी प्रकार के जवाब का न दिया जाना और मार-पीट आदि विविध प्रकार के उत्पीड़न के बढ़ते जाने का जारी रहना—एक सामान्य दिनचर्या हो गई।

पेशावर हवालात में ट्रायल की अवधि में नींद कहाँ नसीब थी। कंबलों की जुएं शरीर पर रेंगती रहती थीं। हर सुबह ताड़ना के साथ पूछताछ का सिलसिला था और हर रात लॉक-अप की जगह बदल दी जाती थी। बेड़ियों के कारण नंगी टांगों के निचले हिस्से से खून रिसता रहता था क्योंकि उन्हें दूर तक धकेला जाता था। पट्टी बांध कर प्राथमिक चिकित्सा का नाम तक नहीं था। न्यायाधीश एक ही हुकम दोहराता रहता 'कस्टडी में रिमांड दिया।' पुलिस का इरादा था 'पेशावर षड्यंत्र केस' (मॉस्को षड्यंत्र केस' भी कहा जाने लगा) में अन्य अभियुक्तों के साथ उन्हें शामिल करना, लेकिन वकील की राय अलग थी। उसकी दलील थी कि दूसरों की गतिविधियों का भारत की राजनीति से कोई संबंध नहीं है और उस्मानी की गिरफ्तारी को देश के भीतर सरकार विरोधी कार्यवाही के संदर्भ में व्यापक तौर पर प्रचारित-प्रसारित किया जा चुका है, इसलिए दोनों को एकरूपता में नहीं देखा जा सकता।

उस्मानी को भयंकर उत्पीड़न का सा... करना पड़ा। उन्हें मुखबिर बनाने के लिए खूब प्रयास किए गए, पर सब नि... भावित हुए। एक प्रयास यह भी था कि अखबार वालों की पहुँच से दूर-दर... इलाके में ले जाकर और अनेक प्रकार की तकलीफें देकर कुछ रहस्य उगलवाने की चेष्टा की गई, लेकिन वह भी व्यर्थ गई। 'तुम कितने ठोस हो, वरना इतनी पीड़ा और कोई नहीं सह सकता था'—एक अधिकारी कह उठा।

हथकड़ियों के कारण बेड़ियों से जकड़ी खून रिसती हुई टांगें, जिन्हें उस्मानी छू भी नहीं सकते थे, बेहद पीड़ा दे रही थीं। इसी हालत में उन्हें अब्बोतावाद लाया गया। यदि कोई सहानुभूति का रुख दिखाता तो खुफ़िया सब-इंस्पेक्टर शेख अब्दुल अजीज़ झिड़क देता—'यह बोल्शेविक षड्यंत्रकारी है, इस पर इंसानी बर्ताव की जरूरत नहीं।'

उस्मानी को जल्दी ही अब्बोतावाद के जिले की केन्द्रीय जेल में पटक दिया गया। हर रोज उन्हें अंग्रेज अधिकारी के बंगले के लॉन में ला कर घसीटा जाकर पशुवत् पीटा जाता और अंग्रेजी अधिकारी इस क्रूरता को देख-देख कर मजा लेता।

जेल में उन्हें उन तीन आदतन सामाजिक अपराधियों के साथ रखा गया जो हिस्ट्री-शीटर थे। उस्मानी ने शिकायत की। इस पर उन्हें पेशावर जेल में बदल दिया गया। अंग्रेजी राज्य के अधीन कैदियों पर कहर ढाने वाले दो मुख्य कारखाने थे—पेशावर जेल और दूसरी बरेली जेल। बाद में जाते समय अंग्रेजों ने देश के टुकड़े करके एक जेल पाकिस्तान को सौंप दी और दूसरी भारत को।

पेशावर जेल की 8 पौंड भारी सांकलों वाली बेड़ियों ने उस्मानी के पांवों को जिन्दगी भर के लिए घावों के निशान दे दिए थे जिन्हें देख कर उनकी दर्दभरी स्मृतियाँ उभर आती थीं। पेशावर की पीड़ा उनकी जीवनसंगिनी बन चुकी थी। वे कभी-कभी अकबर खाँ कुरैशी को 10 साल तक की दी गई कठोर सज़ा के तहत प्रदत्त पेशावर हवालात की पीड़ा को महसूस कर सिहर उठते थे।

वैसे ट्रायल के दौरान कोई भी जबरिया मशक्कत जायज नहीं होती, लेकिन उस समय सीमांत प्रदेश को भारत में 'अराजक क्षेत्र' कहा जाता था। यद्यपि उस्मानी जबरन अंटशंट काम करने के खिलाफ विद्रोही बन रहे थे लेकिन वे अकेले थे और उन्हें यह आशंका भी थी कि इन्कार करने का अधिक भुगतान दूसरे कैदियों को अधिक उत्पीड़न झेलकर करना होगा।

ढाई महीने की ट्रायल के बाद उन्हें मुख्य जेल भेज दिया गया, जहाँ कुछ राहत-सी महसूस हुई। यहाँ उन्हें स्टेट प्रिजनर के रूप में रखा गया। यहीं पर वे दो साल के सजायाफ़्ता अभियुक्तों के संपर्क में भी आए जो खिलाफ़त-कांग्रेस आंदोलन के नेता थे। बाद में उस्मानी को सबसे अलग एकाकी रूप में कर दिया गया।

10 मार्च, 1924 को सुबह 6 बजे अचानक आदेश हुआ कि 'अपना सामान उठाओ और चलो।' बेड़ी-हथकड़ी लगाए हुए उन्हें तांगे पर बिठा दिया गया और

वहाँ से रेल्वे स्टेशन ले जाया गया। सशस्त्र पुलिसिये साथ में थे।

शाम को जब कानपुर की जिला जेल पहुँचे तो जेलवालों ने अंदर लेने से इन्कार कर दिया, लेकिन ऊपर के अधिकारियों के हस्तक्षेप करने से अंदर दाखिला कर दिया गया।

जेलर ने कुछ औपचारिकताएँ पूरी कीं और फिर उन्हें सिविल वार्ड मे ले जाया गया जहाँ एस.ए. डांगे पहले से कैद भोग रहे थे। डिप्टी जेलर ने कहा—'मिस्टर उस्मानी, ये मिस्टर डांगे हैं और मिस्टर डांगे, ये हैं सीमांत प्रदेश से लाए गए मिस्टर उस्मानी!' उस्मानी को अचंभा हुआ डांगे की तरफ देख कर—इतना छोटा कद और इतनी ऊँची प्रतिभा! दोनों की यह पहली मुलाकात थी और वह भी इस रूप में। डांगे ने अपनी पुस्तक 'Hell Found' में इस मुलाकात का वर्णन किया है।

दो दिनों के बाद बंगाल से मुजफ्फर अहमद और नलिनी दास गुप्ता को भी वहाँ ले आया गया। अब वे चार हो गए थे। यहाँ इन आज़ादी के दीवानों में गहरी दोस्ती स्थापित हो गई थी।

कानपुर—'बोल्शेविक षड्यंत्र केस'

16 मार्च, 1924 को कानपुर के संयुक्त न्यायाधीश क्रिस्टी की अदालत में ऐतिहासिक 'बोल्शेविक षड्यंत्र केस' की शुरूआत हुई। अभियुक्तों को आई.पी.सी. (IPC) की धारा 121ए के तहत आरोपित किया गया।

उपस्थित अभियुक्त—1. एस.ए. डांगे
2. शौकत उस्मानी
3. मुजफ्फर अहमद
4. नलिनी दास गुप्ता

अनुपस्थित अभियुक्त—1. रामचरण लाल शर्मा (पोंडीचेरी में शरणार्थी)
2. एम.एन. राय (यूरोप में)
3. सिंगरेवलु चेट्टियार (बीमारी के कारण जमानत पर)
4. प्रो. गुलाम हुसैन (मुखबिर होने के कारण क्षमा दान)

प्रमुख आरोप—'मॉस्को में प्रस्थापित कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के साथ इन अभियुक्तों ने यह षड्यंत्र रचा कि भारत से ब्रिटिश सम्राट् की सत्ता को सशस्त्र क्रांति से उखाड़ फेंका जाय।'

अगले दिन केन्द्रीय सरकार के इंटेलिजेंस के डाइरेक्टर जनरल कर्नल काये ने केस की फाइल अदालत में पेश की। इसमें ज्यादातर सेंसर किए हुए पत्रों की प्रतिलिपियाँ और समाचार पत्रों की कतरनें इकट्ठी की हुई थीं। इन्हीं के आधार पर

चरण

अनेक झूठी बातें जोड़ कर कहानी गढ़ दी गई थी। इन्हें से एक पत्र कॉमिन्टर्न के कार्यालय, मॉस्को का भी था जिसमें 'भारत की मजदूर-किसान पार्टी के प्रथम सम्मेलन' का अभिनन्दन किया गया था और साथ ही भावी कार्यक्रम में इन मूलभूत बिन्दुओं को शामिल करने की बात कही गई थी :—

1. साम्राज्यवादी संबंधों से पूरी तरह अलगाव
2. भारत में लोक गणतंत्र की स्थापना
3. जमींदारी प्रथा को समाप्त कर भूमि का पुनर्वितरण
4. यातायात के साधनों का राष्ट्रीयकरण
5. आठ घंटे का दिन
7. न्यूनतम वेतन का निर्धारण और मेहनतकशों के हितों की रक्षा के लिए यूनियनों का निर्माण आदि।

22 अप्रैल, 1924 को एच.ई. हॉल्मे (आई.सी.एस.) की अदालत में सेशन-ट्रायल के अंतर्गत निम्न आरोप लगाया गया :

'9 मई, 1923 को अथवा इससे पहले या बाद में सम्राट के विरुद्ध युद्ध छेड़ने का षड्यंत्र रचा गया ताकि वे भारत से ब्रिटिश सम्राट की सत्ता को हिंसक क्रांति के द्वारा नेस्तनाबूद कर दें।'

सत्ता की पैरवी प्रसिद्ध वकील रॉस एल्टन करने आया और उसके साथ उसका सहायक कानपुर का इंस्पेक्टर दुर्गाप्रसाद था। अभियुक्तों के बचाव पक्ष में गया डॉ. मनीलाल, फिजी के एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और इलाहबाद के श्री पी. कपिलदेव मालवीय।

विशेष रूप से कानपुर और सामान्यतया यू.पी. के राजनीतिक कार्यकर्ताओं और नेताओं ने अपना कर्तव्य मान कर एक बचाव कमेटी का गठन किया जिसका नेतृत्व गणेश शंकर विद्यार्थी को सौंपा गया। उनके साथ श्री बालकृष्ण शर्मा, श्री जे.जी. जोग और श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा थे। इसे पं. मोतीलाल नेहरू का संरक्षण प्राप्त था जिन्होंने श्री कपिलदेव मालवीय को पैरवी के लिए भेजा था। अब श्री मालवीय डांगे और नलिनी के बचाव की पैरवी पर थे तो मनीलाल मुजफ्फर अहमद और शौकत उस्मानी के बचाव के लिए।

ट्रायल के समय शौकत उस्मानी को सबसे ज्यादा खतरनाक करार दिया गया यद्यपि डांगे ने भी पूरी अवधि तक सजा काटी। मुजफ्फर अहमद और नलिनी को बीच में ही छोड़ दिया गया था।

शौकत उस्मानी द्वारा 15 फरवरी, 1923 को एम.एन. राय को लिखे गए पत्र को बार-बार सबूत के रूप में पेश किया गया जिसके कुछ अंश इस प्रकार थे :

'...जनता को कम्युनिज्म की सुगन्ध का भान हो चुका है। फिर भी यदि कॉमिन्टर्न सहयोग करे तो मजदूर और किसान संगठन अपने प्रत्येक सदस्य से उसकी आमदनी का दो पैसा प्रति रुपया इकट्ठा करके काफी फंड जमा कर लेंगे। [illegible]

कार्यक्रम के लिए यह पर्याप्त होगा। ...हमारे संगठन में दौलत के गुलामों की घुसपैठ करवायी जा रही है। हमें निर्मम होकर उनका सफाया कर देना होगा। उनसे कोई समझौता नहीं, उन पर किसी प्रकार का रहम नहीं।'

उस्मानी के दूसरे पत्र का महत्त्व यह था कि रौस आल्स्टन उसके निम्नांकित अंश पर बार-बार जोर देकर दोहरा रहा था—'...सशस्त्र हस्तक्षेप ही वह आखिरी इलाज है जो भारत के सर्वहारा को मौत के मुँह से बचा सकता है।' रौस का स्पष्टीकरण यह था कि भारत में सर्वहारा क्रांति करने के लिए उस्मानी सोवियत संघ को सशस्त्र हस्तक्षेप हेतु आमंत्रित कर रहा है।

इसके साथ ही रौस गुस्सा दिखाते हुए दलील दे रहा था कि 'उस्मानी षड्यंत्रकारी तो है ही, अपितु वह अपनी इस हरकत पर गर्व भी महसूस करता है। यदि उस्मानी को सज़ा नहीं दी जाती है तो हिन्दुस्तान में किसको सजा दी जायगी।'

साथ ही सरकार पक्ष के वकील ने अनेक फर्जी गवाह भी पेश किए।

सारी औपचारिकता के बाद न्यायाधीश ने अपने निर्णय में यह घोषित किया कि इन अभियुक्तों के खिलाफ लगाए गए पूर्वोक्त आरोप सही साबित हो गए हैं कि उन्होंने षड्यंत्र किया है और वे कॉमिन्टर्न से प्राप्त सहायता से सम्राट् की सत्ता को सशस्त्र क्रांति करके समाप्त करने की योजना को क्रियान्वित करने में लगे हुए थे। इसलिए प्रत्येक को चार साल की सख्त कैद की सज़ा दी जाती है।

न्यायाधीश ने बचाव पक्ष की किसी दलील को स्वीकार नहीं किया। उसने पाया कि देश में ऐसे पांच ग्रुपों का आपस में संबंध है—(1) बंबई में डांगे ग्रुप, (2) लाहौर में इन्कलाब ग्रुप, (3) यू.पी. में उस्मानी ग्रुप, (4) कलकत्ता में एम.ए. एंड को. और (5) मद्रास में सिंगरवेलु ग्रुप।

अभियुक्तों में से उस्मानी को छोड़ कर लगभग सभी ने छोटे-बड़े लिखित या मौखिक वक्तव्य दिए जो अखबारों की खबरों मे तो आंशिक रूप से आ गए, लेकिन न्यायाधीश ने उन पर विशेष ध्यान नहीं दिया। उस्मानी के 99 पृष्ठीय लिखित वक्तव्य को बचाव पक्ष के वकील के आग्रह पर प्रस्तुत नहीं करने दिया गया जिसकी कसक उन्हें सदा कचोटती रहती थी।

ट्रायल के दौरान कानपुर जेल में उस्मानी के चाचा उमरुद्दीन उनसे मिलने आए। यह एक हृदयद्रावक मिलन था, क्योंकि चाचा ने उन्हे बताया कि ज्यों ही 9 मई, 1923 को उनकी गिरफ्तारी हुई तो उनके और उनकी दादी के दो भाइयों के—अर्थात् तीनों के परिवारों पर क्या बीती। सब पुरुष, महिलाओं और बच्चों को हिरासत मे ले लिया गया। यू.पी. की और बीकानेर की स्थानीय पुलिस के दरिंदो ने औरतों के गहनों और नक़दी रुपयों को छीन-झपट कर ले लिया। बाद में कोई भी किसी प्रकार का लूटा हुआ सामान वापिस नहीं आया। उन दिनों बैंक में खाते खोलने का सिलसिला आम नहीं हुआ था, अतः हजारों रुपए चले गए। परिवार को सात दिनों तक हिरासत में रखने के बाद महाराजा ने हस्तक्षेप करके

छुड़ाया।

यह सब कहते समय उमरुद्दीन की आँखें आँसुओं से भर गई थीं। आखिर वह रवाना हुआ तो उस्मानी को राहत महसूस हुई।

जेल में अस्थायी तौर पर 'ए' श्रेणी दी गई थी, लेकिन आई.सी.एस. (ICS) अधिकारी 'बोल्शेविकों' के लिए इसे कब सहन करने वाले थे, अतः जुलाई के प्रथम सप्ताह से दमन की कार्यवाही चालू हो गई। भौंडे किस्म का बड़ा कुर्ता, ऊँचा पायजामा, गले में लकड़ी की तख्ती, हाथ में हथकड़ी और पांव में बेड़ी। सबने इस बर्ताव के खिलाफ़ भूख हड़ताल का निर्णय लिया, लेकिन उस्मानी के अलावा सभी ने चार-पांच दिन के बाद भूख हड़ताल तोड़ दी क्योंकि उन्हें अलग-अलग जेलों में स्थानांतरित कर दिया गया था। उस्मानी ने बरेली जेल में बदल दिए जाने के बाद भी अपनी भूख हड़ताल जारी रखी।

भूख हड़ताली कैदी को जेल में डॉक्टर की देखरेख में रखा जाता है, इसलिए उस्मानी की निगरानी के लिए एक डॉक्टर को नियुक्त किया गया। डॉक्टर एक पक्का राष्ट्रवादी था। उसने बोल्शेविक षड्यंत्र केस के बारे में सब कुछ पढ़ रखा था। उसने उस्मानी के लिए एक चारपाई लाने का आदेश दिया। उन्हें दूसरे दरवाजे के ठीक अन्दर की तरफ रखा गया ताकि जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट की नज़र के सामने रहें। कर्नल हाप्पर बड़े सख्त मिज़ाज का था। ज्यों ही उसने उस्मानी को देखा, उसने डॉक्टर से कहा—'यदि मर जाय तो जेल बाग में ही गाड़ देगा।' उस्मानी ने तत्काल जवाब दिया—'यदि तुमने यह कर दिया तो सारी ब्रिटिश पार्लियामेन्ट थर्रा उठेगी।'

उस्मानी ने दिनांक 3.7.24 से 30.7.24 तक 27 दिन भूख हड़ताल रखी। 30 जुलाई को डॉक्टर की हिदायत पर उन्हें जबरदस्ती पकड़ कर एक नलकी से छोटे छेद की मार्फत बावजूद उनके विरोध के मजबूरन उनके गले में अंडा मिलाकर दूध डालने की कोशिश की गई। फिर भी भूख हडताल खतम की एवज में उन्होंने शर्त रखी कि गर्दन और पांव से जंजीर हमेशा के लिए हटा दी जाय और सरकार यह मानले कि उन्हें झुका पाने की सरकारी कोशिश सफल नहीं हुई। आखिर गर्दन और पांव की जंजीर से छुटकारा हुआ और वह भी सबके लिए। तब भूख हड़ताल समाप्त हुई। उस्मानी जब तक जेल में रहे तब तक यथासंभव कैदियों की मदद करते रहे।

उस्मानी को उन कैदियों के साथ रखा गया था जिन्हें सामाजिक अपराधों के कारण सजाएँ दी गई थीं। एक रात को जब उस्मानी की कमर और सिर में भारी दर्द था, गर्मी भी भयंकर थी और मच्छर काटते जा रहे थे—उन्हें नींद नसीब नहीं थी। इतने में एक कैदी के चिल्लाने की आवाज सुनाई दी जिसको किसी दूसरे कैदी की कोई चीज़ चुराने के एवज में बुरी तरह पीटा जा रहा था। उस्मानी ने जोर से चिल्ला कर कहा—'बंद करो पीटना, वर्ना मैं फिर भूख हड़ताल कर दूंगा। मैं यह दमन बर्दाश्त नहीं कर सकता चाहे मुझे अपनी जान ही क्यों न देनी पड़े।' इस पर उसका पीटा जाना रुक गया। पीटने का असली उद्देश्य था कैदी से पैसे ऐंठना जो

कार्यक्रम के लिए यह पर्याप्त होगा। ...हमारे संगठन में दौलत के गुलामों की घुसपैठ करवायी जा रही है। हमें निर्मम होकर उनका सफाया कर देना होगा। उनसे कोई समझौता नहीं, उन पर किसी प्रकार का रहम नहीं।'

उस्मानी के दूसरे पत्र का महत्त्व यह था कि रौस आल्स्टन उसके निम्नांकित अंश पर बार-बार जोर देकर दोहरा रहा था—'...सशस्त्र हस्तक्षेप ही वह आखिरी इलाज है जो भारत के सर्वहारा को मौत के मुँह से बचा सकता है।' रौस का स्पष्टीकरण यह था कि भारत में सर्वहारा क्रांति करने के लिए उस्मानी सोवियत संघ को सशस्त्र हस्तक्षेप हेतु आमंत्रित कर रहा है।

इसके साथ ही रौस गुस्सा दिखाते हुए दलील दे रहा था कि 'उस्मानी षड्यंत्रकारी तो है ही, अपितु वह अपनी इस हरकत पर गर्व भी महसूस करता है। यदि उस्मानी को सज़ा नहीं दी जाती है तो हिन्दुस्तान में किसको सजा दी जायगी।'

साथ ही सरकार पक्ष के वकील ने अनेक फर्जी गवाह भी पेश किए।

सारी औपचारिकता के बाद न्यायाधीश ने अपने निर्णय में यह घोषित किया कि इन अभियुक्तों के खिलाफ लगाए गए पूर्वोक्त आरोप सही साबित हो गए हैं कि उन्होंने षड्यंत्र किया है और वे कॉमिन्टर्न से प्राप्त सहायता से सम्राट् की सत्ता को सशस्त्र क्रांति करके समाप्त करने की योजना को क्रियान्वित करने में लगे हुए थे। इसलिए प्रत्येक को चार साल की सख्त कैद की सज़ा दी जाती है।

न्यायाधीश ने बचाव पक्ष की किसी दलील को स्वीकार नहीं किया। उसने पाया कि देश में ऐसे पांच ग्रुपों का आपस में संबंध है—(1) बंबई में डागे ग्रुप, (2) लाहौर में इन्कलाब ग्रुप, (3) यू.पी. में उस्मानी ग्रुप, (4) कलकत्ता में एम.ए. एंड को. और (5) मद्रास मे सिंगरेवेलु ग्रुप।

अभियुक्तों में से उस्मानी को छोड़ कर लगभग सभी ने छोटे-बड़े लिखित या मौखिक वक्तव्य दिए जो अखबारों की खबरों में तो आंशिक रूप से आ गए, लेकिन न्यायाधीश ने उन पर विशेष ध्यान नहीं दिया। उस्मानी के 99 पृष्ठीय लिखित वक्तव्य को बचाव पक्ष के वकील के आग्रह पर प्रस्तुत नहीं करने दिया गया जिसकी कसक उन्हें सदा कचोटती रहती थी।

ट्रायल के दौरान कानपुर जेल में उस्मानी के चाचा उमरुद्दीन उनसे मिलने आए। यह एक हृदयद्रावक मिलन था, क्योंकि चाचा ने उन्हे बताया कि ज्यों ही 9 मई, 1923 को उनकी गिरफ्तारी हुई तो उनके और उनकी दादी के दो भाइयो के—अर्थात् तीनों के परिवारो पर क्या बीती। सब पुरुष, महिलाओ और बच्चों को हिरासत में ले लिया गया। यू.पी. की और बीकानेर की स्थानीय पुलिस के दरिंदो ने औरतों के गहनों और नकदी रुपयों को छीन-झपट कर ले लिया। बाद मे कोई भी किसी प्रकार का लूटा हुआ सामान वापिस नहीं आया। उन दिनों बैंक मे खाते खोलने का सिलसिला आम नही हुआ था, अतः हजारों रुपए चले गए। परिवार को सात दिनों तक हिरासत मे रखने के बाद महाराजा ने हस्तक्षेप करके

छुड़ाया।

यह सब कहते समय उमरुद्दीन की आँखें आँसुओं से भर गई थीं। आखिर वह रवाना हुआ तो उस्मानी को राहत महसूस हुई।

जेल में अस्थायी तौर पर 'ए' श्रेणी दी गई थी, लेकिन आई.सी.एस. (ICS) अधिकारी 'बोल्शेविकों' के लिए इसे कब सहन करने वाले थे, अतः जुलाई के प्रथम सप्ताह से दमन की कार्यवाही चालू हो गई। भौंडे किस्म का बड़ा कुर्ता, ऊँचा पायजामा, गले में लकड़ी की तख्ती, हाथ में हथकड़ी और पांव में बेड़ी। सबने इस बर्ताव के खिलाफ़ भूख हड़ताल का निर्णय लिया, लेकिन उस्मानी के अलावा सभी ने चार-पांच दिन के बाद भूख हड़ताल तोड़ दी क्योंकि उन्हें अलग-अलग जेलों में स्थानांतरित कर दिया गया था। उस्मानी ने बरेली जेल में बदल दिए जाने के बाद भी अपनी भूख हड़ताल जारी रखी।

भूख हड़ताली कैदी को जेल में डॉक्टर की देखरेख में रखा जाता है, इसलिए उस्मानी की निगरानी के लिए एक डॉक्टर को नियुक्त किया गया। डॉक्टर एक पक्का राष्ट्रवादी था। उसने बोल्शेविक षड्यंत्र केस के बारे में सब कुछ पढ़ रखा था। उसने उस्मानी के लिए एक चारपाई लाने का आदेश दिया। उन्हें दूसरे दरवाजे के ठीक अन्दर की तरफ़ रखा गया ताकि जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट की नज़र के सामने रहें। कर्नल हाप्पर बड़े सख्त मिज़ाज का था। ज्यों ही उसने उस्मानी को देखा, उसने डॉक्टर से कहा—'यदि मर जाय तो जेल बाग में ही गाड़ देगा।' उस्मानी ने तत्काल जवाब दिया—'यदि तुमने यह कर दिया तो सारी ब्रिटिश पार्लियामेन्ट थर्रा उठेगी।'

उस्मानी ने दिनांक 3.7.24 से 30.7.24 तक 27 दिन भूख हड़ताल रखी। 30 जुलाई को डॉक्टर की हिदायत पर उन्हें जबरदस्ती पकड़ कर एक नलकी से छोटे छेद की मार्फत बावजूद उनके विरोध के मजबूरन उनके गले में अंडा मिलाकर दूध डालने की कोशिश की गई। फिर भी भूख हड़ताल खतम की एवज में उन्होंने शर्त रखी कि गर्दन और पांव से जंजीर हमेशा के लिए हटा दी जाय और सरकार यह मानले कि उन्हें झुका पाने की सरकारी कोशिश सफल नहीं हुई। आखिर गर्दन और पांव की जंजीर से छुटकारा हुआ और वह भी सबके लिए। तब भूख हड़ताल समाप्त हुई। उस्मानी जब तक जेल में रहे तब तक यथासंभव कैदियों की मदद करते रहे।

उस्मानी को उन कैदियों के साथ रखा गया था जिन्हें सामाजिक अपराधों के कारण सजाएँ दी गई थी। एक रात को जब उस्मानी की कमर और सिर में भारी दर्द था, गर्मी भी भयंकर थी और मच्छर काटते जा रहे थे—उन्हें नींद नसीब नहीं थी। इतने में एक कैदी के चिल्लाने की आवाज सुनाई दी जिसको किसी दूसरे कैदी की कोई चीज़ चुराने के एवज मे बुरी तरह पीटा जा रहा था। उस्मानी ने जोर से चिल्ला कर कहा—'बंद करो पीटना, वर्ना मैं फिर भूख हड़ताल कर दूंगा। मै यह दमन बर्दाश्त नहीं कर सकता चाहे मुझे अपनी जान ही क्यों न देनी पड़े।' इस पर उसका पीटा जाना रुक गया। पीटने का असली उद्देश्य था कैदी से पैसे ऐंठना जो

दिन में उसके किसी रिश्तेदार ने दिए थे। चोरी का इलज़ाम बनावटी था।

इसी दौरान वे रोगग्रस्त हो गए। इसका मुख्य कारण तो था नलकी के ज़रिए भूख हड़ताल तुड़वाने की वह उठापटक वाली कोशिश जो नाकाम रही थी। इससे आँत संबंधी विकार पैदा हो गए। जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट द्वारा किए गए निदान के अनुसार यह बड़ी आंत की टी.बी. थी। उन्हें जोड़ों में दर्द और बुखार ने घेर लिया।

इस बीमारी की चिकित्सा के बाद उन्हें वापिस उन्हीं सामाजिक अपराधियों के घेरे में डाल दिया गया। हैड वार्डर ने उस्मानी को टॉर्चर करने की एक घिनौनी चाल का उपयोग किया। उसने एक हिन्दू वार्डर को वहाँ का जिम्मा दे दिया। उस्मानी ने इस सांप्रदायिक साजिश के खिलाफ़ फिर से भूख हड़ताल शुरू कर दी। हिन्दू वार्डर रामप्रसाद ने तो उस्मानी से माफी मांग ली और दमनात्मक बर्ताव करने से मना कर दिया, लेकिन हडताल तो हैड वार्डर के खिलाफ थी जो कैदियों के साथ दुर्व्यवहार करने के लिए ऐसी नीच हरकत कर रहा था।

उस्मानी को भूख हड़ताल के दौरान जेल हॉस्पीटल भेज दिया गया। वहाँ पंद्रह दिनों तक भूख हड़ताल चली। नतीजतन उन्हें मार्च के अन्त या अप्रैल 1925 के आरंभ में देहरादून जेल में स्थानांतरित कर दिया गया।

कर्नल बार्बर जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट था। वह भद्र व्यक्ति था। उस्मानी को मूंज बटने का काम दिया गया। जल्दी ही अंगूठे लाल हो गए क्योंकि यह एक कलमची के लिए निहायत सख्त काम था। दूसरे दिन कर्नल ने देखा कि उस्मानी की हथेलियों, अंगुलियों और अंगूठों से खून रिसने लगा है तो उसने इस काम को रुकवा दिया और चर्खा कातने का काम दिलवा दिया। उसने उन्हें लंदन से प्रकाशित 'टाइम्स' अखबार भी भिजवाना चालू कर दिया और डाक्टर की सलाह पर बेझड की बजाय गेहूँ की रोटी देना शुरू कर दिया।

लेकिन जब आई.जी. को शिकायत पहुँची तो बार्बर द्वारा दी गई उपर्युक्त सुविधा वापिस ले ली गई और फिर से मूंज बटने का काम दे दिया गया। वही आटा-बेसन मिश्रित बेझड़ की रोटी। 'टाइम्स' बंद करके बाइबिल और अन्य ईसाई धर्म का साहित्य पढ़ने को दिया जाने लगा।

उस्मानी को न कभी कोई मारपीट झुका सकी, न कभी कोई मशक्कत और न ही कोई प्रलोभन। उत्पीड़न और भूख हड़तालों से बार-बार अस्वस्थताओं से जकड़े जाने पर भी वे चट्टान की तरह अडिग रहे। परिवार के विविध प्रकार के संकट और परिवार जनों के आंसू भी उन्हें नहीं पिघला सके। कितने ही अखबारों ने उनके इस वाक्य को शीर्षक देकर छापा—'सरकार के सामने झुकने की बजाय मैं जेल के एक कोने में खुद की खोदी हुई कब्र में अपने आप को दफन कर दूँगा।'

प्रचारतंत्र से परेशान होकर सरकार ने जालिम ज़ाकिर हुसैन को देहरादून जेल से ट्रांसफर कर दिया। उससे कुछ पहले उस्मानी को मूंज बटने के काम से हटाकर लिखने का काम सौंप दिया गया था क्योंकि उनके अलावा और कोई लिखना पढ़ना

जानता ही नहीं था। अब कैदी उन्हें 'खिलाफ़तवाला उस्मानी' या 'मौलवी' कहने लगे। तब से देहरादून जेल में वे मौलवी ही रहे।

जब सज़ा की अवधि समाप्त होने को आई तो देहरादून के लोगों ने उस्मानी का जोरदार स्वागत करने का कार्यक्रम बनाया, लेकिन सरकारी तंत्र को यह कब गवारा था। इसलिए उसने तत्काल उन्हें वहाँ से हटाकर झांसी जेल में भिजवा दिया और एकांत में सबसे अलग रखा गया। वहाँ उनसे मिलने की इज़ाजत किसी को नहीं दी गई। इस तरह एक सप्ताह तक वहाँ रखने के बाद दिनांक 26 अगस्त, 1927 की सुबह 10 बजे जेल से छुट्टी दे दी गई।

फाटक से बाहर निकलते ही का. अब्दुल मजीद और रफीक अहमद तथा स्थानीय कांग्रेसियों ने उनकी आगवानी की। यह वह माहौल था जब हिंसा-अहिंसावादी दोनों प्रकार के कांग्रेसी भाईचारे की डोर से बंधे हुए थे। झांसी वाले दो दिन के अभिनंदन समारोह का कार्यक्रम बना रहे थे लेकिन इसी बीच गणेश शंकर विद्यार्थी और कानपुर के *अन्य साथियों के तात्कालिक आग्रह से उस्मानी को तुरंत कानपुर* के लिए जानेवाली गाड़ी से रवाना कर दिया गया।

कानपुर पहुँचने पर एक भव्य समारोह का आयोजन किया गया जिसमें अनेक क्रांतिकारियों ने भी हिस्सा लिया। उस्मानी के लिए यह एक हृदयस्पर्शी दृश्य था। दो दिन बाद कॉ. मज़ीद ने लाहौर चलने का अनुरोध किया और सबकी सलाह पर वे उन्हें लाहौर ले गए। वहाँ वे एक सप्ताह तक रहे और वापस कानपुर आ गए।

कानपुर में उस्मानी का संपर्क 'काकोरी षड्यंत्र केस' के क्रांतिकारियों के साथ हुआ। आगे चल कर इसी प्रकार के क्रांतिकारी केस में भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को फांसी की सजा दी गई थी। उनकी मुलाकात विजयकुमार सिन्हा से भी हुई।

जब गणेश शंकर विद्यार्थी ने उस्मानी से उनकी रूस यात्रा के अनुभव सुने तो उन्होंने उन्हें लिपिबद्ध करने की सलाह दी ताकि वे 'प्रताप' में उन्हें प्रकाशित कर दें। उस्मानी ने इस सलाह को मान कर अंग्रेजी में लिख दिया। यह विवरण ज्यों का त्यों प्रकाशित हो गया और पुस्तकाकार रूप में 'Peshawar to Moscow' शीर्षक से सबके हाथों तक पहुँचा।

अजमेर के साथियों के आग्रह पर उन्हें वहाँ जाना पड़ा और प्रसिद्ध क्रांतिकारी और लोकप्रिय नेता अर्जुनलाल सेठी के साथ मिल कर संगठनात्मक कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार की। इधर बंबई के कम्युनिस्ट ग्रुप ने उन्हें तत्काल बंबई बुला लिया। वहाँ एक जोरदार मीटिंग में उस्मानी ने कहा—'मैं कम्युनिस्ट हूँ और कम्युनिज्म के लिए ही सारा जीवन व्यतीत करूँगा—चाहे किसी भी प्रकार का बलिदान क्यों न देना पड़े।'

इस मीटिंग में एस. ए. डांगे तो थे ही, साथ ही कॉ. जोगलेकर, निमकर

और एस. वी. घाटे भी थे। बंबई के साथियों ने उस्मानी को वहाँ रह कर ट्रेड यूनियन मोर्चे पर काम करने की सलाह दी, लेकिन वे कानपुर में रहकर काम करने का वायदा कर गए थे। अत: बंबई से वापस कानपुर आ पहुँचे।

नवम्बर 1927 में कानपुर में ट्रेड यूनियन कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसकी स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री गणेश शंकर विद्यार्थी थे और उपाध्यक्ष शौकत उस्मानी। सारे प्रचार-प्रसार का उत्तरदायित्व उस्मानी को सौंपा गया। यह अधिवेशन काफ़ी सफल रहा।

26 दिसम्बर, 1927 को मद्रास में A.I.C.C. का अधिवेशन हुआ जिसे बहुदलीय मंच की संज्ञा दी जा सकती है। इसमें कम्युनिस्टों ने भी भाग लिया। राजस्थान के कांग्रेसियों की ओर से उस्मानी को भी प्रतिनिधि चुना गया। इस अधिवेशन में कम्युनिस्टों की ओर से 'विषय निर्धारण समिति' में 'पूर्ण स्वंतत्रता' का प्रस्ताव तैयार किया गया और उसे जवाहरलाल नेहरू द्वारा अधिवेशन में रखे जाने का अनुरोध किया गया। उस्मानी को इस अधिवेशन में अनेक स्वतन्त्रता सेनानियों से मिलने का सुअवसर मिला। जवाहर लाल नेहरू तो स्वयं मंच से उतरकर उनसे मिले।

बाद में चेट्टियार के निवास स्थान पर कम्युनिस्ट पार्टी की मीटिंग हुई जिसमें उस्मानी ने भी भाग लिया। इसमें पार्टी के संगठनात्मक कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार की गई। उस्मानी को अध्यक्ष मंडल में शामिल किया गया था। यह सब बाद में सरकारी रेकार्ड में दर्ज हुआ और इसे उनके विरुद्ध लगाए गए अभियोग में सबूत के रूप में पेश किया गया।

उस्मानी का संपर्क सभी क्रांतिकारियों के साथ हो चुका था जिनमें भगतसिंह सर्वोपरि थे। भगतसिंह से मुलाकात करवाने का काम भी श्री गणेश शंकर विद्यार्थी की ही मार्फत सम्पन्न हुआ, लेकिन उस समय सारी बातें गुप्त रूप से ही होती थी।

सन् 1928 के आरंभ में जब उस्मानी को मालूम हुआ कि कॉ. अकबर खाँ कुरेशी, जिन्हें दस साल की सख्त कैद की सजा हुई थी और जो उस समय अमरावती जेल में सजा काट रहे थे—उन्होंने उनकी रिहाई के लिए कोशिश करने की योजना बनाई। वे विट्ठलभाई पटेल के निवास पर उनसे मिले और वहीं पर श्रीमती सरोजिनी नायडू से उनकी पहली मुलाकात हुई। इसी प्रकार सभी विधायकों से संपर्क किया और सभी ने कॉ. अकबर खाँ कुरेशी के मामले में सहायता करने का आश्वासन दिया। जब वे श्रीनिवास आयंगर से मिले, जो उस समय अस्वस्थ चल रहे थे ने उनकी सहायता करने की बात तो मानी ही साथ ही 'पेशावर से मॉस्को' पुस्तक का प्रसंग छेड़ कर औरों की तरह उस्मानी के सामने इस बात पर विशेष जोर दिया कि वे मॉस्को जाएँ और भारत की स्वतत्रता के लिए सोवियत संघ से मदद लेने की कोशिश करें।

मॉस्को जाने के संबंध में आयंगर ने उस्मानी को मदनमोहन मालवीय से मिलने का सुझाव दिया। वे मालवीयजी से अकेले में मिले। मालवीयजी ने भी भारत की

स्वतंत्रता के लिए सोवियत मदद के प्रति उत्साह दिखाया। उस्मानी को प्रसन्नतापूर्ण आश्चर्य हुआ और पूर्व में बीकानेर की संस्था नागरी भंडार के उद्घाटन के अवसर पर संस्था के साम्प्रदायिकीकरण का जो पूर्वाग्रह पैदा हो गया था उसे उन्होंने पूरी तरह हृदय से निकाल दिया।

उस्मानी ने बाहर जाने का इरादा कर लिया था और शफ़ीक ने पासपोर्ट की उपलब्धि के विषय में उन्हें पूरी तरह आश्वस्त कर दिया था। यात्रा व्यय का प्रबंध गणेश शंकर विद्यार्थी और यू.पी. के साथियों ने कर दिया था। जून 1928 में वे सोवियत संघ के लिए फिर से रवाना हो गए।

यह विश्व इतिहास का वह महत्त्वपूर्ण समय था जब कॉमिन्टर्न का छठा अधिवेशन होने को था। उस्मानी, शफीक और हबीब को विशेष रूप से प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार कर लिया गया था। उस्मानी को इसके अध्यक्ष मंडल में शामिल कर लिया गया। वे स्टालिन से तीसरे स्थान पर आसीन किए गए। इस अधिवेशन का विवरण उस्मानी द्वारा लिखित पुस्तिका 'I Met Stalin Twice' ('मैं स्टालिन से दो बार मिला') में अंकित किया गया है।

उस्मानी के लिए यह एक गौरव की बात थी कि उन्हें 27 वर्ष की इतनी छोटी उम्र में अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट मंच के अध्यक्ष मंडल में सम्मिलित होने का सुअवसर प्राप्त हुआ। यह सारे भारत के लिए गर्व का विषय माना जायगा।

पृष्ठभूमि और मेरठ षड्यंत्र केस

कॉमिन्टर्न के अधिवेशन में भारत को सहायता के प्रश्न पर सर्वसम्मत राय कायम नहीं हो सकी यद्यपि उस्मानी की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण थी। उन्हें कॉमिन्टर्न की कार्यकारिणी में शामिल करने का प्रस्ताव था, किन्तु उन्होंने अपना नाम स्वयं वापिस ले लिया क्योंकि वे भारत के स्वतंत्रता संग्राम में जूझने को प्राथमिकता देते थे और इसके लिए अपना सर्वस्व बलिदान करने की तत्परता के साथ आतुर थे।

कुछ दिनों तक रुकने के बाद उन्होंने अक्टूबर के अंत में वापस भारत आने का इरादा कर लिया और 17 नवम्बर, 1928 को मॉस्को से रवाना हो गए। वे यूरोप के कई देशों से होते हुए अपनी निर्धारित योजना के अनुसार अपना मार्ग तय करने लगे। उन्हें स्विट्ज़रलैंड अधिक पसंद आया।

कई जगह उनको अपना नाम, अपनी राष्ट्रीयता और भाषा की ध्वनिविविधता आदि को बदलना पड़ा ताकि गुप्तचरों से बचा जा सके। कई जगह उनकी तलाशी भी ली गई। किसी ने उनको अंग्रेजी नस्ल का समझा तो किसी ने फ्रांसीसी। इस प्रकार अनेक नज़रों से बचते हुए वे बंबई पहुँचे। यह दिसम्बर का अंतिम सप्ताह था।

मैजेस्टिक होटल पहुँच कर उन्होंने स्नान किया और चाय पी। फिर सीधे पार्टी ऑफिस की तरफ चल दिए। कार्यालय बंद मिला। फिर वे बंबई के सोशलिस्ट कॉ. लोतवाला से मिले और दूसरे कॉमरेड्स के विषय में पूछताछ की। लोतवाला कम सुनते थे और उनको यह भी नहीं मालूम था कि उस्मानी पिछले 6 माह से बाहर थे। उन्हें उस्मानी की नाजानकारी से आश्चर्य हुआ। उस्मानी को बताया गया कि सारे साथी अखिल भारतीय मजदूर और किसान सम्मेलन में भाग लेने कलकत्ता जा चुके हैं।

होटल वापिस आकर उन्होंने तत्काल कलकत्ता रवाना होने का निर्णय लिया। इस समय रात के 9.30 बजे थे। उसके बाद कलकत्ता जाने के लिए कोई ट्रेन उपलब्ध नहीं थी, इसलिए होटल में ही रुकना पड़ा। लेकिन फिर वे नागपुर चले गए और पारसी का वेष छोड़ कर डॉ. जॉनसन बन गए।

जब वे कलकत्ता पहुँचे तो अधिवेशन समाप्ति पर था। सम्मेलन परिसर में सुभाषचन्द्र बोस अपनी सैनिक पोशाक में घूम रहे थे, क्योंकि वही कांग्रेस सेवादल के उच्चतम प्रभारी थे। मोतीलाल नेहरू ने अधिवेशन की अध्यक्षता की थी। उस्मानी ने अपना पासपोर्ट मुजफ्फर अहमद के हवाले कर दिया।

कलकत्ता में उस्मानी ने सी.पी.आई. की मीटिंग में भाग लिया। इस मीटिंग में उन्हें पंजाब भेजकर वहाँ उत्तर-पश्चिम रेल मजदूरों को संगठित करने का काम सौंपा गया। वे पंजाब गए। लेकिन पंजाब के साथियों ने आगाह किया कि उनके पीछे सी.आई.डी. लग चुकी है और धरपकड़ होने वाली है। उनकी सलाह पर जनवरी 1929 में बंबई आ गए। लेनिन दिवस पर आयोजित मीटिंग में अपने भाषण में उन्होंने कहा—'लेनिन चल बसे, लेकिन लेनिनवाद अमर है।' 3 फरवरी, 1929 को एक और मीटिंग की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने कहा—'क्रांतिकारी शक्तियाँ सशस्त्र संघर्ष की ओर आगे बढ़ रही हैं।' उन्होंने 'पयाम-ए-मजदूर' (उर्दू साप्ताहिक) के तीन अंकों का संपादन भी किया। 17 से 19 मार्च, 1929 को संगठनात्मक मुद्दों पर आयोजित सी.पी.आई. की मीटिंग में उन्होंने फिर से भाग लिया। वहाँ से वे फिर कानपुर आए और उन्होंने उत्तर-प्रदेश के क्रांतिकारियों और गणेश शंकर विद्यार्थी से मुलाकातें कीं और रूस यात्रा का विवरण दिया। क्रांतिकारियों में वे भी थे जो भूमिगत कार्य कर रहे थे।

यह वह पृष्ठभूमि थी जिसने उस्मानी की पुनः गिरफ्तारी को निकट ला खड़ा किया। इस प्रकार की परिस्थिति पैदा होने का राजनैतिक कारण यह था कि एक ओर तो हड़तालों और सत्याग्रहों का दौर चल रहा था, वामपंथी दबाव लगातार बढता चला जा रहा था और दूसरी ओर प्रशासनतंत्र दमन की कार्यवाहियों को तेज कर रहा था। पब्लिक सेफ्टी बिल और ट्रेड डिस्प्यूट्स बिल ने संघर्षों की आग को और भड़का दिया। साथ ही दमन की तलवार को भी धार दी जाने लगी। पब्लिक सेफ्टी बिल का लक्ष्य था भारत से विदेशी कम्युनिस्टों को निर्वासित करना और

ट्रेड डिस्प्यूट्स बिल का मकसद था मजदूरों की एकता को तोड़कर उनके संघर्षों को रौंद डालना ताकि आसानी से उनके हितों का गला घोंट दिया जाय।

केन्द्रीय एसेंबली में सरकारी प्रतिनिधि हड़तालों को 'राजनीति से प्रेरित' करार दे रहे थे और स्वराजी पार्टी के प्रतिनिधि इन बिलों का जम कर विरोध कर रहे थे। सरकारी प्रतिनिधियों ने सब प्रकार की समस्याओं को खड़ा करने के लिए कम्युनिस्टों को दोषी ठहराया और मांग की कि जन-जीवन की सुरक्षा के लिए उनको दंडित करना ही एकमात्र उपाय है जबकि स्वराजी पार्टी के प्रतिनिधि इसके लिए सरकार को चुनौती दे रहे थे।

मार्च 1929 के दूसरे सप्ताह में 'बोम्बे क्रॉनिकल', 'सेंटिनल' और साप्ताहिक 'स्पार्क' में समाचार प्रकाशित हुए कि अनेक वामपक्षीय नेताओं को जल्दी ही गिरफ्तार किया जायगा। इस पर गंभीरता से विचार विमर्श किया गया। देश की आजादी के आन्दोलन में सभी अहम भूमिका अदा कर रहे थे। एस.ए. डांगे गिरणी कामगार यूनियन के जनरल सैक्रेटरी थे और 'क्रांति' में लिखते थे, जी. अधिकारी उनके सहायक थे, आर.एस. निम्बकर बंबई कांग्रेस कमेटी के जनरल सैक्रेटरी थे, के.एन. जोगलेकर जी.आई.पी. रेलवेमैन्स यूनियन के जनरल सैक्रेटरी थे, एस.वी. घाटे सी.पी.आई. के जनरल सैक्रेटरी थे और शौकत उस्मानी 'पयाम-ए-मज़दूर' के संपादक और मदनपुरा मजदूरों के नेता। सबने तय किया कि न तो वे अपने काम को रोकेंगे और न ही भूमिगत होंगे—चाहे कोई भी संकट क्यों न सामने आए।

जगह-जगह सम्मेलन होने लगे और साथ ही घाटे, अधिकारी और उस्मानी पार्टी को पुनर्गठित करने के काम में भी जी-जान से जुट रहे थे।

20 मार्च, 1929 को जैकब सर्किल एरिया में आगाखां बिल्डिंग के एक छोटे से कमरे में शौकत उस्मानी सो रहे थे कि सुबह होने से पहले ही किसी ने दरवाज़ा खटखटाया। उस्मानी ने सोचा कि कोई साथी सहयोगी होगा और उन्हें मीटिंग में ले जाने के लिए जल्दी मचा रहा होगा। वे झल्लाए और दरवाजा खोला—'कहाँ ... यह तो सादी वर्दी में पुलिस का सब-इंस्पेक्टर ए.के. चौधरी!'

'क्या बात है?' उस्मानी ने पूछा।

'यह है आपके नाम का वारंट, हमें तलाशी लेनी है।'

इतना कहते ही तलाशी का काम चालू हो गया! तब तक उस्मानी ने कपड़े पहन लिए क्योंकि वे समझ गए थे कि गिरफ्तारी के क्षण आ गए हैं। इतने में सशस्त्र सिपाहियों सहित पुलिस कमिश्नर विलसन आ धमका। 'क्या यही वह आदमी है?' उसने तलाशी लेनेवाले सिपाही की ओर इशारा करते हुए पूछा।

'नहीं महोदय,' सब-इंस्पेक्टर ने उस्मानी की तरफ संकेत करते हुए कहा—'यह है मिस्टर शौकत उस्मानी!'

'मैंने कभी नहीं सोचा था कि तुम इतने फुर्तीले हो,' कमिश्नर ने कहा—'तुम यहाँ के तो हो नहीं, फिर यहाँ क्या कर रहे थे?'

'मैं हिन्दुस्तानी हूँ, इसलिए मैं यहाँ हूँ। आप अपना काम करिए।'

'तुम गिरफ्तार किए जाते हो।'

'ठीक है, मैं तैयार हूँ।'

'आज दूसरों की भी गिरफ्तारी होगी।'

इस पर उस्मानी ने कोई जवाब नहीं दिया। वे उन्हें पकड़ कर बाहर ले गए। वहाँ सशस्त्र पुलिसवालों का बड़ा काफिला तैनात था। क्या उस्मानी इतने खतरनाक व्यक्ति थे? लेकिन यह नाटकीय दृश्य सारी बम्बई की मजदूर बस्ती में दिखाया जा रहा था।

वहाँ से उन्हें विक्टोरिया टर्मिनस के पास पल्टन बाज़ार थाने में ले आया गया। जिस कोठरी में उनको रखा गया वह बदबू मार रही थी और उसमें मच्छर भिनभिना रहे थे। लकड़ी का तख्ता ही सोने बैठने की जगह थी। शाम को जब उन्हें विक्टोरिया टर्मिनस लाया गया तो वहाँ अधिकारी, डांगे, घाटे और अन्य नेता पहुँचाए जा चुके थे। गाड़ी में बैठने पर उन सबको पता चल गया कि उन्हें मेरठ ले जाया जा रहा है।

बंबई के सायंकालीन अखबारों में इन गिरफ्तारियों की खबरें छपीं और यह भी कि बंबई के 25000 मज़दूरों ने इसके विरोध में हड़ताल कर दी है। इससे फिनले, क्राउन, टाटा, मोरारजी, गोकुलदास, जैकब सैशन और कस्तूरचन्द मिलों का काम ठप्प हो गया। किसी प्रकार की हिंसक घटना का कोई समाचार नहीं था। हड़ताल शान्तिपूर्ण थी।

मेरठ की जेल के फाटक पर पहुँचते ही सब अभियुक्तों की पूरी तलाशी ली गई और फिर बैरक नं. 2 में भेज दिया गया जहाँ आर.एस. निम्बकर, अब्दुल मजीद और केदारनाथ पहले से लाये जा चुके थे। सब साथी आपस में मिलजुल कर पारस्परिक परिचय प्राप्त करते जा रहे थे कि घंटे भर बाद सबको अलग-अलग कर दिया गया।

अभियुक्तों की सूची इस प्रकार है—

	वर्णक्रमानुसार नाम	गिरफ्तारी का स्थान या प्रदेश
1.	अब्दुल मजीद	पंजाब
2.	अयोध्या प्रसाद	कलकत्ता (बंगाल)
3.	अमीर हैदरखां	भूमिगत होते हुए
4.	ए.ए. आल्वे	बंबई
5.	डॉ. बी.एन. मुकर्जी	यू.पी.
6.	बी.एफ. ब्रैडले	बंबई सूची में
7.	धर्मवीर सिंह (एम.एल.सी.)	यू.पी.
8.	डी.आर. ठेंगड़ी	पूना
9.	धरणी गोस्वामी	कलकत्ता
10.	गोपेन चक्रवर्ती	कलकत्ता

11. जी. अधिकारी	बंबई
12. गौरीशंकर	यू.पी.
13. गोपाल चन्द्र बासक	कलकत्ता
14. जी.आर. कास्ले	बंबई
15. एच.एल. हचिन्सन	बंबई
16. के.एन. जोगलेकर	बंबई
17. के.एन. सहगल	पंजाब
18. किशोरी लाल घोष	कलकत्ता
19. एम.जी. देसाई	बंबई
20. लक्ष्मण राव कदम	झांसी
21. मुजफ्फर अहमद	कलकत्ता
22. फिलिप स्प्रैट	कलकत्ता
23. पी.सी. जोशी	इलाहाबाद
24. आर.आर. मित्रा	कलकत्ता
25. आर.एस. निम्बकर	अजमेर
26. एस.एच. झाबवाला	बंबई
27. शमसुल हुदा	कलकत्ता
28. सोहनसिंह जोश	अमृतसर
29. एस.एस. मिराजकर	बंबई
30. एस.वी. घाटे	बंबई
31. शिवनाथ बनर्जी	कलकत्ता
32. एस.ए. डांगे	बंबई
33. शौकत उस्मानी	बंबई

मेरठ षड्यंत्र केस की तैयारी के लिए अनेक स्थानों पर छापे मारे गए थे। इनमें 'आनंद बाज़ार पत्रिका' (कलकत्ता और औरंगाबाद प्रेस कार्यालय), सरस्वती प्रेस और प्रेस कर्मचारी कार्यालय, मजदूर और किसान पार्टी कार्यालय, कम्युनिस्ट पार्टी कार्यालय, बंबई यूथ लीग, अनेक ट्रेड यूनियनों के कार्यालय, फ्री प्रेस ऑफ इंडिया तथा जी.आई.पी. रेलवेमैन्स यूनियन ऑफिस आदि। यहाँ तक कि रेमजे मैकडोनाल्ड और जार्ज बनार्ड शा की पुस्तकों को भी जब्त कर लिया गया।

बैरक नं. 5 की कोठरियों में अन्य अभियुक्तों से अलग करके शौकत उस्मानी, सहगल, अधिकारी, गौरीशंकर, शिवनाथ बनर्जी, शमसुल हुदा और अयोध्याप्रसाद को बंद किया गया और उनके साथ नाजायज सख्ती का बर्ताव किया गया तो उन्होंने इसका विरोध करने के लिए भूख हड़ताल कर दी।

इससे मजबूर होकर उन्हें अन्य साथियों के साथ बैरक नं. 10 में ` ~ गया।

'मैं हिन्दुस्तानी हूँ, इसलिए मैं यहाँ हूँ। आप अपना काम करीए।'

'तुम गिरफ्तार किए जाते हो।'

'ठीक है, मै तैयार हूँ।'

'आज दूसरों की भी गिरफ्तारी होगी।'

इस पर उस्मानी ने कोई जवाब नहीं दिया। वे उन्हें पकड़ कर बाहर ले गए। वहाँ सशस्त्र पुलिसवालों का बड़ा काफिला तैनात था। क्या उस्मानी इतने खतरनाक व्यक्ति थे? लेकिन यह नाटकीय दृश्य सारी बम्बई की मजदूर बस्ती में दिखाया जा रहा था।

वहाँ से उन्हें विक्टोरिया टर्मिनस के पास पल्टन बाज़ार थाने में ले आया गया। जिस कोठरी में उनको रखा गया वह बदबू मार रही थी और उसमें मच्छर भिनभिना रहे थे। लकड़ी का तख्ता ही सोने बैठने की जगह थी। शाम को जब उन्हें विक्टोरिया टर्मिनस लाया गया तो वहाँ अधिकारी, डांगे, घाटे और अन्य नेता पहुँचाए जा चुके थे। गाड़ी में बैठने पर उन सबको पता चल गया कि उन्हें मेरठ ले जाया जा रहा है।

बंबई के सायंकालीन अखबारों में इन गिरफ्तारियों की खबरें छपीं और यह भी कि बंबई के 25000 मज़दूरों ने इसके विरोध में हड़ताल कर दी है। इससे फिनले, क्राउन, टाटा, मोरारजी, गोकुलदास, जैकब सैशन और कस्तूरचन्द मिलों का काम ठप्प हो गया। किसी प्रकार की हिंसक घटना का कोई समाचार नहीं था। हड़ताल शान्तिपूर्ण थी।

मेरठ की जेल के फाटक पर पहुँचते ही सब अभियुक्तों की पूरी तलाशी ली गई और फिर बैरक नं. 2 में भेज दिया गया जहाँ आर.एस. निम्बकर, अब्दुल मजीद और केदारनाथ पहले से लाये जा चुके थे। सब साथी आपस में मिलजुल कर पारस्परिक परिचय प्राप्त करते जा रहे थे कि घंटे भर बाद सबको अलग-अलग कर दिया गया।

अभियुक्तों की सूची इस प्रकार है—

वर्णक्रमानुसार नाम	गिरफ्तारी का स्थान या प्रदेश
1. अब्दुल मजीद	पंजाब
2. अयोध्या प्रसाद	कलकत्ता (बंगाल)
3. अमीर हैदरखां	भूमिगत होते हुए
4. ए.ए. आल्वे	बंबई
5. डॉ. बी.एन. मुकर्जी	यू.पी.
6. बी.एफ. ब्रैडले	बंबई सूची में
7. धर्मवीर सिंह (एम.एल.सी.)	यू.पी.
8. डी.आर. ठेंगड़ी	पूना
9. धरणी गोस्वामी	कलकत्ता
10. गोपेन चक्रवर्ती	कलकत्ता

11. जी. अधिकारी	बंबई
12. गौरीशंकर	यू.पी.
13. गोपाल चन्द्र बासक	कलकत्ता
14. जी.आर. कास्ले	बंबई
15. एच.एल. हचिन्सन	बंबई
16. के.एन. जोगलेकर	बंबई
17. के.एन. सहगल	पंजाब
18. किशोरी लाल घोष	कलकत्ता
19. एम.जी. देसाई	बंबई
20. लक्ष्मण राव कदम	झांसी
21. मुजफ्फर अहमद	कलकत्ता
22. फिलिप स्प्रैट	कलकत्ता
23. पी.सी. जोशी	इलाहाबाद
24. आर.आर. मित्रा	कलकत्ता
25. आर.एस. निम्बकर	अजमेर
26. एस.एच. झाबवाला	बंबई
27. शमसुल हुदा	कलकत्ता
28. सोहनसिंह जोश	अमृतसर
29. एस.एस. मिराजकर	बंबई
30. एस.वी. घाटे	बंबई
31. शिवनाथ बनर्जी	कलकत्ता
32. एस.ए. डांगे	बंबई
33. शौकत उस्मानी	बंबई

मेरठ षड्यंत्र केस की तैयारी के लिए अनेक स्थानों पर छापे मारे गए थे। इनमें 'आनंद बाजार पत्रिका' (कलकत्ता और औरंगाबाद प्रेस कार्यालय), सरस्वती प्रेस और प्रेस कर्मचारी कार्यालय, मजदूर और किसान पार्टी कार्यालय, कम्युनिस्ट पार्टी कार्यालय, बंबई यूथ लीग, अनेक ट्रेड यूनियनों के कार्यालय, फ्री प्रेस ऑफ इंडिया तथा जी.आई.पी. रेलवेमैन्स यूनियन ऑफिस आदि। यहाँ तक कि रेमजे मैकडोनाल्ड और जार्ज बनार्ड शा की पुस्तकों को भी जब्त कर लिया गया।

बैरक नं. 5 की कोठरियों में अन्य अभियुक्तों से अलग करके शौकत उस्मानी, सहगल, अधिकारी, गौरीशंकर, शिवनाथ बनर्जी, शमसुल हुदा और अयोध्याप्रसाद को बंद किया गया और उनके साथ नाजायज सख्ती का बर्ताव किया गया तो उन्होंने इसका विरोध करने के लिए भूख हड़ताल कर दी।

इससे मजबूर होकर उन्हें अन्य साथियों के साथ बैरक नं. 10 में भेज दिया गया।

उधर दुनिया भर में इस केस की दमनात्मक कार्यवाही का विरोध होने लगा। ब्रिटेन में सारी वामपंथी ट्रेड यूनियनों ने इसके खिलाफ आवाज़ बुलन्द की। 21 अप्रैल, 1929 को 'साम्राज्यवाद विरोधी लीग' ने ग्लासगो में विशेष सम्मेलन रखा जिसमें इसके अध्यक्ष जेम्स मैक्सटन और अन्य नेताओं ने अपने वक्तव्यों मे इस कार्यवाही की तीव्र निन्दा की। इससे पहले बर्मिंघम मे ऐसा ही सम्मेलन किया गया और लदन और अन्य जगहों पर ऐसे ही आयोजनों मे भारत में श्वेत आतंक की भर्त्सना की गई। संसद के दोनों सदनों में दीर्घाओ से पर्चे फेंके गए। बार-बार 'साइमन कमीशन मुर्दाबाद' के नारे लगने लगे। एक महिला ने चिल्लाते हुए सदन में काला झंडा फेंका। उसे जबरदस्ती धकेल कर बाहर खदेड़ा गया।

इसी मेरठ केस का इतना व्यापक असर हुआ कि शौकत उस्मानी को ब्रिटिश पार्लियामेंट के आम चुनाव में ब्रिटेन की कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा जौन साइमन के खिलाफ मजदूर वर्ग का उम्मीदवार चुना गया।

ब्रिटेन मे चुनाव लडने के लिए उस्मानी के वकील ने जमानत की अर्जी दी। उसने बहुत बढ़िया तर्क दिए किन्तु जमानत की अर्जी खारिज कर दी गई। आखिर चुनाव में उस्मानी के विरोधी विजयी रहे। यद्यपि इस चुनाव में लेबर पार्टी की जीत हुई, लेकिन इससे मेरठ षड्यंत्र केस पर कोई प्रभाव नहीं पडा। इतना जरूर हुआ कि स्पेशल क्लास का व्यवहार जांच अवधि मे ही प्राप्त हो गया जो पहले केवल यूरोपवासी अभियुक्तों को ही प्राप्त हुआ करता था।

देश में भगतसिंह और बटुकेश्वरदत्त ने एसेंबली हाल में बम फेंक कर जहाँ पब्लिक सेफ्टी और ट्रेड डिस्प्यूट बिलों का विरोध किया था इसके साथ 'मेरठ गिरफ्तारियों' का विरोध भी शामिल था।

बंबई से प्रकाशित एक समाचार पत्र के 14 अगस्त, 1929 के अंक के समाचार के अनुसार 'ए फ्री प्रेस बीम' की मार्फत भेजे गए संदेश द्वारा महान वैज्ञानिक आइन्स्टीन और सुप्रसिद्ध उपन्यासकार हेनरी हेरौस ने प्रधानमंत्री मैकडोनाल्ड को 'मेरठ ट्रायल' को समाप्त करने को कहा।

अनेक हस्तियों ने केबलग्राम देकर लेबर पार्टी सरकार से अनुरोध किया कि मेरठ केस, ट्रेड डिस्प्यूट और पब्लिक सेफ्टी जैसे बिलों पर पुनर्विचार करके उन्हें समाप्त किया जाय क्योकि वे भारत के मजदूर संगठनों के लिए घातक हैं। श्री जवाहरलाल नेहरू ने भी कांग्रेस की ओर से केबलग्राम भेजा। किन्तु ब्रिटेन की लेबर सरकार ने इस पर नकारात्मक रवैया ही अपनाया।

एक माह और बाईस दिन तक रिमांड दर रिमांड चलते रहने के पश्चात् दिनांक 12 जून, 1929 को मुकदमा शुरू हुआ। वकील अपनी लहराती पोशाकों मे, न्यायाधीश गंभीर मुद्रा दिखाते हुए और अभियुक्त 'साम्राज्यवाद मुर्दाबाद,' 'इन्कलाब जिन्दाबाद', 'दुनिया भर के मजदूरो एक हो' और इसी प्रकार के अन्य नारे लगाते हुए तथा ... क उत्सुकता के साथ केस के आरंभ का इंतज़ार कर रहे थे। यह वही 'मेरठ

षड्यंत्र केस' था जिसकी गूंज विश्वव्यापी स्तर पर हो रही थी और जिसके समाचार हर देश की भाषा में प्रचारित हो रहे थे। सोहनसिंह जोश के अनुसार 31 अभियुक्तों की इस सूची में अंग्रेजों, हिन्दुओं, मुसलमानों तथा अन्य समुदायों के प्रमुख जननेताओं का एक अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय था।

अभियुक्तों के बचावपक्ष के परामर्शकों में सुप्रसिद्ध विधिवेत्ता नरीमन, एम.सी. छागला, फरीदुल हक अंसारी, क्षितीश चक्रवर्ती और देविका प्रसाद सिन्हा आदि थे जिन्हें इस बात के लिए जद्दोजहद करनी पड़ी कि उनके ऊपर यह प्रतिबंध कैसे लगाया गया कि वे बिना टिकट इस केस के समय उपस्थित नहीं हो सकते। फिर मेरठ की बार एसोसिएशन ने इसके खिलाफ़ एक प्रस्ताव पास किया।

यद्यपि बचाव पक्ष में अनेक समितियाँ काम कर रही थीं जिनमें सबसे महत्त्वपूर्ण कमेटी का गठन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के द्वारा किया गया था जिसके चेयरमैन डॉ. अंसारी थे। इसमें मोतीलाल नेहरू और श्रीनिवास आयंगर भी थे। बंबई में भी 'बोम्बे वर्कर्स कमेटी' थी और लंदन में वामपंथियों ने भी एक कमेटी का गठन किया था जिसमें लेबर पार्टी के एम.पी. भी थे।

देहरादून की जेल में उन्हें अधिक समय तक नहीं रहना पड़ा।

मेरठ केस के अभियुक्तों से जेल में मिलने वाले नेताओं में श्रीमती सरोजनी नायडू, सुभाषचन्द्र बोस, मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू, महात्मा गाँधी, आचार्य कृपलानी तथा अन्य शामिल थे।

वैसे तो अभियुक्तों पर अनेक आरोप थे, जैसे प्रतिबंधित और मार्क्सवादी साहित्य रखना, पढ़ना और दूसरों में बांटना, मीटिंगों का आयोजन करना और उनमें बोलना, लेख लिखना, पत्र निकालना और राजनैतिक पत्र व्यवहार करना, संगठन बनाना और हड़तालें करवा कर तोड़-फोड़ करवाना आदि ढेर सारे। किन्तु मुख्य आरोप था—'मॉस्को में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल नाम का एक खतरनाक अंतर्राष्ट्रीय संगठन है जिसका लक्ष्य है भारत में ब्रिटिश सम्राट् की सत्ता को सशस्त्र क्रांति के ज़रिए उखाड़ फेंकना और यहाँ सोवियत समाजवादी शासन प्रणाली को लागू करना।' ..'इस प्रकार के उद्देश्यों को मद्देनज़र रखते हुए कोई भी काम करना I.P.C. की धारा 121ए के अनुसार अपराधिक मामला बनता है। अत: गिरफ्तार किए हुए ये 31 व्यक्ति दोषी है जिन्हें कठोर सजाएँ दी जानी चाहिए।'

हरेक अभियुक्त के खिलाफ़ किताबों, दस्तावेजों, पत्रों, अखबारी कतरनों, मीटिंगों, उठने-बैठने और मिलने-जुलने से लेकर खुफ़िया रिपोर्टों में दर्ज झूठी मनगढ़न्त कहानियों आदि के सबूतों के पुलंदे के पुलंदे पेश किए गए। मुकदमों को तैयार करते-करते बेचारे एक टी.बी. के रोगी अधिकारी की तो बीच में ही मौत हो गई।

आरोप सं. 4 में डांगे, शौकत उस्मानी और मुजफ्फर अहमद को विशेष रूप से जिम्मेवार ठहराया गया था कि ये भारत में कॉमिन्टर्न की शाखा का गठन करने का षड्यंत्र करने में लगे हुए थे।

अदालत में आरोप लगाने वाले सरकारी वकील का नाटकीय अतिरेक देखने-सुनने लायक था।

मेरठ केस की उल्लेखनीय घटनाओं मे यह भी है कि अभियुक्तों ने लाहौर षड्यंत्र केस के कैदियों की सहानुभूति में सामूहिक भूख हड़ताल रखी और 14 सितम्बर, 1929 को जब उन्हें यह समाचार मिला कि लाहौर केस के क्रांतिकारी अभियुक्त जतीनदास ने भारत के राजनैतिक कैदियों के लिए अनिश्चितकालीन भूख हडताल रखी और आत्मबलिदान देकर सारे देश को आन्दोलित कर दिया, तो उस दिन अदालत की राजनैतिक ट्रायल के काम को अभियुक्तों ने अपनी ओर से स्थगित कर दिया। 'जतीनदास की जय' के नारे लगाए गए और साथ ही उन्हें श्रद्धांजलि दी गई। फिर अदालत में 'लाल झंडा गीत' गूंजने लगा।

16 सितम्बर, 1929 को 'द पायोनियर' ने 'मेरठ अभियुक्तो द्वारा जतीनदास को श्रद्धांजलि'—'अदालत में लाल झंडा गीत' शीर्षक देकर लिखा :

'षड्यंत्र केस के अधिकांश अभियुक्त अदालत कक्ष में 'गोरादमन मुर्दाबाद' 'ब्रिटिश सरकार मुर्दाबाद' के नारे लगाते हुए प्रविष्ट हुए।'

'ज्यों ही वे कटघरे में आए शौकत उस्मानी ने संबोधित करते हुए कहा—'कॉमरेड्स, जतीनदास चल बसे। उन्होंने देश के लिए खुद को कुर्बान कर दिया। हमें उस शहीद को श्रद्धांजलि देनी है और खड़े होकर 'लाल झडा गीत' गाना है।'

इसके साथ सबने जोर से नारा लगाया—'जतीनदास की जय' 'सारे राजनैतिक बंदी जिन्दाबाद।'

'तब शौकत उस्मानी ने कहा—'आज हमें दास की यादगार के रूप मे अदालत की कार्यवाही को स्थगित कराना होगा।'

'ज्यों ही स्पेशल मजिस्ट्रेट मि. मिलनर व्हाइट अपनी कुर्सी पर बैठा, उस्मानी ने जतीनदास की स्मृति में उस दिन कार्यवाही को स्थगित रखने का अनुरोध किया।'

इस पर काफी गरमागरम बहस हुई। अभियुक्तों ने उस्मानी का पुरजोर समर्थन करते हुए दलीलें दी और सरकारी पक्ष ने इसका विरोध किया। जब अभियुक्तों मे से सभी ने उस दिन की बहस का बहिष्कार किया तो अदालती कार्यवाही अगले दिन तक के लिए स्थगित कर दी गई।

इसके बाद मेरठ केस के अभियुक्तों ने पहले अनुरोध किया कि लाहौर केस के बंदियों की मांग पर कार्यवाही की जाय और उस जेल के हालात को सुधारा जाय, क्योंकि जतीनदास के आत्मबलिदान के बाद अब भगतसिंह और दत्त की भी जान भयंकर खतरे में है। यदि हालात को एक सप्ताह के भीतर दुरुस्त नहीं किया गया तो मेरठ केस के बंदी भी भूख हडताल शुरू कर देंगे। यह एक अल्टीमेटम था जिस पर 25 के हस्ताक्षर थे सिर्फ देसाई, झाबवाला, धर्मवीरसिह और मुकर्जी ने हस्ताक्षर नहीं किए। आल्वे और कास्ले ने समर्थन किया और शमसुल हुदा बीमार

थे। मांगपत्र वायसराय को भेजा गया था।

25 सितंबर को मेरठ केस के बंदियों ने भूख हड़ताल चालू कर दी। इससे सारे देश में एक तहलका मच गया। जगह-जगह प्रदर्शनों का तांता लग गया।

अन्य जेलों के राजनैतिक कैदियों ने मेरठ जेल के साथियों का अनुसरण किया जैसे रावलपिंडी और अमृतसर से समाचार आया कि मास्टर मोटासिंह और दूसरों ने भी भूख हड़ताल शुरू कर दी।

सारा देश 'इन्कलाब जिन्दाबाद' और 'साम्राज्यवाद मुर्दाबाद' के नारों से गूंजने लगा। छात्र कालेजों से बाहर निकल आए और मजदूर सड़कों पर आ गए। मेरठ जेल के बाहर झंडों और तख्तियों को लिए हुए हजारों लोगों का बहुत बड़ा हुजूम जमा होकर नारे लगाने लगा।

यहाँ तक कि लंदन में भी प्रदर्शन होने लगे। शीघ्र ही कांग्रेस ने इस मुद्दे को अपना बना लिया और भूख हड़ताल समाप्त करनी पड़ी।

11 जनवरी, 1930 को स्पेशल मजिस्ट्रेट मि. आर. मिलनर व्हाइट ने चौ. धर्मवीर सिंह (यू.पी. के एम.एल.सी.) को छोड़ दिया और 31 बंदियों की प्राथमिक जांच पूरी करके उन्हें दोषी ठहरा दिया गया।

आरोपितों ने 'साम्राज्यवादी न्यायाधीश मुर्दाबाद' का नारा लगाया और न्यायालय का आदेश प्राप्त किया इस आदेश का सार था—'यूरोप में स्थित कम्युनिस्ट इंटरनेशनल ही भारत में ब्रिटिश शासन को समाप्त करने वाले इस मेरठ षड्यंत्र केस का मूल स्रोत है। इन षड्यंत्रकारियों ने इस कॉमिन्टर्न से मिल कर भारत में ब्रिटिश सम्राट् की सत्ता को सशस्त्र क्रांति द्वारा उखाड़ फेंकने की साजिश रची थी। इसके अनेक प्रमाण मौजूद हैं जो सिद्ध करते हैं कि ये अपराधी हैं।'

यह एक बहुत विस्तृत न्यायालय निर्णय था जिसमें यह दर्शाया गया था कि षड्यंत्रकारी न केवल कॉमिन्टर्न के निर्देशों का पालन करते हुए बाहरी हथियारों की मदद से सत्ता पर कब्जा करने की कोशिश कर रहे थे, अपितु इसके पश्चात् इस देश में सर्वहारा तानाशाही लाकर समाजवाद की स्थापना के लक्ष्य को भी प्राप्त करना चाहते थे। इस साजिश में विशेष भूमिका तो एस.ए. डांगे, मुजफ्फर अहमद और शौकत उस्मानी की ही थी, किन्तु अन्य यहाँ के अभियुक्त कम्युनिस्ट और ब्रिटेन से आए कम्युनिस्टों का भी पूरा-पूरा सहभागित्व था।

जेल में सभी साथियों में पारिवारिक संबंध-सा कायम था। उन्होंने एक समिति गठित की थी जिसकी मार्फत मीटिंगें होती रहती थीं। अनेक समस्याओं पर बहस होती थी। सांस्कृतिक कार्यक्रम भी चलते रहते थे। व्यवस्था संबंधी निर्णय भी लिए जाते थे। वॉलीबाल और इन्डोर गेम्स भी चलते थे। साथ ही अध्ययन कक्षा भी। आपसी हँसी-मजाक से सजीवता बनी रहती थी। इन कार्यक्रमों में दूसरे बंदी, सफाई कर्मचारी और धोबी भी भाग लेते थे।

लेकिन इस हकीकत को क्षणभर के लिए भी नहीं भुलाया जा

न ही दृष्टि ओझल किया जाना चाहिए कि मेरठ षड्यंत्र केस के समय में देश तीव्रतर राजनैतिक तूफान से विक्षुब्ध था। यह राष्ट्रीय संघर्ष का दूसरा दौर चल रहा था। जन-मानस उद्वेलित-उत्तेजित हो चुका था।

चारों ओर क्रांतिकारी सशस्त्र विद्रोह की आग लगा रहे थे जिससे प्रशासन तंत्र थर्राने और बौखलाने लगा था। मजदूरों की हड़तालों का हल्ला बोल गूंज रहा था। कलकत्ते की गाड़ीवालो की हड़ताल में हडतालियों ने सेना और पुलिस से अविस्मरणीय जंग छेड दी थी और चटगाँव में शस्त्रागार पर हमले की उस घटना ने लोगों में विशेष तौर पर युवा वर्ग में विद्युत लहर प्रवाहित कर दी थी जिसमें नौजवान लड़कियों ने अहम भूमिका निभाई थी। सबसे संवेदनशील आवेग था लाहौर षड्यंत्र केस का जिसके अभियुक्तों के लिए फांसी के तख्तों की मरम्मत की जा रही थी और रस्सों का बार-बार परीक्षण किया जा रहा था। उबाल चरम बिन्दु तक पहुँच रहा था। मेरठ केस आग में घी का काम कर रहा था। किन्तु कांग्रेसी नेतृत्व ठंडे छींटे देकर समझौतापरस्ती की छायातले भुलावा देने में लगा हुआ था—क्योंकि उन्हें 'लाल खतरा' दिखाई देने लगा था।

इसी दौरान मोतीलाल नेहरू का निधन हो गया।

23 मार्च, 1931 को भगतसिह, सुखदेव और राजगुरु को फांसी पर लटकाया गया जब यह समाचार मेरठ केस के वंदियों को मिला तो अदालत मे घुसते ही उन्होंने जोर से नारे लगाए—'भगतसिंह अमर रहे', 'सुखदेव अमर रहे', 'राजगुरु अमर रहे', 'गोरादमन मुर्दाबाद', और 'इन्कलाब जिन्दाबाद' आदि। जब सेशन जज कुर्सी पर बैठा—उस समय सारे अभियुक्त मौन श्रद्धांजलि दे रहे थे। मौन के बाद उस्मानी ने श्वेत आतंक की इस मर्मवेधी घटना को अतुलनीय दमनकारी कहा और सबने उनका पुरजोर समर्थन किया।

इसके पश्चात् बंदी अभियुक्तों ने बारी-बारी से क्रातिकारी वक्तव्य दिए जिनका सिलसिला कई दिनों तक चलता रहा। शौकत उस्मानी ने कहा :

'मार्क्सवाद-लेनिनवाद से लैस मैं कम्युनिस्ट हूँ। मैं मार्च 1921 में सोवियत संघ में कम्युनिस्ट कतार में शामिल हो गया था। घटनाओ की तार्किक परिणिति ने मुझे यह मार्ग सुझाया। मेरी समझ में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक समस्याओं का तथा असमानता, मनुष्य द्वारा मनुष्य के निर्मम शोषण का, और औपनिवेशिक गुलामी का समाधान बिना कम्युनिज्म के संभव नहीं हो सकता।'

'मैं हिजरत आन्दोलन के बहाने रूस गया था। वहाँ मैने समाज के क्रातिकारी परिवर्तनों को स्वयं देखा और तभी से यह आदर्श मेरे भीतर समा गया। मैंने वहाँ की प्रत्येक वस्तु की जांच-पड़ताल की, अध्ययन किया, सोचा और आखिर मैं कम्युनिस्ट बन गया।'

इसके बाद उस्मानी ने पूंजीवाद के अन्तर्विरोधो की विस्तार से व्याख्या प्रस्तुत की और उसके पतन के सुनिश्चित भविष्य की ओर संकेत किया।

उस्मानी ने 1923 में भारत आने, कानपुर षड्यंत्र केस में गिरफ्तार किए जाने का विवरण प्रस्तुत किया। उक्त केस के बाद की स्थितियों, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का समग्र चित्र शब्दांकित कर दिया। अपने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दायित्वों की घोषणा करते हुए उस्मानी ने यह स्वीकार किया कि भारत से उपनिवेशी शासन को उखाड़ फेंकना उनका प्राथमिक लक्ष्य और कर्त्तव्य है। इसी परिप्रेक्ष्य में उन्होंने अपनी गतिविधियों का औचित्य सिद्ध किया।

अपने विस्तृत बयान का समाहार करते हुए उन्होंने कहा—'हमने न तो किसी प्रकार का षड्यंत्र किया है और न ही हमें इस सत्ता को उखाड़ने के लिए किसी प्रकार के षड्यंत्र करने की आवश्यकता थी। साम्राज्यवाद ने स्वयं अपने विनाश की पूर्वशर्तों का निर्माण कर लिया है। जिसे षड्यंत्र कहा जाता है वह तो खुद ब्रिटिश उपनिवेशवाद औपनिवेशिक विश्व की क्रांतिकारी शक्तियों, सोवियत संघ और कॉमिन्टर्न के विरुद्ध करता चला जा रहा है। हमें तो उसने अपनी रक्तपिपासा को शांत करने के लिए कटघरे में ला खड़ा किया है। लेकिन मैं इन पूंजीवादी दरिन्दों को चेतावनी दे रहा हूँ कि यह जनाक्रोश का ज्वार रुकने वाला नहीं है, वह निरंतर बढ़ता ही चला जायगा जब तक कि कम्युनिस्ट व्यवस्था की स्थापना न हो जाय।'

न्यायाधीश ने इस आरोप को भी सही मान लिया कि उस्मानी कॉमिन्टर्न की छठी कांग्रेस में भाग लेने के लिए मॉस्को में 'सिकन्दर सूर' नाम से प्रकट हुए थे। लेकिन हकीकत यह थी कि उस्मानी उस समय उस्मानी ही थे—वे 'सिकन्दर सूर' दिसंबर 1928 तक ही बने रहे थे।

मेरठ केस के चलते दौर में ब्रिटेन की कम्युनिस्ट पार्टी ने शौकत उस्मानी को यू.के. के आम चुनाव के लिए दुबारा 'मेरठ बंदी उम्मीदवार' के रूप में प्रस्तावित कर दिया। अपने साथी बंदियों के सहमतिपूर्ण अनुरोध को मान कर उस्मानी ने हैरी पॉलिट द्वारा प्रेषित प्रस्ताव की स्वीकृति का तार इस रूप में भेजा—'राष्ट्रीयतावादी फासिस्ट तानाशाही, श्रमिक सुधारवादी धूर्तता, साम्राज्यवादी गोलमेज साजिशों के खिलाफ संघर्षशील कम्युनिस्ट पार्टी के लिए मेरे द्वारा उम्मीदवार होने की स्वीकृति' इसके साथ ही उस्मानी ने चुनाव अभियान के लिए जमानत की अर्जी भेज दी। इस अर्जी को जज ने यह दलील देकर खारिज कर दिया कि जिस प्रकार के आरोपों के आधार पर उस्मानी पर केस चल रहा है—उसे चुनाव के बहाने ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ प्रचार अभियान चलाने का अवसर नहीं दिया जा सकता।

उपर्युक्त चुनाव में निम्नांकित उम्मीदवार खड़े थे—'(1) सर अल्फ्रेड बैट (कंजर्वेटिव) (2) एच.जी. रोमेरिल (लेबर) और (3) शौकत उस्मानी (कम्युनिस्ट)।' ('स्टेट्समैन' दिनांक 30.10.31 में प्रकाशित समाचार के अनुसार)

मेरठ केस के अभियुक्तों के पक्ष में मार्च 1932 में बचाव पक्ष की ओर से गवाहों में सुप्रसिद्ध श्री सी.एफ. एंड्रयूज, एन.एम. जोशी और सदानंद उपस्थित हुए। इस प्रकार इस केस का अगला दौर चालू हुआ। इसमें कानूनी स्तर पर अभियुक्तों

ने अपने स्पष्टीकरण प्रस्तुत किए जो दिनांक 18 मार्च, 1932 से 16 जून, 1932 तक चलते रहे। सबने सारी बातें निर्भय साफगोई के साथ सामने रखी।

इसके पश्चात् सरकारी प्रवक्ता ने सारे आरोपो, बयानों, गवाहियों, सफाइयों आदि को समेकित करके निचोड़ निकाला और 16 अगस्त, 1932 तक उसका उपसंहार किया।

अब एडिशनल सेशन्स जज को फैसला तैयार करके उसको सुनाना बाकी रह गया था। इसके लिए उसने साढे तीन महीनों की अवधि तय की। अभियुक्तो के सामने इस अवधि के लिए अल्मोड़ा जेल मे स्थानांतरित करने का प्रस्ताव रखा गया ताकि वे अपने क्षतिग्रस्त स्वास्थ्य की भरपाई कर सकें। उस्मानी और कुछ साथी सरकारी सुविधा का उपभोग करना ठीक नहीं मानते थे। इसलिए उन्होंने इसका विरोध किया। लेकिन अन्य बहुत से अभियुक्तों ने इस प्रस्ताव पर सहमति व्यक्त कर दी। आखिर बावजूद विरोध के बहुमत की बात मानकर बंदियों को अल्मोडा जेल भेज दिया गया। उन्होने (उस्मानी ने) भूख हड़ताल कर दी जो अल्मोडा जेल में भी जारी रही, इससे वे फिर आँत की भयानक खराबी के शिकार हो गए।

अल्मोड़ा जेल से आँत की बीमारी के डाक्टर के पास उस्मानी को मुजफ्फर नगर के जेल अस्पताल में लाया गया। सर्जन ने चिकित्सा मे रुचि ली और इलाज कामयाब हो गया। फिर वे मेरठ जेल भेज दिए गए।

16 जनवरी, 1933 को अर्थात् साढे तीन महीने की निर्धारित अवधि की बजाय ठीक 5 माह बाद जब सेशन जज फैसला तैयार करके अदालत में आया तो अभियुक्त भी उस फैसले को सुनने के लिए उपस्थित थे जिसका उन्हे पहले से ही अनुमान हो चुका था। फैसला इस प्रकार था—

32 में से धर्मवीर सिंह को केस के शुरू में ही छोड़ दिया गया था। बाकी 31 में थेंगडी का निधन हो गया और जिन तीन को दोषमुक्त कर दिया गया, वे थे—के.घोष, बी. मुकर्जी और एस. बनर्जी। बाकी सजाएँ इस प्रकार थीं—

मुजफ्फर अहमद—उम्रभर काला पानी

डांगे, घाटे, स्प्रैट, जोगलेकर और निम्बकर—12 साल काला पानी

ब्रैडले, मिराजकर और शौकत उस्मानी—10 साल काला पानी

सोहन सिंह जोश, अब्दुल मजीद और गोस्वामी—7 साल काला पानी

अयोध्याप्रसाद, अधिकारी, पी.सी. जोशी और एम.जी. देसाई—5 साल काला पानी

चक्रवर्ती, बासक, हचिन्सन, मित्रा, झाबवाला और सहगल—4 साल काला पानी

शमसुल हुदा, आल्वे, कास्ले, गौरी शकर और कदम—3 साल सख्त कैद

इस केस के तैयार करने में 16 लाख रुपए खर्च हुए।

फैसले के मजमून में उसी भाषा और विषयवस्तु की पुनरावृत्ति थी जो आरोपण

के प्रारूप में अंकित की जा चुकी थी। 'रूस में कॉमिन्टर्न,' 'षड्यंत्र', 'सशस्त्र क्रांति' आदि शब्दों का बार-बार प्रयोग किया गया था।

3 अगस्त, 1933 को शौकत उस्मानी को आगरा जेल भेज दिया गया। एक रोज जोगेश बाबू ने आकर समाचार दिया कि उनकी 10 साल की सजा घटा कर 3 साल कर दी गई है और उन्होंने छिपाकर लाए हुए अखबार को सामने रख दिया।

आगरा जेल की विशेषता यह थी कि वहाँ सभी कर्मचारी राजनैतिक बंदियों के प्रति सहानुभूति रखते थे। वहाँ न तो सांप्रदायिकता का भाव था और न ही पराएपन की मनोवृत्ति। भाईचारे का व्यवहार सबके लिए सुखद प्रतीत होता था।

दिनांक 3.8.33 को फैसला इलाहाबाद उच्च न्यायालय के सुपुर्द कर दिया गया। उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों की ओर से दायर अपीलों (हचिन्सन और शौकत उस्मानी ने अपील नहीं की थी फिर भी उनका केस सभी के साथ मिलाकर वापिस परखा गया) और अभियुक्तों के सद्व्यवहार पर पुनरीक्षण किया और अपना फैसला इस प्रकार दिया—

अंग्रेजी वर्णक्रमानुसार सूची	सजा का विवरण
1. अब्दुल मजीद	एक साल सख्त कैद
2. आल्वे	दोषमुक्त
3. अयोध्याप्रसाद	फिलहाल नज़रबन्द
4. ब्रैडले	एक साल सख्त कैद
5. डी. गोस्वामी	एक साल सख्त कैद
6. जी. चक्रवर्ती	छः माह
7. जी. अधिकारी	फिलहाल नजरबन्द
8. गौरीशंकर	दोषमुक्त
9. गोपालचन्द्र बासक	फिलहाल नज़रबन्द
10. जी.आर. कास्ले	दोषमुक्त
11. के.एन. जोगलेकर	एक साल सख्त कैद
12. के.एन. सहगल	दोषमुक्त
13. एच.एल. हचिन्सन	दोषमुक्त
14. एल.आर. कदम	दोषमुक्त
15. एम.जी. देसाई	दोषमुक्त
16. मुजफ़्फ़र अहमद	तीन साल सख्त कैद
17. फिलिप स्प्रैट	दो साल सख्त कैद
18. पी.सी. जोशी	फिलहाल नज़रबन्द
19. आर.एस. निम्बकर	एक साल सख्त कैद
20. आर.आर. मित्रा	दोषमुक्त
21. शौकत उस्मानी	तीन साल सख्त कैद

22. एस.ए. डांगे	तीन साल सख्त कैद
23. एस.वी. घाटे	एक साल सख्त कैद
24. एस.एस. मिराजकर	एक साल सख्त कैद
25. सोहनसिंह जोश	एक साल सख्त कैद
26. एस.एच. झाबवाला	दोषमुक्त
27. शमसुल हुदा	फिलहाल नज़रबन्द

शौकत उस्मानी और एस.ए. डांगे ही ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें मेरठ केस में बिना एक दिन की भी जमानत लिए सबसे लंबी सजाएँ भुगतनी पड़ीं। मार्च 1929 में कारावास शुरू हुआ और डांगे को मई 1935 और उस्मानी को 1 जुलाई, 1935 को रिहा किया गया।

जेल से छूटने से कुछ दिन पहले उस्मानी का चचेरा भाई मिलने आया था और उसने घर-परिवार के हाल बताए। लेकिन रिहाई के बाद भी उस्मानी अपने घर नहीं जा सकते थे क्योंकि सन् 1927 से उन पर बीकानेर प्रवेश पर लगा प्रतिबन्ध तब तक जारी था। उस्मानी के पास पैसा नहीं था और यह भी समस्या थी कि कहाँ जाएँ। आगरा में साथियों के विशेष अनुरोध पर दो दिनों तक रहे। वहाँ उनका अभिनंदन समारोह भी हुआ। इसके पश्चात् वे कुछ समय तक अपने किसी रिश्तेदार के आग्रह पर अजमेर रहे। यहाँ इस समय उन्हें विश्राम की आवश्यकता महसूस हुई।



मेरठ षड्यंत्र केस के कैदियों में से 25 का जेल के बाहर लिया गया चित्र। पीछे की पंक्ति (बायें से दायें) : के.एन. सहगल, एस.एस. जोश, एच.एल. हटचिंसन, शौकत उस्मानी, बी.एफ ब्राडले, ए. प्रसाद, पी. स्प्रैट, जी. अधिकारी। (मध्यम पंक्ति) : आर.आर. मित्रा, गोपेन चक्रवर्ती, किशोरी लाल घोष, एल.आर. कदम, डी.आर. थांगली, गौरी शकर, एस. बनर्जी, के.एन. जोगलेकर, पी.सी. जोशी, मुजफ्फर अहमद। (अगली पंक्ति) : एम.जी. देसाई, डी. गोस्वामी, आर.एस. निम्बकार, एस.एस. मिरजकर, एस. ए डागे, एस.वी. घाटे, गोपाल बसाक।

भारतीय सुरक्षा कानून (डी.आई.आर.)

अजमेर में एक मीटिंग के सिलसिले में जवाहरलाल नेहरू वहाँ आए। हरिभाऊ उपाध्याय ने उस्मानी को नेहरूजी से अलग से मिलाया। दूसरे दिन जब मजदूर नेता डॉ. मुकर्जी अपने प्रतिनिधिमंडल के साथ नेहरूजी से मिले और अजमेर में ट्रेड यूनियन आन्दोलन शुरू करने की बात की तो नेहरूजी ने तत्काल कहा—'तुम उस्मानी से क्यों नहीं कहते, वह सब कर लेगा।'

इसी दौर में सन् 1937 के अंत में अजमेर में रेलवे वर्कशॉप के एक टेक्नीशियन को किसी गोरे अधिकारी ने ठोकरें मार कर पीटा। इससे चारों तरफ़ उत्तेजना का वातावरण पैदा हो गया। शौकत उस्मानी को मालूम हुआ तो वे भी उद्वेलित हो गए। वे गोरे अफसरों द्वारा फैलाए गए आतंक के माहौल को चीर कर मैदान में उतर आए। तत्काल यूनियन को पुनर्गठित किया गया और रेलवे वर्कर्स ने उस्मानी को बी.बी. एंड सी. आई. रेलवेमैन्स यूनियन का अध्यक्ष घोषित कर दिया। उस्मानी के नेतृत्व में सब प्रकार की दमनात्मक कार्यवाही का दृढ़ता के साथ और सफलतापूर्वक मुकाबला किया गया। उस्मानी को जल्दी ही इस यूनियन का जनरल सैक्रेटरी बनाकर बंबई के मुख्य कार्यालय में भेज दिया गया। कॉ. झाबवाला अध्यक्ष के रूप में काम कर रहे थे।

जो बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है वह यह कि शौकत उस्मानी जहाँ कहीं जिस किसी रूप में रहते, आते-जाते या काम करते, खुफ़िया पुलिस छाया की तरह उनका पीछा करती रहती थी।

सन् 1938 में उस्मानी की सृजनात्मक कृतियाँ 'अनमोल कहानियाँ', (कहानी संग्रह) और 'चार मुसाफिर' (उपन्यास) आगरा से क्रमशः हिन्दी और उर्दू में प्रकाशित हुईं जिन्हें उनके द्वारा मेरठ जेल में रचा गया था। 'जनरल स्ट्राइक' शीर्षक उपन्यास की पांडुलिपि कानपुर में चुरा ली गई। प्रकाशकों ने उस्मानी को कभी कोई पैसा नहीं दिया।

21 अगस्त, 1939 को सोवियत-जर्मन अनाक्रमण संधि पर हस्ताक्षर हुए और उसके तुरंत बाद राजनैतिक क्षेत्र में बहस का बाज़ार गरमा गया। शौकत उस्मानी ने मेरठ षड्यंत्र केस के बयान में विश्व युद्ध के खतरे की ओर संकेत किया था और वह अखबारों में भी छपा था। इसलिए अब उसे लेकर बहुत सारे राजनीतिज्ञों और ट्रेड यूनियन नेताओं ने उस्मानी को बहस का केन्द्र बना दिया। उस्मानी ने दृढता के साथ अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि क्योंकि अंग्रेजों ने सोवियत संघ के शांति प्रस्ताव को ठुकराकर एक भयंकर गलती की है अतः युद्ध की संभावनाएँ तीव्रता के साथ बढ़ गई हैं। उस्मानी के विचार तो कइयों के गले नहीं [illegible]
उनकी प्रतिक्रियाएँ इतनी तेज हुईं कि भारत की अंग्रेजी सरकार की ए[illegible]
ऊपर के तंत्र तक पहुँचा दिया।

यूरोप में युद्ध का खतरा आए दिन बढ़ रहा था। नाजियों ने चैकोस्लोवाकिया पर कब्जा कर लिया। पहली सितम्बर, 1939 को उन्होने पोलेंड की तरफ रुख कर लिया। तीन दिनों में ब्रिटेन और फ्रांस ने जर्मनी के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी और युद्ध फैलने लगा। नाज़ियों ने पोलेंड को धर दबाया। फिर हिटलर ने नार्वे, डेन्मार्क, हॉलैंड, बेलजियम आदि को भी जीत लिया।

भारत की ब्रिटिश सरकार ने 'डिफेंस ऑफ इंडिया रूल्स' (D.I.R.) का अध्यादेश निकाल कर क्रांतिकारियों और कम्युनिस्टों को पकडना चालू कर दिया। इससे आम ट्रेड यूनियन कार्यकर्त्ता पर दहशत का साया मंडराने लगा। आगरा में उस्मानी के प्रयत्न करने पर भी यूनियन का काम आगे नहीं बढ़ पा रहा था। वे ज्यादा से ज्यादा यही कर सकते थे कि स्टडी सर्किल चलाना जारी रखा जाय जो वे कर रहे थे। इसमें अनेक छात्र भी भाग ले रहे थे जिनमें कुछ तो आगे चलकर अच्छे नेता बन गए। स्टडी सर्किल के साथ ही उस्मानी ने इन्हीं दिनों कुछ कहानियाँ लिखीं जो 'एशिया' और 'सैनिक' पत्रों में छपीं। फिर उन्होने उस 'राष्ट्रीय सप्ताह' की मीटिंगों में भी भाग लिया जिसमें लाला लाजपतराय की आग उगलने वाली बेटी उत्तेजनापूर्ण भाषण देती थी। उस्मानी भी अपनी उद्वेलित भावनाओं का इजहार करते थे।

इस प्रकार की स्थितियों ने मिलकर एक ऐसी भूमिका पैदा कर दी थी कि 14 जुलाई, 1940 को सुबह आगरा में शौकत उस्मानी को गिरफ्तार कर लिया गया। जो संदूक पीछे छूट गया, उसे बाद में किसी ने नहीं लौटाया।

जेल में कुछ पुराने वार्डर थे जो चोरी-छिपे उर्दू के अखबार भेज देते थे। वैसे वे एकाकी अपनी कोठरी में घुटन महसूस करते रहते थे।

एक माह बाद उनके मित्र रमण शास्त्री को लाया गया और उसके बाद दूसरे कई इसी अभियोग मे गिरफ्तार बन्दी लाए जाते रहे। अब सबको बैरक नं. 26 में रख दिया गया। इस समय राजनैतिक कैदियों के लिए आगरा एक कंसंट्रेशन कैंप बन गया था। सन् 1940 के नवम्बर तक यू.पी. के सभी बंदी आ गए थे। बाद में सबको राजस्थान के सबसे गर्म स्थान देवली में बदल दिया गया। अब करीब 25 राजनैतिक बंदी हो गए थे।

जेल में इस दौरान उन्हें दो बार भूख हड़ताल करनी पड़ी। पहली बार तो अस्पताल में चिकित्साधीन एक बंदी के साथ मारपीट के विरोध में और दूसरी बार गाँधीजी की 21 दिन की भूख हड़ताल के समर्थन और सहानुभूति में। देवली में क्रांतिकारियों और राष्ट्रवादियों का एक ग्रुप था तो दूसरा कम्युनिस्टों और उनके सहानुभूतों का।

जब जर्मनी ने सोवियत यूनियन पर हमला किया तो जेल के बंदियों में फिर दो ग्रुप हो गए। एक सोवियत संघ के पक्ष में और दूसरा सोवियत संघ के विरोध और जर्मनी के पक्ष में। उस्मानी और कम्युनिस्ट सोवियत पक्षधर थे। वे 'पीपुल्स वार ग्रुप' के थे। लेकिन उस्मानी और कम्युनिस्टों मे यह अंतर था कि उस्मानी सोवियत संघ में जा कर नाजियों के खिलाफ़ मोर्चे में लड़ने के हामी थे।

इधर देश की तनावपूर्ण स्थिति को मद्देनजर रखते हुए बंदियों को देवली से पंजाब, यू.पी. और बिहार आदि की जेलों में अदला-बदली करके भेजा जा रहा था। सारा वातावरण राजनैतिक सरगर्मियों से उबलने लगा था। सन् 1942 का तो माहौल ही कुछ और था। देश की धड़कनें बढ़ चली थीं जिसे न तो कांग्रेस पूरी तरह समझ पा रही थी और नहीं कोई अन्य दल। गाँधीजी भी असमंजस में थे। दूसरी ओर जनाक्रोश को दबाने के लिए साम्राज्यवादी दमनचक्र तेजी से चलने लगा था, लेकिन प्रशासकीय ढांचा चरमराने लगा था। गाँधीजी ने दो साल पहले जिस सामूहिक सत्याग्रह की जगह व्यक्तिगत सत्याग्रह करने का निर्देश दिया था—अब वह उन्हें स्वयं ही अप्रभावकारी दिखाई दे रहा था।

बरेली जेल अपने आप में एक अभिशाप थी। वहाँ प्राय: कुख्यात अपराधियों को दंड देने के लिए भेजा जाता था। 19 मार्च, 1942 को न्यायाधीशों का एक ट्रिब्यूनल बंदियों के मामलों में जांच करने के लिए बरेली भेजा गया। सबसे पहले उस्मानी के बारे में जांच शुरू हुई। ट्रिब्यूनल का रुख उनके बारे में पूर्वाग्रहपूर्ण और प्रतिकूल था। ट्रिब्यूनल का एक न्यायाधीश बंबई का था और दूसरा एक आई.ए.एस. व्यक्ति। पहला प्रश्न था—'क्या तुम्हें कानपुर बोल्शेविक षड्यंत्र केस और मेरठ कम्युनिस्ट केस में सज़ा दी गई थी?'

'उन मामलों का इससे संबंध?' रूखेपन से उस्मानी ने प्रतिप्रश्न किया। इस पर दोनों क्रुद्ध हो गए। अगला प्रश्न था—'अगर तुम्हें रिहा कर दिया जाय तो तुम आगे क्या करोगे?'

'मैं सोवियत संघ के समर्थन में लेख लिखूँगा और देश की आज़ादी के लिए लड़ूँगा। मैं दूसरे दशक से ही फासिज्म और साम्राज्यवाद का कट्टर विरोधी रहा हूँ।' और इसके साथ ही पूछताछ समाप्त हो गई। इसका परिणाम यही होना था कि उस्मानी की रिहाई की सिफ़ारिश नहीं की जायगी और वह नहीं की गई।

24 जून, 1942 को उस्मानी और कुछ अन्य साथी बंदियों को बरेली जेल से बदल कर फतहगढ़ जेल में भेज दिया गया। सरकारी पक्ष की नज़र में शौकत उस्मानी एक हिंसक क्रांतिकारी थे जिन्हें 'आतंकवादी वर्ग' में गिना जाता था, यद्यपि उस्मानी ने कभी किसी पर हाथ नहीं उठाया–अलबत्ता आग उगलते भाषण अवश्य दिए थे अथवा प्रतिक्रांतिकारियों से केरकी का बचाव भी किया था। 'ईंट का जवाब पत्थर से देने' की बात वे अक्सर कहते थे।

फतहगढ़ जेल में उस्मानी को एच.एस.आर.ए. (हिन्दुस्तानी सोश. रि. एसो.), आर.एस.पी.आई. (रिवोल्यू. सोश. पा. ई.), सी. एस. पी. (कांग्रेस सो. पा.) और आर. सी. पी. आई. (रिवोल्यू. क. पा. इंडिया) के कतिपय साथी फिर से मिल गए। इस बार यहाँ भारतीय क्रांतिकारी आन्दोलन से जुड़े प्रमुखतम नेता फिर से एक जगह पहुँचा दिए गए थे। इनमें फार्वर्ड ब्लॉक के जनरल सैक्रेटरी श्री विश्वंभर दयाल त्रिपाठी, सी. एस. पी. के महान नेता मनमथनाथ गुप्त, आर. एस. पी. के

केशवप्रसाद शर्मा और सुशीलचन्द्र भट्टाचार्य, काकोरी और लाहौर केस के राजकुमार सिन्हा, विजयकुमार सिन्हा और सी. एस. पी. के ठाकुर मलखान सिंह और सोमेन्द्रनाथ टैगोर आदि सम्मिलित थे।

9 अगस्त, 1942 का 'भारत छोड़ो' आन्दोलन सारे देश की जनता का आन्दोलन बन चुका था। इसमें सभी जातियों और संप्रदायों के लोग शामिल हो चुके थे। जगह-जगह जुलूसों पर दमनचक्र चलाया जा रहा था। महिला सत्याग्रहियों के दल के दल इस संघर्ष में कूद पड़े थे। जेल में उस्मानी और अन्य बंदी भी अपने तरीके से आन्दोलन की भूमिका अदा कर रहे थे। इस पर जेल के अधिकारियों ने बंदियों के साथ और भी अधिक सख्ती का बर्ताव चालू कर दिया। सन् 1943 की उस घटना का जिक्र कर दिया गया है जब गाँधीजी के 21 दिन की हड़ताल की सहानुभूति में जेल के 35 बंदियों ने 16 दिन तक सामूहिक भूख हड़ताल रखी। उनमें उस्मानी भी थे। इन्हे अस्पताल भेजकर भूख हड़ताल खत्म करने के लिए उनके साथ जोर-जबरदस्ती की गई लेकिन अधिकारियों को सफलता नहीं मिली।

इन उपर्युक्त जेल के नियमों का, भूख हडताल द्वारा उल्लंघन करने की वजह से पैदा की गई अनुशासनहीनता पर अग्रांकित को 6 माह की सख्त कैद की सजा सुनाई गई :-

1. बाल गंगाधर त्रिपाठी 2. बृजनंदन ब्रह्मचारी 3. (कमांडर) रिशालसिंह 4. गंगासहाय चौबे 5. श्रीकान्त 6. कृष्णशंकर श्रीवास्तव 7. मनमोहन गुप्ता 8. रामशरण विद्यार्थी 9. रामदुलारे उपाध्याय 10. शौकत उस्मानी 11. शिवचरण राय 12. ठाकुर चरणभान सिंह 13. विश्वम्भरदयाल त्रिपाठी।

4 माह की सख्त कैद की सजा

1. बसंत कुमार बनर्जी 2. ठाकुर हरचनसिह 3. केशवप्रसाद शर्मा 4. केदारनाथ मालवीय 5. किशोरचन्द आजाद 6. मनमथनाथ गुप्त 7. मोहित कुमार बनर्जी 8. नित्यानन्द तिवाड़ी 9. रामेन्द्र नाथ तिवाडी 10. रमेशचन्द्र अस्थाना 11. रूपनारायण पांडे 12. राजकुमार सिन्हा 13. सत्यनारायण 14. सत्येन्द्रनाथ बनर्जी 15. श्यामकृष्ण दुबे 16. सुशीलचन्द्र भट्टाचार्य 17. वीरेन्द्रनाथ पांडे 18. वीरेन्द्रनाथ वर्मा 19. विजयकुमार सिन्हा 20. रामगोपाल गुप्ता 21. महेश केदारनाथ आर्य 22. चन्द्रमौली अवस्थी-दोषमुक्त किया।

इन सब अभियुक्तों को 'सी' क्लास के कपड़े दिए गए जिनमें बिना बटन के आधी बाहों वाले कमीज थे। जूते नहीं दिए गए। गंदा बिछावन था और मूंज बंटने का काम करवाया गया। 6 माह बाद 21 अगस्त, 1943 को उस्मानी को वापिस बैरक में भेज दिया गया। वहाँ उन्हें बागवानी का काम दिया गया। 28 अप्रैल, 1944 को उन्हें चार्जशीट दी गई जिसका जवाब देना था।

चार्जशीट मे लिखा था-'शौकत उस्मानी, तुम्हें सूचित किया जाता है कि तुम्हारी गिरफ्तारी का आधार तुम्हारे द्वारा कानूनसम्मत सरकारी व्यवस्था को छिन्न-भिन्न

करके अराजकता पैदा करना है जिससे सुरक्षा प्रभावित होती है।'

उस्मानी ने अपने जवाब में जो लिखा उसका सारांश इस प्रकार है—'ब्रिटेन के श्रमिक वर्ग द्वारा मेरे में अपना विश्वास व्यक्त करना इस बात को प्रमाणित करता है कि मैं हमेशा पक्का फ़ासिस्ट विरोधी हूँ और लोकतांत्रिक सिद्धांतों में मेरा दृढ विश्वास रहा है। ...मैं सन् 1929 और 1931 में यू.के. के संसदीय आम चुनावों में ब्रिटेन के श्रमिकों की ओर से उम्मीदवार बनाया गया हूँ।'

'मैंने सोवियत संघ की सेनाओं के साथ मिलकर जर्मनी के खिलाफ़ लड़ने का अनुरोध किया था जिसे दुर्भाग्यवश अस्वीकार कर दिया गया।'

इस पर 30 जून, 1944 को यू.पी. के होम सैक्रेटरी ने जवाब दिया कि सरकार ने तुम्हारे जवाब पर विचार करके निर्णय लिया है कि जिस आदेश के तहत तुम्हें गिरफ्तार किया गया है उसे बरकरार रखा जाय।

उस्मानी को 24 अगस्त, 1944 को दुबारा बरेली सेंट्रल जेल में बदल दिया गया। यहाँ आने पर उन्हें जेल में अनेक कांग्रेसी बंदी साथी मिले जिनमें कानपुर के प्रसिद्ध कवि और पत्रकार बालकृष्ण शर्मा, आगरा के कृष्णदत्त पालीवाल जो हिन्दी के पत्र 'सैनिक' के संपादक भी थे, शत्रुघ्न कुमार, बी.एन. राय तथा मुबारक मज़दूर आदि प्रमुख थे।

'भारत छोड़ो' आन्दोलन 1944 के अंत तक चला। कांग्रेस ने मुस्लिम लीग को मुसलमानों का प्रमुख प्रवक्ता स्वीकार कर लिया था। एक प्रकार से यह विभाजन को स्वीकार करने की ही भूमिका थी।

8 जनवरी, 1945 को शौकत उस्मानी को रिहा कर दिया गया जिन्हे 14 जुलाई, 1940 को गिरफ्तार किया गया था।

इस समय कांग्रेस पर प्रतिबंध था और वह 'कांग्रेस कौंसिल' नाम से विरोधी पार्टी की भूमिका अदा कर रही थी। दूसरी पार्टियों पर भी प्रतिबंध था। उस्मानी ने 'कांग्रेस कौंसिल' में मजदूर विभाग के प्रभारी के रूप में काम करना स्वीकार कर लिया। आगरा में पहले वे शिरोमणि भाइयों के निवास स्थान पर रहे और बाद में 'मोतीलाल स्मारक भवन' मे।

उन्होंने नगर की श्रमिक समस्याओं का अध्ययन करना शुरू किया ही था कि यू.पी. के गवर्नर हैल्लेट द्वारा हस्ताक्षरित नोटिस दिया गया कि उन्हें अगले 48 घंटों में यू.पी. से निष्कासित होकर कहीं अन्यत्र जाना होगा।

खाली जेब। कहीं कोई काम मिलने के आसार नहीं। कोई हैरो या ऑक्सफोर्ड या कैम्ब्रिज की ऊँची योग्यता का प्रमाण पत्र नहीं कि कहीं नियुक्ति मिल जाय। वे तो पत्रकार और सर्वहारा लेखक थे जिनकी मांग करनेवाला कोई राज्य नहीं था।

उदासी के माहौल में वे पुनर्वास के बारे में सोचने लगे। बीकानेर, जहाँ जन्म हुआ, जहाँ घर-परिवार है? नहीं, वहाँ तो उनके प्रवेश पर प्रतिबंध है। आखिर उन्होंने अजमेर में गौरीशंकर भार्गव की पत्नी माता गोमती देवी को तार दिया और लिखा

उत्तर की प्रतीक्षा किए वहाँ के लिए रवाना हो गए।

माताजी के पुत्र रमेशचन्द्र भार्गव ने उनके लिए उसी परिवार द्वारा प्रदत्त सार्वजनिक आवास में उनके रहने की व्यवस्था कर दी। लेकिन वे वहाँ से जल्दी ही बंबई चले गए।

शोध, संवेद, संवाद एवं इति

फरवरी 1946 के तीसरे सप्ताह में इतिहास प्रसिद्ध 'नौसैनिक विद्रोह' की घटना घटित हुई। विद्रोह सारे बंदरगाहों में फैल गया। बंबई के लिए यह बहुत रोमांचकारी कालखंड था। विशेष बात यह थी कि सशस्त्र पुलिस के आदमी दीवारों के ऊपर से अपनी खाद्य वस्तुएं 'नौसैनिक विद्रोहियों' को पहुँचा रहे थे। इस अभूतपूर्व यथार्थ ने सबका ध्यान अपनी ओर खींच लिया था। उधर भिंडी बाजार और दूसरे क्षेत्रों से इतने सधे हुए पत्थरों की बौछारें आ रही थीं कि ब्रिटिश सिपाहियों का टिक पाना असंभव हो रहा था। इससे उस्मानी को भारत में अंग्रेजी राज्य के अवसान का आभास होने लगा।

इसी साल सितंबर में 'नेशनल सीफेयरर्स यूनियन, बबई', के वे जनरल सैक्रेटरी निर्वाचित हुए और आर.एस.पी. में शामिल होने की स्वीकृति दे दी लेकिन पार्टी के सोवियत विरोधी रुख के कारण उनकी नहीं निभ सकी।

एक तरफ केन्द्र में कांग्रेस के नेतृत्व में अंतरिम सरकार बनी और दूसरी तरफ 'मुस्लिम लीग' ने 'सीधी कार्यवाही' की घोषणा कर दी। फिर सांप्रदायिक दंगों की आग भड़क उठी जिसने इतिहास को भयंकरतम हिंसा, बलात्कार और लूटपाट की घटनाओं के काले पृष्ठ देकर कलंकित कर डाला।

उस्मानी बंगाल चले आए और विभाजन के विरोध में मीटिंगें लेने लगे। उन्होंने विभाजन के पीछे दोनों संप्रदायों के शोषक वर्ग का हाथ बताया। उनके बयान 'अमृत बाजार पत्रिका' में छपे और कइयों ने उनका समर्थन भी किया। लेकिन आखिर जब कांग्रेस ने भी विभाजन को मंजूर कर लिया तो 14 अगस्त, 1947 को देश का विभाजन हो गया। इससे उस्मानी की सभी आशाओं पर पानी फिर गया।

आर.एस.पी. के कॉमरेड मूसा मल्ल के प्रस्ताव की स्वीकृति के तहत उस्मानी पहले कराची गए और वहाँ से मूर्रा और फिर जम्मू और लांडीखाना चले गए। वे हिन्दुओं, सिखों, सिंधियों और पठानों से मिले। उन्हें अनुभव हुआ कि आम आदमी की भावनाओं को देश के विभाजन से भारी ठेस लगी है लेकिन सांप्रदायिक नेताओं ने ऐसा वातावरण पैदा कर दिया था कि देश के पुनरेकीकरण की उस्मानी द्वारा की गई अपील स्थायित्व ग्रहण नहीं कर सकी। पाकिस्तान मे गुलाम मौहम्मद ने उनसे उपमंत्री बन कर वहीं की नागरिकता ग्रहण करने का अनुरोध किया, किन्तु

उस्मानी ने भारत की नागरिकता छोड़ने की बात स्वीकार नहीं की।

उस्मानी ने वापिस भारत आने की अनुमति चाही जो उन्हें नहीं मिली तो वे कराची से लंदन रवाना हो गए और 7 सितंबर, 1952 को लंदन पहुँच गए।

वैसे तो लंदन देखते ही आकर्षक लगता है, लेकिन उस्मानी का विशेष रूप से ध्यान आकर्षित किया ब्रिटिश म्यूजियम सैन्ट्रल लाइब्रेरी ने। यदि उनके पास अधिक पैसा होता या कोई स्थायी काम मिल जाता तो वे वहाँ लंबे अर्से तक रहना चाहते थे। लेकिन पास में ओछी रकम होने के कारण 78 दिन के बाद ही वापिस बंबई लौटने की आवश्यकता महसूस हुई।

14 दिसम्बर, 1952 को बंबई पहुँच कर उन्होंने अपनी लंदन की उपर्युक्त संक्षिप्त यात्रा का विवरण लिखा जो बंबई से प्रकाशित 'भारत ज्योति' में छपा।

शौकत उस्मानी ने महसूस किया कि इन्कलाब या सामाजिक क्रांति के लक्ष्य को पूंजीवादी रास्ते ने दूर फेंक दिया है। भीतर के उद्वेलन का मार्गांतीकरण ही एकमात्र विकल्प है। एक रद्दी कागज पर अचानक जो नज़र पडी जिसमें 'खाद्यवस्तुओं द्वारा चिकित्सा' जैसा शीर्षक था। जिज्ञासा जाग उठी, किन्तु पुस्तक नहीं मिली। अनुसंधानवृत्ति ने भावभूमि को आच्छादित कर दिया और उस्मानी के जीवन में एक अभूतपूर्व मोड आ गया।

ढाई साल तक बंबई की एक फर्म में मैनेजर का काम मिला जिसे उन्होंने मार्च 1955 तक किया। उनका उद्देश्य था कि इससे जो कमाई हो उसके जरिए वापिस लंदन जाकर ब्रिटिश म्यूजियम लाइब्रेरी में शोध कार्य किया जाय। कडी मेहनत करके उस्मानी अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल हुए और वापिस लंदन जाने की तैयारी में लग गए।

12 अप्रैल, 1955 को उस्मानी लंदन पहुँच गए। उन्हें वहाँ सुप्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता प्रवासी भारतीय डॉ. के.डी. कुमिरा ने एलिफेन्ट एंड कैसल एरिया में स्थित अपनी इमारत में से एक कमरा नाम मात्र के किराए पर दे दिया।

ब्रिटिश म्यूजियम लाइब्रेरी के पाठकीय टिकट का नवीनीकरण करवारकर उस्मानी शोधकार्य में लग गए। इस अथक संलग्नता ने उन्हें बहुत अच्छे परिणाम दिए और खास तौर से भोजन के माध्यम से वजन कम करने की प्रक्रिया के विषय में।

किन्तु ज्यों ही जेब हल्की होने लगी और अभाव नजदीक आता दिखाई देने लगा उस्मानी फिर निराशा से घिरने लगे। चारों तरफ नजर दौडाने के बाद भी कामयाबी नहीं मिली तो मजबूर होकर उन्होंने कुछ क्लर्की का काम किया और यहाँ तक कि अंशकालीन डाक छांटने तक की मजदूरी की।

जब कोई ताना कसते हुए कहता कि 'तुमने आज़ादी के लिए मर-पच क्या पा लिया?' तो उस्मानी का उत्तर होता था-'सैनिक कभी कुछ पाने के कुर्बानी नहीं देता है, वह कुर्बानी देता है देश की आज़ादी के कहता-'तुम्हारा फलां जेल का साथी मंत्री बन गया है और तुम?'

बननेवालों में कोई भी क्रांतिकारी नहीं रहा। देखते नहीं मौकापरस्तों ने हरेक क्रांतिकारी को धकेल कर आजादी के फल को हड़प लिया!'

उस्मानी कभी किसी मंत्री से नहीं मिले चाहे वह उनका कितना ही निकट का परिचित क्यों न रहा हो।

लंदन में बेरोजगार प्रतिभा को दी जानेवाली मामूली आर्थिक रोज़ी पर गुजारा करते हुए उस्मानी अपने काम की साधना में लगे रहे।

फिर जब ब्रिटेन में आम चुनाव का मौका आया तो उन्होंने अपने इलाके की लेबर पार्टी के पक्ष मे संपर्क स्थापित किए और पार्टी के आग्रह पर लेबर पार्टी की सदस्यता भी स्वीकार कर ली यद्यपि उन्हें उसकी कई दकियानूसी बातों से परहेज था। वे इसकी प्रबंधकारिणी के सदस्य भी चुन लिए गए। लेबर पार्टी के मंच को उन्होंने गोवा मुक्ति आन्दोलन के लिए प्रचार करने के उपयोग में भी लिया। इस विषय में उन्होंने डिस्पैच भेजे और लेख भी, जो लंदन और भारत दोनों के तत्कालीन पत्रों में प्रकाशित हुए। इनमें विशेष रूप से गोवा की स्थिति का विश्लेषण, गोवा आन्दोलन के बंदियों को रिहा करने और गोवा को मुक्त करने के संबंध में थे। गोवा कमेटी और अनेक नेताओं ने इसके लिए उस्मानी के प्रति आभार प्रकट करते हुए उन्हें पत्र भेजे। इनमें फैनर ब्रोकवे, जे. एलेन स्किनर और एंथोनी वैजवुड बेन प्रमुख थे।

लंदन में रहते हुए उस्मानी छटपटा रहे थे कि काश वे गोवा आंदोलन के बंदियों के साथ जेल भोग रहे होते। लंदन मे उस्मानी नितांत नीरस जीवन जी रहे थे। इसका मूल कारण था पैसों की भयंकर तंगी। न सिनेमा देख सकना और न ही अन्य किसी प्रकार के मनोरंजन के कार्यक्रम में भाग ले सकना। सुबह खुद खाना बनाना और फिर 9.30 बजे पैदल ब्रिटिश म्यूज़ियम लाइब्रेरी पहुँच जाना।

अप्रैल 1955 से लेकर फरवरी 1961 तक उस्मानी के जीवन का यही क्रम रहा। इस अर्से में उन्हें अपने द्वारा निर्धारित शोधकार्य को पूरा करने में सफलता प्राप्त हुई जिसके फलस्वरूप उन्होने 'न्यूट्रिटिव वैल्यूज ऑफ फ्रूट्स, वेजीटेबल्स, नट्स एंड फूड क्योर्स (Nutritive Values of Fruits, Vegetables, Nuts & Food Cures) की रचना की।

शौकत उस्मानी को जैसे पाकिस्तान के साथियों और दोस्तों ने पाकिस्तान की नागरिकता ग्रहण करने का आग्रह किया था और उन्होने उसे अस्वीकार कर दिया था वैसे ही लंदन के साथियों और मित्रो ने उन्हें ब्रिटेन की नागरिकता ग्रहण करने का अनुरोध किया, लेकिन उन्होंने उससे भी यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि जिस देश की स्वतंत्रता के लिए उन्होंने इतने कष्ट झेलकर संघर्ष किया अब उसकी नागरिकता को छोड़ देना अपने स्वाभिमान की बलि देना होगा।

स्वंतत्र भारत की सरकार ने स्वंतत्रता संग्राम के अनेक सच्चे-नकली सेनानियों को सुविधाएँ दीं–उस्मानी को नहीं, उसने अपने पत्रकारों और लेखकों को जमीनें

दीं—उस्मानी को नहीं, सरकार ने शोधकर्त्ताओं को अनुदान दिए, डिग्रियाँ हासिल करवाईं—उस्मानी को नहीं। उनके सारे आवेदनों को चाहे वे आवासीय सुविधा के लिए हों अथवा वज़ीफे के रूप में—नौकरशाही द्वारा नकार दिया गया, रद्दी की टोकरी में डाल दिया गया। सरकारी पुस्तकालयों मे उस्मानी की किताबों को घुसने नहीं दिया गया। स्वंतत्रता के लिए लगातार 16 साल तक जेल यातनाएँ भोगने वाले क्रांतिकारी सेनानी शौकत उस्मानी का इतना बड़ा सम्मान किया आजाद हिन्दुस्तान ने। जिन्हें ब्रिटिश हुकूमत अपने सारे हथकंडों से नहीं झुका सकी, उन्हें स्वतंत्र भारत की नौकरशाही कैसे झुका सकती थी। यह तो हुआ ही कि उसने उनके व्यक्तित्व की हत्या करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। सच्चाई की जानबूझ कर उपेक्षा करने से बड़ा हत्या का अपराध और कोई नहीं हो सकता। भारत सरकार के भीतरी तंत्र ने साजिशाना हरकत करके उन्हें बाहर धकेल दिया। संभवत: इसी स्थिति को भोगने को विवश होकर महाकवि निराला ने लिखा था—

'बाहर मैं कर दिया गया हूँ
भीतर पर भर दिया गया हूँ।'

इसका दूसरा पहलू यह भी है कि कोई भी गरिमामय व्यक्ति 'सुख भोगने' का भागीदार होता भी नहीं। कोई ज़हर पीकर मरना मजूर कर लेगा, क्रॉस पर चढ़ाया जायगा, फांसी का झूलना अपना लेगा, गोली खाने को तैयार होगा या और किसी तरह मारा जायगा तो कोई जिन्दगी को ज़हर पी-पी कर जीता रहेगा—पर न रुकेगा, न झुकेगा। यही उनकी नियति है, यही उनका व्यक्तित्व। उस्मानी के ही जन्मस्थान बीकानेर के एक कवि गंगाराम 'पथिक' ने कहा था—

'कशमकश है जिन्दगी में तो सभी कुछ है,
गर कहीं आराम मिल जाता, बुरा होता।'

इसीलिए उस्मानी ने किसी का कोई एहसान सिर पर नही ढोया। वे जिन्दगी भर अजेय रहे।

उस्मानी ने अपने मार्क्सवाद के ज्ञान की अभिव्यक्ति के लिए लंदन मे लेबर पार्टी के मंच का उपयोग किया और वे उसके सदस्य भी रहे जैसा कि उन्होने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के लिए अपनी क्षमता का उपयोग किया। कुछ साथियों से अपने मतभेदों की वजह से यहाँ वे सी.पी.आई. की सदस्यता को कानपुर केस के बाद कई वर्षों तक जारी नहीं रख सके, फिर भी वे सिद्धान्तत: उससे सलग्न रहे।

उस्मानी की अनेक रचनाओं की हस्तलिपियाँ बिना प्रकाश में लाए ही नष्ट कर दी गईं। 'जगदीश' उपन्यास जला दिया गया। 'मजदूर का लड़का' जो उनका पहला उपन्यास था उसे यू.पी. की पुलिस उठा ले गई। 'जनरल स्ट्राइक' को प्रताप प्रेस, कानपुर से गायब कर दिया गया और कहानी संग्रह 'रतना की [illegible] भी यही हाल हुआ। 'ईरान' की हस्तलिपि को बंबई में ब्रेलवी के दफ्तर [illegible] गया।

वे आजन्म आशावादी रहे बावजूद कदम-दर-कदम के अवरोधों के।

उस्मानी इंग्लैंड से वापिस आए। सन् 1962 में चीन द्वारा भारत की सीमा पर किए गए आक्रमण ने एक ओर सारे देश को झकझोर दिया। वैसे चीन और सोवियत संघ का विवाद भी बाद में स्पष्टतया सामने आ गया था। 'हिन्दी चीनी भाई-भाई' का नारा व्यंग्य में डूब गया था और साथ ही भारत में वामपंथ पर हमला भी तेज होने लगा था। कम्युनिस्ट पार्टी में आंतरिक मतभेद इतना तीव्र हो गया था जिसका परिणाम आगे चल कर पार्टी के विभाजन के रूप में सामने आया।

शौकत उस्मानी के लिए उपर्युक्त वातावरण असह्य था अत: वे काहिरा के अनुरोध पर वहाँ पहुँच गए। वे वहाँ 1964 से 1974 तक पत्रकारिता के काम में लग गये। उन्होंने अंग्रेजी पत्र 'अलफतह' में अपनी कुशलता का परिचय दिया। वहीं पर 'इजिपशियन गजट' के संपादक मडल में एक संपादक के रूप में सक्रिय रहे और बंबई के 'फ्री प्रेस जर्नल', दिल्ली के 'रेडियन्स' तथा कलकत्ता के 'कंपास' के संवाद प्रतिनिधि के रूप में और इसके साथ ही अपने सामाजिक-राजनैतिक मूल्यांकन को लेखन की शक्ल में अभिव्यक्त करते रहे।

इस अर्से में वे भारत की गतिविधियों पर भी पूरी तरह नजर रख रहे थे और यहाँ के पत्रों में जो कुछ प्रकाशित होता था उसके विषय में अपनी प्रतिक्रियाएँ अपने साथियों, दोस्तों, संपादको आदि को पत्र व्यवहार के जरिए बताते रहते थे। पारिवारिक सदस्यों से भी उनका पत्र व्यवहार चल रहा था।

काहिरा मे एक बार तो वे दुर्घटनाग्रस्त भी हुए और उन्हें अस्पताल में इलाज करवाना पड़ा, क्योंकि चोट लगने से काफी मात्रा मे खून निकलता रहा।

बीकानेर में ही फरवरी सन् 1975 में शौकत उस्मानी की पत्नी मरियम का 71 साल की उम्र मे देहावसान हो गया।

इसी साल सन् 1974 के अप्रैल माह के तीसरे या चौथे सप्ताह में उस्मानी काहिरा से भारत लौट आए थे। यहाँ वे पुन: भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी में सक्रियता के साथ सम्मिलित हो गए तथा पार्टी के केन्द्रीय कार्यालय 'अजय भवन' में मेरठ केस के अपने बंदी साथी कॉ. जी. अधिकारी के साथ काम मे लग गए।

बीकानेर के नागरिकों, जिले की भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी शाखा तथा अन्य सस्थाओ एवं सगठनो के विशेष आग्रह पर उनके पचहत्तर वर्ष की आयु के प्रारंभिक उपलक्ष में दिनांक 26.9.76 को पहली बार बीकानेर आए जिसे उन्होंने सन् 1920 में छोड़ा था। यहाँ उनका क्रांतिकारी अभिनंदन किया गया। यहाँ उन्होंने अपने बचपन की अनेक स्मृतियाँ दोहराईं और फिर यहाँ से किस तरह निकल भागे इसका भी जिक्र किया। विशाल जनसभा में भारतीय क्रांतिकारियो की भूमिका पर प्रकाश डाला। उसके अलावा एक बार वे पार्टी के चुनाव प्रचार के लिए फिर आए लेकिन वे बीकानेर में दोनों बार एक दिन से ज्यादा नहीं रुके।

26 फरवरी, सन् 1978 की रात को स्वतंत्रता संग्राम के इस सुदृढ सेनानी,

सर्वहारा को शोषणमुक्त करने के लिए अनवरत संघर्षशील, अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त व्यक्तित्व, अनुसंधानकर्त्ता और लेखनी के धनी शौकत उस्मानी ने दिल्ली में अंतिम सांस लेकर विदा ली। शायर की पंक्ति को क्रांतिकारी के जीवन के साथ संदर्भित करके पढ़ा जाय तो यह कहना उपयुक्त होगा—

यह सो रहा है वो, जिसे उम्र भर नींद नहीं आई।'

शौकत उस्मानी ने न कोई जायदाद बनाई, न कोई वसीयत छोड गए अपने पुस्तक भंडार की पुस्तकों को तथा अपनी कुछ रचनाओं को उन्होने अजय भवन स्थित कम्युनिस्ट पार्टी कार्यालय, दिल्ली, गांधी निधि आश्रम, दिल्ली और गुणाकर मुले, पांडव नगर, दिल्ली (उस्मानी पुस्तक प्रकोष्ठ) को भेंट कर दिया।

उस ज़माने मे पदलिप्सा किसी क्रांतिकारी में नही होती थी, महत्त्वपूर्ण था *क्रांतिकारिता के लिए आत्मोत्सर्ग हेतु पहले-पहल अपने आपको प्रस्तुत करना।* इसीलिए वे किसी पार्टी के शीर्षस्थ पदों पर रहने के अनुरोधों का निषेध करते रहे, किन्तु शीर्षस्थ क्रांतिकारी अभियुक्तों में रहे–कष्ट झेलनेवालों की अग्रिम पंक्ति में। दुविधा की स्थिति में वे तत्काल निर्णय लेकर पक्का कदम उठाने में तत्पर रहते थे, जैसे जब मुहाजिरीन काबुल पहुँचे और उनकी समझ में आ गया कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ दृढ़ संघर्ष करने का काबुल का इरादा नहीं है तो तत्काल निर्णय करके उस्मानी ने अपने काफ़िले को 'रूस की तरफ कूच' करने की ओर प्रेरित कर स्वयं उस अभियान की अगुवाई की। ताशकंद में भारतीय वामपथियों के दो गुट थे—भारतीय क्रांतिकारी संघ तथा एम.एन. राय का कम्युनिस्ट गुट। अंत में तय करके उस्मानी ने अपने साथियों को *उस कम्युनिस्ट गुट के साथ सहयोगी बनाया जो क्रांतिकारी* वामपंथी रुझान का था।

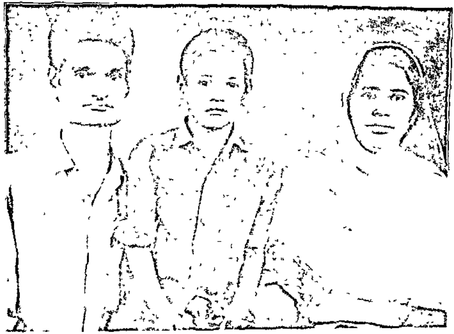
अपने ध्येय के प्रति वे अनन्य भाव से समर्पित थे। अपने परिवार को त्याग कर उन्होंने मुड़कर भी कभी इस ओर नही देखा, यही वजह हो सकती है कि क्रांतिकारी इतिहास का यह समुज्ज्वल व्यक्ति अपनी जन्मस्थली बीकानेर के लिए इतना अजनबी हो गया कि उसके विषय में और अधिक खोज करने की आवश्यकता है। जिन्दगी के आखरी दौर में जब उन्हें यहाँ बुलाया गया तो अपने विषय में उन्होंने अधिक कुछ नहीं कहा, राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय बातें करके बिना विश्राम किए वापिस चले गए।

वे स्वभावतः आत्मनिरपेक्ष रहे, न प्रशंसा की अपेक्षा और न सम्मान प्राप्ति की आकांक्षा। आजादी और बदलाव के लिए हर प्रकार की यातना झेलना उनका प्रेय था। श्रेय की बात करना उन्हें अखरता था। उनका अन्तर्मुखी व्यक्तित्व प्रचार-प्रसार तंत्र के तामझाम से दूर, बहुत दूर रहने में अपनी कामयाबी समझता था।

इस समय उनका एकमात्र पुत्र उस्मान गनी 75 साल की उम्र में भुखमरी की जिन्दगी बसर कर रहा है। यह सरासर गलत है कि *'उनका एक पुत्र राजस्थान सरकार की राजकीय सेवा मे बीकानेर में ही है' जैसा कि श्री सुमनेश जोशी द्वारा लिखित* 'राजस्थान में स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी' नामक पुस्तक के पृष्ठ संख्या 217 पर उल्लिखित

है। उस्मानी के दूसरा कोई पुत्र था ही नहीं। उनका एकमात्र पोता मुहम्मद सलीम 33 वर्ष की आयु में बेरोज़गार है तथा एकमात्र प्रपौत्र हुसैन अहमद सात साल का होते हुए भी शिक्षा प्राप्ति के लिए आवश्यक सुविधा से वंचित है।

* * * *



मुहम्मद सलीम [पौत्र] हुसैन अहमद [प्रपौत्र] रजिया खानम [पौत्रवधु]



भूरी [पत्नी]



उस्मान गनी [पुत्र]

व्यक्तित्व–एक रूपरेखा

यूरेशियन रंग का बच्चा, अंग-प्रत्यंग सुडौल, हृष्ट-पुष्ट। ओज भरे सौंदर्य से सबको प्रफुल्लित करने लगा। आत्मलीन बेपर्वाह। माँ-बाप खुश इस रचना पर। निहाल-निढाल परिवार सारा। चांद किसी का, किसी का सूरज। घर में उतर आई नई जिन्दगी। हुए कई उपचार, आए सभी आस-पास दूर के। 'वाह, क्या खूब!' उमस हटी, ठंडा झोंका और प्रकृति के प्रेम के आंसू। मौला की बखशिश—मौलाबक्श।

तब तक वह तो पहचान लेने-देने की राह को टटोल ही रहा था। पता नहीं कौन से दरवाजे से कब उठा जनाजा पहले बाप का, और छः माह बाद उसकी माँ का। अभी तो वह एक साल का ही था। बेख़बर रखा गया उसे, पर लगा कुछ दिन कि वह गोद कहाँ गई, बाकी सब कुछ तो वही है। वैसे घर में गोदियों की कमी नहीं थी—दादी की और चाचियों की थी, और भी...पर।

समय ने डाल दिया सब अवचेतन में। दादी 'माँ' हुई, चाचा 'बाप'। इसी भ्रम में पलता रहा, हँसता खेलता रहा बेखबर वह। उसकी पालिकाओं में मामी भी थी और एक हिन्दू 'माँ' भी। इतनी मांओं का, चाचाओं का लाडला! सिर्फ अम्मा–अब्बा ... वे दो ही तो नहीं थे जिन्हें होना था।

'पांच साल बीत गए, आज इसी दिन करीब यही समय होगा जब मौला की माँ हमेशा...हमेशा के लिए हमसे जुदा हो चली!' दादी माँ चाचियों को याद दिला रही थी। किसी को खयाल नहीं था कि मौला कमरे मे बैठा पढ़ रहा है। सुनते ही वह आंगन में आया 'क्या तुम मेरी माँ ...क्या आज के ही दिन...' और वह तुरन्त घर से बाहर निकल गया। सब सन्न रह गए...गोली छूट चुकी थी।

मोह भंग, विषाद, आघात, पहला एहसास कि संभावित विकास का अंकुरण! भीतर के प्रकोष्ठ में बैठ गई उदासीनता अथवा एकाकीपन की स्वायत्तता। उसके अंतस में गहनता का स्रोत!

उसके भीतर और बाहर की संरचना चल दी बढ़ने के लिए।

नूरजहाँ (दादी अम्मा) ने सुना-सुना कर सन् 1857 के जंग-ए-आज़ादी के किस्से दिया एक और आयाम–फिरंगी के खिलाफ़ नफरत। पराधीनता के विरुद्ध घृणा! उमस और घुटन।

बालक बढने की प्रक्रिया में साधारण धरातल से हटता हुआ-सा। एक दिन दिखाई दी शोभायात्रा महाराजा की–'यह क्या, कैसा काफ़िला है यह! एक बड़ा है बाकी सब छोटे! ऊँच-नीच भेद। नहीं चलेगा ऐसा।

उसे मक़तब भेजा गया। मौलवी ने पाठ रटाया। बालक ने पूछा उसका अर्थ। मुल्ला खुद नही जानता था। अपने को छिपाने के लिए बच्चे को दी ताडना। कुछ

दिन वहीं शरारतों में बीते। फिर छूट गया मकतब कि चोट पड़ी धार्मिक अंधता पर। अब वह भेजा गया 'जैन उपासरे' में लगने वाली स्कूल में। वहाँ वह कुशल छात्र साबित हुआ। फिर आई अंग्रेजी स्कूल और फिर दरबार स्कूल आदि। पढ़ाई और अनेक जातियों के साथियों ने उसे कट्टरता के कुए में गिरने से बचा दिया। वह इंसानियत के मार्ग को पहचानने में पूरी तरह सफल हो गया। मूल में थी उसकी अपनी ग्रहणक्षमता।

चाचा द्वारा दिखाए वंशवृक्ष ने उस उभरते मस्तिष्क में जिज्ञासा जगा दी–'चाचा, यह तो हिन्दू नाम है?' चाचा ने समझाया–'हाँ, ऐसा ही है, सब जातियों और संप्रदायों में संकरण या मिलावट की प्रक्रिया चलती रही है और चलती रहेगी। ऊपर का तो लेबल ही लेबल है। लालचंद से लालखाँ और रामबक्श से रामचन्द चलता ही रहता है। रामसिंह भी अपने को 'रामसिंह भाटी' कहता है और अजीज भी अपने आप को 'अजीज भाटी'। बालक के सामने जाति या रक्त शुद्धता की सारी पोल खुल गई। दिल और दिमाग में नए झोंके का प्रवेश हुआ—धर्म-पंथ-निरपेक्षता का।

गौण ही नहीं अपितु नगण्य से हो गए जब जाति, संप्रदाय और मजहब विशेष के खयालात, तो उसमें प्रवेश करने लगी व्यापक राष्ट्रीयता की भावना। सातवीं कक्षा पार करने तक तो वह पढ़ने लगा था हिन्दी, उर्दू और बाजदफे अंग्रेजी अखबार भी। उसके प्रधानाध्यापक तिवाडीजी उदार राष्ट्रवादी थे और सामंती सीमाओं का ध्यान रखते हुए भी छात्रो को दिशानिर्देश करते रहते थे, किन्तु उनके पश्चात् जब संपूर्णानंद डूंगर स्मृति कॉलेज के प्राचार्य के रूप में आए तो उस जैसों को एक और सशक्त प्रेरणा स्रोत प्राप्त हो गया। अब तक वह 'मौलाबक्श' से 'मोहम्मद शौकत' बन कर फिर अंतिम रूप से खुद अपने ही द्वारा निर्धारित नाम 'शौकत उस्मानी' धारण कर चुका था।

आठवीं पास करने पर तो देश-विदेश की खबरों का नशा गहरा हो चुका था। देश की पराधीनता उसे सालने लगी थी। ये छात्र, कुछेक के शब्दों में छात्रों की यह 'चंडाल चौकड़ी' राजनीतिक बहसों में उलझी दिखाई देती थी। संपूर्णानंद उस्मानी जैसों पर विश्वास भी करते थे, स्नेह भी रखते थे और साथ ही पथ-प्रदर्शन का उत्तरदायित्व भी निभाते चलते थे।

इधर परिवार की कमजोर आर्थिक स्थिति भी उस छात्र के सामने स्पष्ट हो कर सामने आ रही थी। छोटा-सा घर था, पढ़ने के लिए न अलग कमरा था, न मेज, न कुर्सी और रात को हरीकेन की गैसमय रोशनी थी। खाने-पीने की सामग्री भी निहायत मामूली थी। उसे गरीबी का एहसास होने लगा था।

शौकत की वेदना भीतर ही भीतर सार्वजनिक संवेदना के रूप में घुलमिल रही थी। एकाकीपन आत्मविश्वास में बदल रहा था। जाति, संप्रदाय और मजहब से निरपेक्षता कट्टरता को पिघला कर सार्वभौमिकता अथवा औदार्य को पनपा रही थी। फिरंगी के प्रति घृणा देश की आज़ादी के संघर्ष में हिस्सा लेने की प्रेरणा बन

रही थी, जिसे दूसरे शब्दों मे राष्ट्रवादिता भी कहा जा सकता है। उसकी अध्ययनशील प्रतिभा उसे ज्ञानोन्मुख करती जा रही थी। स्वतंत्रता संग्राम की हर ख़बर को वह ध्यान से पढ़ने लगा था। कई बातें प्रधानाचार्य से समझने की कोशिश करने लगा था।

वह दिन भी आया जब कि उस किशोर को रूस में 'अक्टूबर क्रांति' के घटित होने का समाचार पढ़ने को मिला। 'मजदूरों की विजय!' वह उल्लास से भर गया। यह एक ऐसी अभूतपूर्व प्रेरणा थी कि उसकी दृष्टि मानो एक साथ अनेक सीमाओं को लांघती हुई देख रही हो। यहीं से एक नए भाव का अंकुरण हुआ–गरीबों के राज की संभावना के साथ अंतर्राष्ट्रीयता का आयाम खुल गया।

शौकत अपने आपको आए दिन बदलता हुआ नजर आ रहा था। परिवार वाले भी उसकी बढती हुई गंभीरता को देखकर चिंतित थे, पडौसी भी। उसकी उदास मुद्रा सबके लिए रहस्य बनती जा रही थी।

और जब उसने 'जलियांवाला बाग' के निर्मम नरसंहार की घटना को पढ़ा तो तीव्र वेदना के साथ आक्रोश से भर गया। उसके जी में आया कि डायर को गोली मार दे। 'हिंसा का मुकाबला हथियार से ही हो सकेगा' उसने सोचा। आजादी के लिए जंग में उतरने का संकल्प तीव्रतर होने लगा।

फिर जब खिलाफत आन्दोलन ने एक मौका दे दिया तो वह पत्नी, नवजात शिशु, परिवार, पडौस, नगर सबका नाता तोड कर सामंती खुफियागिरी को चकमा देता हुआ वेष बदल कर भाग निकला। इस समय तक वह राजस्थानी, उर्दू, हिन्दी और अंग्रेजी अच्छी तरह लिख-बोल सकता था। एक साधनरहित नौजवान अपने महान् लक्ष्य की ओर अग्रसर हो गया।

शौकत उस्मानी के गृहत्याग और बीकानेर छोड जाने की पृष्ठभूमि में न तो किसी प्रकार का संन्यासी त्यागवाद है और न ही कुंठाग्रस्त हताशा। उसका विवाह एक सुन्दर और सुशील लडकी से हो चुका था और उसके एक खूबसूरत बच्चा भी जन्म ले चुका था। उस उन्नीस की उम्र में किसी रोमांसजनक टूटन का तो सवाल ही पैदा नहीं हो सकता। वैसे साधारणतया परिवार से नाता तोडना किसी के लिए भी अत्यंत दुष्कर कार्य होता है, किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति की तपन के उस युग में जिस किसी नौजवान में गुलामी के खिलाफ विद्रोह का उद्वेलन जोर मार रहा था उसने प्राथमिकता दी उस संग्राम में तत्परता के साथ सक्रिय हो कर भाग लेने को और इस आतुरता ने उसे हर प्रकार के मोहजन्य साधन और आकर्षण से अपने आप को विच्छिन्न करने की ओर प्रेरित किया।

इस मन:स्थिति में किसी भी बात से समझौता करके बैठ जाना उस्मानी के लिए असंभव हो गया था। उस्मानी यदि अन्यथा चाहता या समझौतापरस्ती को प्रमुखता देता तो निस्संदेह सुख-सुविधा की ज़िन्दगी हासिल कर सकता था। उसका चाचा महाराजा के राज्य मे एक सम्मानित आर्टिस्ट था। मैट्रिक पास उस्मानी को

उस समय सरकारी नौकरी आसानी से मिल सकती थी। वह ऐसा जमाना था कि मैट्रिक को पेशकार या थानेदार बना कर उसे आगे तरक्की करते जाने के अवसर दे दिए जाया करते थे। इसके साथ ही यह संभावना भी थी कि वह मैट्रिक से आगे की सारी परीक्षाएँ पास कर लेता क्योंकि पढ़ाई में वह काफी तेज़ था और बहुत ऊँची नौकरी हासिल कर लेता। हाँ, शर्त थी तो सामंती व्यवस्था की खुशामद करते रहने की और देश की आज़ादी के आन्दोलन से निहायत परहेज रखने की। किन्तु उस्मानी की नींव ही सामंती-साम्राज्यवादी व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह करने की भावना से भरी जा चुकी थी। छात्र जीवन की हरकतों ने तभी से उसके पीछे सी.आई.डी. लगा दी थी।

परिवार रूढ़िग्रस्त था, पड़ौस भी—साथ ही राजभक्ति का हामी भी। बीकानेर रियासत का महाराजा शासक अपने क्षेत्र में स्वतंत्रता आन्दोलन की हवा तक नहीं आने देता था। जनता दमनचक्र में पिसती हुई घुटती रहती थी। उस्मानी उस पारिवारिक परिवेश और प्रशासनिक व्यवस्था के प्रतिकूल होकर उबल रहा था। न उसे मजहबी कर्मकांडों में रुचि थी और न वह उनकी सार्थकता को ही स्वीकारता था। इस तरह उसकी चेतना और भावना दोनों ने मिलकर उसे जाने को विवश कर दिया।

किशोरावस्था में ही उस्मानी की शिक्षा संस्था को उसमें अन्तर्निहित रचनाकार की प्रतिभा का परिचय मिल चुका था। वह राजस्थानी, उर्दू, हिन्दी और अंग्रेजी में कविता, कहानी और निबन्ध लिखने लगा था। यदि बीकानेर के तत्कालीन महाराजा गंगासिंह की महिमा में कोई पुस्तक लिखता या प्रशस्ति काव्य समर्पित करता अथवा उस शासन के विकास कार्यों के विवरण तैयार करता या भारत की अंग्रेजी सरकार को दी गई महाराजा की सेवाएँ और उनकी एवज में महाराजा को दिए गए दलाली तमगों की ही तारीफों के पुल बांध देता तो उसे काफी अच्छा पैसा और ओहदा हासिल हो सकता था।

इसके अलावा वह ऐसी ग़ज़लें, नज़्में या कि कव्वालियाँ पेश करता जिनमें शायराना रूमानियत हो और साथ रूहानी ज़हनियत हो तो भी सामंती महफ़िलों में शौहरत और माल हासिल किए जा सकते थे। ऐसी संस्थाएँ और सेठ भी उसे पुरस्कृत करके अपने आप को प्रचारित-विज्ञापित करते। मज़हबी हिदायतों या करिश्मों को संकलित करके भी किसी न किसी क्षेत्र में घुसा जा सकता था और किसी अच्छे खासे इश्किया कथानक को खड़ा करके या फड़कता गीत लिख कर फिल्मी दुनिया में भी प्रवेश पाया जा सकता था।

पैसा आता, बंगला बनता, नौकर-चाकर होते और आज़ादी मिलने पर अल्पसंख्यकों में से छांट कर उसे सचिवालय का सचिव या किसी आयोग का आयुक्त अथवा राज्य का राज्यपाल, मंत्री आदि इत्यादि कुछ भी बना दिया जाता। खुद को जिन्दगी का लुत्फ मिलता, परिवार को भी और इसी जनम में उस्मानी की सातों पीढ़ियाँ भवबाधा के सागर से बिना किसी ख़ुदाई जहाज के ठेठ उस पार जाकर

स्वर्ग में प्रवेश कर जातीं, जिसमे न कोई गर्मी की तपन होती और न सर्दी की ठिठुरन-सिकुड़न।

लेकिन उस्मानी की रचनाप्रक्रिया और उसके तत्त्वों के सम्मिश्रण तथा उसके युग विशेष को भली प्रकार समझ लेने पर कोई भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचेगा कि उस्मानी के लिए यह सब कुछ निरर्थक था। उस जैसे क्रांतिकारियों के लिए कांटे भरे रास्तों का ही विकल्प बचा रहता है। उनका ग़म तो यह होता है कि फांसी पर लटकने का मौका उनको क्यों न मिल सका। एक रास्ता शीशोंजडे हवामहल के परिसर तक जाता है तो दूसरा मौत के तलघर में जा कर रुकता है। उस्मानियों ने दूसरे रास्ते पर पांव रखा था जो शुरू से ही शूलों से भरा था।

अपने परिवार के सभी प्रिय रिश्तेदारों और दोस्तों से विसंबंधन संबंधी निर्णय को कतिपय पश्चिमी मनोवैज्ञानिकों की विसंबंधन संबंधी अवधारणा से नहीं समझा जा सकता, वैसे उस अवधारणा के पीछे भी सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियो का प्रभाव भी हुआ ही करता है, वह नितान्त निरपेक्ष प्रवृत्ति मात्र नहीं होता। उस्मानी के विसंबधन के पीछे तत्कालीन लक्ष्य और संकल्प का भारी दबाव रहा है कि 'स्वतंत्रता बाकी सब बातों से ज्यादा प्रमुख है और जब तक देश आजाद न होगा तब तक वापिस नहीं लौटूँगा।'

वय:संधि की भयावह सीमा के किनारे पर अवस्थित युवा विशेष में साहसातिरेक अथवा दु:साहसिकता का होना स्वाभाविक समझा जाता है और शौकत उस्मानी के विषय में भी कहीं-कहीं से दबी जबान में यही कहा जाता रहा है जो सही नहीं है। क्योंकि दु:साहसिकता के पीछे कोई महान् और दीर्घकालीन संकल्प नहीं होता और साथ ही उसकी अपनी आयु अवधि होती है, जो यौवन के आने के बाद साथ छोड़ देती है। इसके अलावा उसमे आकस्मिकता का समावेश भी होता है और तात्कालिकता का भी। वह सिद्धान्तरहित भी होती है। उस्मानी के विसंबंधन के निर्णय के पीछे इन सब बातों का अभाव था। उसके आगे की सारी गतिविधियों को सही परिप्रेक्ष्य में आंकने पर आईने में चेहरे की तरह सभी कारण सुस्पष्ट दिखाई देंगे। निश्चय ही वह साहसी था—दु:साहसी नहीं। वह एक महान् दीर्घकालिक तथा सोद्देश्य दृढ-धारणा को लेकर चला था और जेल जीवन के बाद के समय में सर्वहारा के संगठन का या प्रचारकार्य का संपादन किया करता था जिसे कम से कम 'साहसातिरेकता' अथवा 'दु:साहसवाद' तो नहीं ही कहा जा सकता।

तो क्या शौकत उस्मानी के मन में कोई 'महान् नेता', 'महान् युगपुरुष या अमर इतिहास पुरुष', 'महान् क्रांतिकारी', 'महा सेनानायक', 'आजादी के बाद प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति' और इसी प्रकार की कोई 'महानता' की पदवी प्राप्त करने की 'महत्त्वाकांक्षा' पल रही थी जिसका दबाव था ऐसी धारणा बनाए जाने के पीछे।

कतई नहीं। यदि उस्मानी में महत्त्वाकांक्षा घर किए हुए होती तो वह कहीं न कहीं किसी नाटकीयता के हथियार को अपनाता, कही अवसरवादी होकर आगे-

पीछे/पीछे-आगे चलता फिरता, उछलता कूदता या लुक-छिप कर दंडवत् करता और जनता के सामने 'वीर हुंकार' से गर्जन करता हुआ दिखाई देता; चापलूसों, प्रशंसकों और प्रचारकों-प्रसारकों का ताना-बाना बुन चुका होता जिसके माध्यम से उसके करिश्मों-चमत्कारों के असाधारण क़िस्से घर-घर, गली-गली गूंजते सुनाई देते।

हक़ीकत यह है कि वह न किसी महत्त्वाकांक्षा या पदलिप्सा से ग्रस्त था और न ही उसने उस दिशा में झांका ही। बल्कि बात इससे बिल्कुल उल्टी थी। उस्मानी अपने आपको छिपाने में माहिर था, श्रेय लेने के समय भूमिगत होता था, तमगे बंटने के समय गायब रहता था-किन्तु उसका काम ही ऐसा था कि गिरफ्तार किए जाने वालों की सूची में उसका नंबर सबसे ऊपर रहता था और छूटने वालों की सूची में सबसे नीचे। हक़ीकत यह भी है कि आज़ादी मिलने के बाद भी उसने कुछ भी हासिल नहीं किया जबकि नकली सेनानियों की बाढ़ आ गई। उस्मानी का घर कहीं नहीं बना। वह जिन्दगी भर खानाबदोश ही रहा।

शौकत उस्मानी घटनाक्रम को स्वतंत्र एवं आलोचनात्मक तरीके से समझने, उसका विश्लेषण करने, उस पर निर्णय लेने और अपने विवेक के अनुसार कार्य करने में सक्षम था। वह जिस सामाजिक, ऐतिहासिक विकास की प्रक्रिया में से उभर रहा था, उसी का नतीजा था कि वह अपने आपको सीमित दायरे में सिकुड़ा हुआ नहीं रख सका। उस कालखंड की विशेष वस्तुपरक परिस्थितियों के जबरदस्त आह्वान की उपेक्षा नहीं कर सका। युगबोध से पैदा हुई प्रेरणा या उत्प्रेरणा ने उसमें जिस आवेग को जगा दिया था वह स्वाधीनता आन्दोलन की तड़पन लिए हुए था जिसके साथ उसकी अनुभूतियाँ और संवेदनाएँ एकाकार हो चुकी थीं। एकमात्र यही वजह थी कि वह उस काफ़िले में जा मिलने को आतुर हो गया जो 'इन्क़लाब जिन्दाबाद' कहता हुआ और साथ ही 'सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है, देखना है ज़ोर कितना बाज़ुए क़ातिल में है।' गाता हुआ आगे बढ़ रहा था।

* * * *

शौकत ने गृहपिंजर को छोड़ा तो उसकी क्रियाशीलता को आगे से आगे का मंच मिलता गया। रेलयात्रा से शुरू करके मैदानों, नदी-नालों, घाटियों, पहाड़ी चढ़ावों-उतारों की असह्य कठिनाइयों और भयंकरताओं को पार करते हुए, भूख-प्यास साथ लिए, डाकुओं का सामना करते हुए, गुलाम बनाकर घसीटे जाते हुए और मौत के आखिरी हुकम का इंतज़ार करते हुए उस्मानी अपने काफ़िले के साथ अनुशासनबद्ध सैनिक के रूप में चलता गया और जहाँ यात्रियों के बीच में मज़हबी कट्टरता की सीमा खिंच गई वहाँ वह भारत की आज़ादी के लिए हथियारी मदद लेने के लिए सोवियत भूमि में प्रवेश करने के लक्ष्य रखने वालों के समूह का अग्रणी बन गया। यह उसकी अग्रगामिता का प्रथम चरण था-उसके आत्मविश्वास का प्रतीक।

राष्ट्र की बेड़ियों को काटने के लिए वह उन्नीस-बीस साल का दीवाना देश की भौगोलिक सीमाओं को लांघ कर अन्तर्राष्ट्रीयता के द्वार खोल कर उसमें

कर गया और केरकी की रक्षा में लाल फौजी सितारे के रूप में चमक उठा। इस होनहार नवयुवा के राजनैतिक जीवन की शुरूआत का इतर 'मजदूर राज' के लिए लड़ने से होना उसके व्यक्तित्व को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित कर देता है।

बीकानेर से बाहर निकलने के बाद वह लाहौर, पेशावर तथा अफगानिस्तान के अनेक स्थल, टर्की, ताशकंद, समरकंद, बोखारा और मॉस्को में संपर्कों और कार्यक्षेत्र का विस्तार करता चला गया। वह एक विश्वव्यापी मंच का पात्र बन चुका था। सोवियत संघ के इतिहास में अपना नाम दर्ज करा चुका था। वहाँ वह मार्क्सवाद का अध्ययन करके तथा अनेक अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट नेताओं और भारतीय कम्युनिस्टों के साथ विचार विमर्श में भाग लेकर अपने वैज्ञानिक एवं सैद्धांतिक दृष्टिकोण को परिपक्व कर चुका था। लेनिन और स्टालिन के संपर्क में आ चुका था।

भारत में आकर पेशावर केस के वारंट पर कानपुर बोल्शेविक षड्यंत्र केस में सबसे पहले गिरफ्तार होकर स्वतंत्रता संग्राम के बोल्शेविक हीरो के रूप में प्रचारित हुआ तो जेल में बंद होते हुए इंग्लैंड के चुनाव में साइमन के खिलाफ़ उम्मीदवार बनाया जाकर ब्रिटेन के श्रमिक का अपना बन गया। मेरठ षड्यंत्र केस से पहले मॉस्को में कॉमिन्टर्न के अधिवेशन में अध्यक्ष मंडल में शामिल किया जाकर वह पुन: अंतर्राष्ट्रीय मंच पर उभरा, सुशोभित हुआ।

मेरठ षड्यंत्र केस में फिर गिरफ्तार होकर राष्ट्रीय आन्दोलन के सुदृढ सेनानी के रूप में सामने आया और उसी दौर में इंग्लैंड के चुनाव में दुबारा श्रमिकों का उम्मीदवार बनाया जाकर अपनी अंतर्राष्ट्रीय छवि को प्रमाणित करने की अभिव्यक्ति दे गया। बीच में अनेक ट्रेड यूनियनों का संगठनकर्त्ता, श्रमिकों के लिए जूझनेवाला, छात्रों और मजदूर किसानों को शिक्षित करनेवाला नेता और शिक्षक साबित हो गया।

डी.आई.आर. मे फिर गिरफ्तार होकर उसने अपनी संघर्षशीलता को एक और उन्नत शिखर पर पहुँचा दिया।

सोलह साल की जेल-यातनाएँ भी उसे न झुका सकीं, न तोड सकी। छ: साल तक उसने लंदन में काम किया और दस साल तक मिस्र में। कहीं वह शोधकर्त्ता के रूप में प्रसिद्ध हुआ तो कहीं पत्रकार के रूप में। हर जगह वह एक सम्मानित व्यक्ति रहा।

उसके समय का कोई भी भारतीय कम्युनिस्ट, कोई भी क्रांतिकारी, कोई भी कांग्रेसी, आर.एस.पी., एच.आर.एस.ए. नेता नहीं था जो उस्मानी के संपर्क मे न आया हो। गाँधी, दोनों नेहरू, विद्यार्थी, काकोरी केस के अभियुक्तों आदि से ले कर सब प्रकार के सुप्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी थे। यह सूची कई सैकड़ों की बन सकती है। इसी प्रकार सोवियत यूनियन, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, अमेरिका आदि कितने ही देशों के वामपंथी नेताओं से उस्मानी का दोस्ताना था और यह सूची भी उतनी ही लंबी होगी। ब्रैडले और स्प्रैट तो मेरठ केस में सह-अभियुक्त थे ही। डांगे, मुजफ्फर अहमद, अधिकारी, जोश भी सह-अभियुक्त थे।

वह सारे देश का आदमी था। राजस्थान, यू.पी., बंगाल, पंजाब, दिल्ली, मध्यप्रदेश, गुजरात या कि महाराष्ट्र आदि सब राज्य उसके अपने थे और वह सबका। हर कहीं उसका राजनीतिक परिवार था। इसके साथ ही वह सारी दुनिया का अपना था और सारी दुनिया उसका परिवार। एक ऐसा व्यापक व्यक्तित्व था उसका कि जिसकी तुलना में बहुत कम नेता ठहर पाते हैं। वह कहीं रहता, कुछ भी कहीं मिला तो खा लिया और नहीं तो वैसे ही काम करते-करते दिन गुज़ार दिया। वह इस देश का इतिहास पुरुष बन चुका था तो दुनिया के इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण अंश भी। पाकिस्तान, अफगानिस्तान, सोवियत संघ के पंद्रहों गणराज्यों, ब्रिटेन और मिस्र के दस्तावेजों में वह मिलेगा तो यहाँ के गुप्तचर विभाग और पुरातत्त्व के पुराने विवरणों में भी।

किन्तु यह उद्देश्यपरक यायावर इतना उपेक्षित कैसे रहा? उसका अपना मकान क्यों नही बना जहाँ वह टिक कर रह सकता। बीकानेर में उसका पुश्तैनी मकान था, किन्तु कानपुर केस के बाद बीकानेर में प्रवेश करने पर उस पर प्रतिबंध लग चुका था। और किसी अन्य जगह उसके पास न कोई मकान था और न ही ज़मीन। यहाँ तक कि आज़ादी के बाद भी उसके लिए आवासीय सुविधा नहीं थी। उसके पास आजीविका का भी कोई स्थायी प्रबंध नहीं था। पाकिस्तान की नागरिकता ग्रहण करने की शर्त पर उसे मंत्री पद दिए जाने का ऑफर दिया गया था, लेकिन उसने भारत की नागरिकता छोड़ने की उस शर्त को ठुकरा दिया था। लंदन में भी नागरिकता देने का ऑफर था, उसे भी उसने नहीं माना। तो फिर जिस भारत की आजादी के लिए उसने इतने कष्ट सहे और नेहरूजी तक से जिसके संपर्क थे, उनके प्रधानमंत्री होते हुए भी वह उपेक्षा का शिकार क्यों बना रहा? उसकी रचनाओं के प्रकाशन तक की सुविधा उसे क्यों न मिल पाई? उसका परिवार आज भी कर्ज़ से क्यों पिसता चला जा रहा है, अभावग्रस्त क्यों है? शिक्षा सुविधाओं के उपलब्ध न हो सकने के कारण उसका परिवार उच्च शिक्षा प्राप्त करने से आज भी वंचित क्यों है?

शौकत उस्मानी का यह कहना बिल्कुल सही है कि आज़ादी विभाजन की शर्त मान लेने पर मिली थी जिसका स्वाभाविक परिणाम था सत्ता का कांग्रेस और लीग के बीच बंटवारा होना। इन दोनों दलों में देश के जमींदार-सामंती और पूंजीपति वर्ग का संयुक्त वर्चस्व था जिनका सांप्रदायिकता के साथ घनिष्ठ संबंध था। सत्ता हड़पने का या सौंपे जाने का मौका इसी वर्ग को मिला या यों कहें कि साम्राज्यवादी तंत्र ने अपने हितों की सुरक्षा के लिए अपने इस छुटभैया को सत्ता की ख़ैरात बांट दी। सत्ता पाने वाला तबका भारतीय हो अथवा पाकिस्तानी, वह सदैव वामपंथी क्रांतिकारियों को सत्ता प्राप्ति के मामले में नंबर एक के दुश्मन मानता था और मौका आते ही उन्होंने शौकत उस्मानी जैसे सभी क्रांतिकारियों को जानबूझ कर पीछे धकेलने की तत्परता दिखाई, क्योंकि उन्हें आशंका थी कि वामपंथी क्रांतिकारियों का सत्ता में प्रवेश करने देने का अर्थ होगा अर्थव्यवस्था को शोषक वर्ग के विनाश की दिशा

में मोड़ देना तथा समाज से कट्टरपंथ के हथियार को कुंद करते जाना।

क्रांतिकारियों को उपेक्षित करने के मामले में सात सौ रियासतों के राजा-महाराजा, जागीरदार-जमींदार, बिडला-टाटा, महंत-मठाधीश, पंडित-मुल्ले और उनके द्वारा खड़े किए अर्द्धसैनिक प्रकृति के संगठन, जाति-संप्रदाय विशेष के संगठन आदि सब एकजुट थे, सतर्क थे, साज़िशमंद थे और दूसरी ओर वामपंथी क्रांतिकारियों की संगठनात्मक शक्तियाँ इतनी प्रबल नहीं बन सकी थीं कि देश के इस प्रकार के विभाजन को रोक कर खुद सत्ता पर कब्जा करने में सफल हो सकें अथवा उनके पास ऐसी कोई रणनीति नहीं थी जो शोषक शक्तियों को धकेल कर अपनी और समाज की सुरक्षा सुनिश्चित कर सके। ऐसे हालात में जो नतीजे निकले, उनके अलावा और कोई नतीजे निकल ही नहीं सकते थे। अत: जितने भी वामपंथी क्रांतिकारी थे उनका उपेक्षित किया जाना या धकेला जाना अथवा उनके लिए जीते जी मरते जाने की हालत बना देना सत्ता का और सत्ता के पर्दे के पीछे से उसे संचालित करने वाली शक्तियों का योजनाबद्ध प्रयास था। शौकत उस्मानी वामपंथी क्रांतिकारियों की सूची से अपने को हटाए जाने की किसी शर्त को स्वीकार नहीं कर पाया। अत: उसको जानबूझ कर 'उपेक्षा' की प्रताड़ना दी गई थी और होना भी यही था। उसके परिवार को रक्तबीज समझा जाकर कष्ट भोगने को विवश होना पड़ रहा है।

उस्मानी कांग्रेस में रहा, उसमें रहकर काम भी किया था। जवाहरलाल नेहरू आदि सभी नेता उसे अच्छी तरह जानते थे। उस समय बहुत से कम्युनिस्ट और क्रांतिकारी कांग्रेस से जुड़े हुए थे और उन्होने आज़ादी के आन्दोलन में कारगर भूमिका निभाई तथा जेल यातनाएँ सहीं, लेकिन जब सत्ता कांग्रेस के हाथ में आई तो वामपंथियो को पचा पाना कांग्रेस की नीति के विपरीत समझा गया चाहे उसके नेता जवाहरलाल नेहरू ही क्यों न थे। कांग्रेस के भीतर के दक्षिणपंथियों का दबाव ही इतना प्रबल था कि उसके 'समाजवादी' या 'लोकतांत्रिक समाजवादी' अथवा 'सामाजिक लोकतंत्रवादी' खेमे के बड़े-बड़े नेता अशक्त प्राय: थे। वामपंथियो से उन्हें अर्थव्यवस्था में और सामाजिक स्थितियों में भी बुनियादी परिवर्तनों के लिए दबाव बनाए रखने की आशंका थी। अत: उस्मानी जैसे सभी लोग उपेक्षा और अलगाव के गर्त में ठेल दिए गए।

फिर उस्मानी स्वाभिमानी भी था। अपने साथ काम कर चुके व्यक्ति के मंत्री पद पर पहुँचने की खबर पाते ही उस्मानी ने स्वयं उससे सम्पर्क तोड़ लिए थे। वह किसी मंत्री या सरकारी अधिकारी से मिलना अपने व्यक्तित्व की गरिमा के प्रतिकूल समझता था। यदि कोई कहता कि उससे मिलो तो उसका जवाब होता था-'तुमने भी यदि किसी से मेरे बारे में कुछ कहा तो मैं साफ इन्कार कर दूँगा, बल्कि किसी भी एहसान को ठुकरा दूँगा। मुझे अपने और अपने परिवार के लिए मेहरबानी की भीख गवारा नहीं।' हाँ, शोध के लिए जो आवेदन किया था वह नियम के अन्तर्गत था लेकिन भारत की अफसरशाही ने उसे निरस्त करके रद्दी की टोकरी में डाल दिया।

इस तरह उसने न केवल अपने ही द्वारा बनाए गए नियमों की अवहेलना की, अपितु अपनी घिनौनी हरकत का भी परिचय दे दिया। उस्मानी प्रधानमंत्री तक शिकायत कर सकता था, किन्तु वह सरकारी तंत्र की हकीकत से परिचित था।

उस्मानी ने न अपने लिए कुछ लिया और परिवार को भी कभी कुछ नहीं भेजा। उसने अपने रोज़मर्रा के खर्चे को कभी अंशकालीन मास्टरी करके, कभी किसी प्राइवेट फर्म में मैनेजरी करके, कुछ लेख, कहानियाँ लिखकर या पत्रकारिता करके या किसी घनिष्ठ दोस्त के यहाँ भूमिगत रहकर अथवा मिल गया तो कर्ज लेकर चलाया। उसकी रचनाओं के प्रकाशकों ने बाजदफे देय का आधा-चौथाई ही चुकाया, बाकी सब हड़प गए। और कुछ नहीं बन पड़ा तो अजमेर आ गया जहाँ कोई रिश्तेदार रहता था, लेकिन वहाँ भी कुछ दिन ही निकाल पाता, क्योंकि उस्मानी के पीछे हर स्टेट और केन्द्र की गुप्तचरी लगी रहती थी जो किसी भी रिश्तेदार या दोस्त को परेशान कर सकती थी। इसके अलावा हर क्षेत्र से उस्मानी की मांग बनी ही रहती थी जिसका एक कारण यह भी था कि वह एकमात्र ऐसा माध्यम था जो समाजवादी विचारधारा से संबंधित पुस्तकें और पत्रिकाएं बड़े-बड़े संगठनों और पार्टियों के नेताओं और कार्यकर्त्ताओं तक पहुँचाने की व्यवस्था किया करता था। उन दिनों ऐसी अनेक प्रतिबंधित रचनाएँ भी थीं जिन्हें उस्मानी ही मुहैया करवा सकता था।

कहाँ रहता था उस्मानी जब उसका अपना कोई घर था ही नहीं ? वह आवारा तो था नहीं–आवारापन के आस-पास भी नहीं। यह भी सही है कि उसके लिए रहने का स्थायी ठिकाना नहीं था जो उसके लिए उपयुक्त भी कहा जा सकता हो।

उस्मानी का एक घर तो जेल की बदबूदार अंधेरी कोठरियाँ थीं ही जिनमें उसने सोलह साल काटे तो कम से कम दस साल उसे भूमिगत रहकर इधर से उधर भागते रहने में लग गए। इसके अलावा कभी मुसाफिरखाने में, कभी किसी स्कूल के कमरे में, कभी किसी यूनियन या पार्टी के दफ्तर में, किसी प्रेस के कार्यालय में, किसी दोस्त के यहाँ, किसी होटल में, स्टेशन के विश्रामगृह या प्लेटफार्म पर या कच्ची बस्ती में किसी झोंपड़ी में। कभी वह होटल से पकड़ा जाता है तो कभी किसी सराय से, किसी कार्यालय से अथवा किसी यूनियन के कमरे से। उसे रात के एक बजे से चार बजे के बीच में गिरफ्तार किया जाता रहा है—उसकी हर वस्तु की तलाशी और उसकी बरबादी के साथ। पुलिस वालों ने उसके सामान को लूटा-खसोटा और जो चीज़ ले सकते थे उसे लेने के बाद फिर कभी वापिस नहीं लौटाया। उस्मानी की आवासीय व्यवस्था पर शायर की यह पंक्ति अंकित की जा सकती है—

चीन औ अरब हमारा, हिन्दोस्तां हमारा,
रहने को घर नहीं है, सारा जहां हमारा!

उस्मानी अपने परिवार के किसी भी सदस्य के प्रति उदासीन नहीं था। यह हकीकत है कि वह किसी के लिए कोई वसीयत न कर सका, क्योंकि उसने जायदाद बनाई ही नहीं, न ही उसने आर्थिक मदद की; बल्कि उसके कामों की वजह से

परिवार को संकट भी झेलने पड़े। इसके बावजूद वह अपनी दादी से बहुत प्रेम करता था। उसके प्रति हमेशा उसके हृदय में अपरिमित सम्मान था। वह अपने चाचाओं को बहुत चाहता था तथा सभी चाचियों, चचेरे भाई, भतीजों और भतीजियों को भी। वह अपनी पत्नी और पुत्र से भी प्यार और स्नेह करता था। वह अपनी ओर से इस बात का सदा ख़याल रखता था कि उसके कारण परिवार कहीं और अधिक संकट में न फंस जाय, इसीलिए उसने जेलों से छूटने पर भी बीकानेर आने का जोखिम नहीं उठाया। उसके व्यक्तिगत पत्रों से यह साफ जाहिर होता है कि परिवार से दूर होते हुए भी उसके प्रति कितना सहृदय था।

इसके अलावा यह भी उल्लेखनीय है कि अपने इतने संपर्कों में से किसी का उपयोग उसने अपने परिवार के किसी भी सदस्य को किसी भी तरह का लाभ पहुँचाने के लिए नहीं किया। आज भी उसके परिवार की खस्ता हालत इसका प्रमाण दे रही है। वास्तव में वह इसे अपने स्तर के अनुकूल नहीं समझ रहा था। अपने बच्चे की शिक्षा-दीक्षा या आजीविका की व्यवस्था के लिए भी उसने किसी से कुछ कहने का प्रयास नहीं किया। उसके पुत्र उस्मान गनी ने अपने ही बलबूते पर जो हो सकता था वह किया।

शौकत उस्मानी जानबूझकर इश्कबाजी से दूर रहा क्योंकि उस जैसे लोगों से महत्त्वपूर्ण दस्तावेज हड़पने के लिए साम्राज्यवाद ने अपने अनेक एजेंटो को छोड़ रखा था। जब कोई अपने साथ डांस करने का इशारा करती तो वह बहाना बना कर टाल देता था।

उस्मानी ने बुरा माना उन कम्युनिस्ट नेताओं को जो सोवियत संघ में या और कहीं ऐशोआराम की जिन्दगी बसर कर रहे थे। एम.एन. राय और उनकी पत्नी एवलिन ऐसे ही लोगो में थे। उसके दिल पर चोट लगती थी जब कोई कम्युनिस्ट बीमारी या और कोई बहाना बनाकर जमानत पर छूटने की कोशिश करता था। सबसे ज्यादा नफरत उस अभियुक्त से होती थी जो किसी कारण से सरकार के लिए मुख़बिर बन जाता था। और उसे उस स्थिति से भी सख्त घृणा थी जब किसी ईर्ष्या-द्वेष और गुटबाजी से पार्टी को नुकसान पहुँचाता था और पार्टी फिर भी उसे ऊँचे पद पर बनाए रखती थी। इसी प्रकार की परिस्थिति ने उसे पार्टी छोड़ने तक को विवश कर दिया। उसके और मुजफ्फर अहमद के बीच का तीव्र मतभेद भी इसी का उदाहरण है।

* * * *

शौकत उस्मानी मार्क्सवादी थे। वैज्ञानिक और ऐतिहासिक भौतिकवाद का उन्होंने गहन अध्ययन किया था। वे राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक-राजनीतिक परिस्थितियों का आकलन उनके वस्तुगत आधार को दृष्टिगत रख कर किया करते थे। वे समस्याओं की गहराई में पैठ कर उनका विश्लेषण किया करते थे। लेनिन की कृतियो को उन्होंने बड़े ध्यान से पढ़ा था और वे उनके लिए प्रेरणा के स्रोत

हुआ करती थीं। दर्शन, राजनीतिक अर्थशास्त्र और इतिहास में उनकी विशेष रुचि थी। अपने वैज्ञानिक दृष्टिकोण को केन्द्र में रख कर वे अनेक बार सही पूर्वानुमान लगा लिया करते थे। तत्कालीन विश्व के वैचारिक संघर्ष का सटीक विश्लेषण करना उस्मानी की अपनी विशेषता थी। लेकिन वे यह बात भली प्रकार जानते थे कि वैचारिक संघर्ष का आधार अंततः वर्गसंघर्ष में ही अन्तर्निहित है।

उनके सारे क्रियाकलापों की पृष्ठभूमि में उनके वैश्विक दृष्टिकोण की झलक देखी जा सकती है और खास-तौर पर अभियुक्त के तौर पर दिए गए बयान से। एक जगह उन्होंने कहा है कि 'मै मार्क्सवाद-लेनिनवाद के वास्तविक अर्थ में कम्युनिस्ट हूँ।' और इसी तरह एक और प्रसंग में उन्होंने आत्म-स्वीकृति के रूप में ज़ोर दे कर कहा कि 'मैं कम्युनिस्ट हूँ और जिन्दगी भर कम्युनिस्ट रहूँगा।'

वे पूरी तरह नास्तिक थे, अतः न उनका किसी धर्मविशेष में विश्वास था और न किसी धर्मतंत्र में। वे न नमाज़ अदा करते थे और न ही रोज़े रखते थे। यद्यपि आज़ादी के आन्दोलन को बल देने के लिए जेलों में एक बार नहीं, बल्कि कई बार लंबी भूख हड़तालें रखी थीं। लेकिन वे सब धर्मों का और उनके मूल उद्देश्यों का आदर करते थे। उनका विरोध धर्मतांत्रिक कर्मकांडी पद्धतियों, संस्थाओं, उनके अंधानुकरण करने और उनका उपयोग अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए करने वाले पंडितों-पुरोहितों, मुल्ला-मौलवियों और गुरुओं-पादरियों के विविध क्रियाकलापों को लेकर था। नाजीवाद-फासीवाद से उन्हें सख़्त नफरत थी।

राजनैतिक जीवन के प्रथम दौर में वे सशस्त्र क्रांति को ही एकमात्र विकल्प मानते थे और खास तौर से आजादी हासिल करने के मामले में। इसीलिए वे सोवियत संघ गए थे। उन्होंने शस्त्र उठाकर ही केरकी की रक्षार्थ प्रतिक्रांतिकारी श्वेतगार्डों के विरुद्ध मोर्चा लिया था और भारत की आज़ादी के लिए भी सोवियत संघ से हथियार देने की मांग की थी। उनके अनुसार 'आज़ादी की लड़ाई अहिंसा से नहीं जीती जा सकती।' स्तालिन से मिलने पर भी उन्होंने कहा था कि यदि हथियारों की मदद नहीं की जाती है तो उनका स्वदेश जाना ही बेहतर है। लेकिन भारत के आन्दोलन की विशेष परिस्थितियों और वामपंथी दलों की संगठनात्मक स्थिति ने आगे चलकर उनमें हथियार लेने के आग्रह को शिथिल करने की विवशता पैदा कर दी थी।

उस्मानी ने सोवियत संघ की बदलती हुई तस्वीर को अत्यंत निकट से देखा था। वे उससे बहुत प्रभावित थे। यहाँ तक कि कोई व्यक्ति या राजनीतिक दल सोवियत संघ के विरोध में कुछ कहता तो वे तुरंत उसका तर्कसहित खंडन करते थे। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं के व्यक्तिगत चरित्र से भी बहुत प्रभावित थे और खास तौर से लेनिन और स्टालिन के आचार-व्यवहार से। इस विषय में उनके अनुभव पढ़े-पढ़ाए आधार पर न होकर व्यक्तिगत संपर्कों के कारण थे।

* * * *

शौकत उस्मानी सबसे पहले ताशकंद में स्थापित भारतीय कम्युनिस्ट के स...

बने जिसमें एम.एन. राय और एम.पी.टी. आचार्य भी संस्थापकों के रूप में सम्मिलित थे। राय-आचार्य के मतभेदों के बावजूद कॉमिन्टर्न में इसका प्रतिनिधित्व था। तब तक भारत में विधिवत् राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना नहीं हुई थी अलबत्ता कम्युनिस्ट विभिन्न राज्यों में ग्रुपों के रूप में कार्य कर रहे थे और कांग्रेस के अधिवेशनों में भी वामपंथ के प्रतिनिधि के रूप में उनको आमंत्रित किया जाता था और अनेक कम्युनिस्ट कांग्रेस के सदस्य भी थे क्योंकि प्रायः ट्रेड यूनियनों के वे ही संचालक थे। कांग्रेस में वामपंथियों की असरदार भूमिका थी।

भारत आने पर उस्मानी ने वामपंथी कांग्रेसी के रूप में कार्य किया था, किन्तु उनका मुख्य कार्य किसी न किसी ट्रेड यूनियन में काम करना था। उस्मानी ही वह माध्यम या व्यक्तिकेन्द्र थे जो सारे ख़तरों को मोल लेकर दूसरे देशों से गुप्त रूप से पहुँचाए गए प्रतिबंधित कम्युनिस्ट साहित्य, पत्र-पत्रिकाएं आदि ट्रेड यूनियनों के मजदूरों, नेताओं, बुद्धिजीवियों और छात्रों तक पहुँचाया करते थे। ऐसे साहित्य को न केवल कम्युनिस्ट और दूसरे वामपंथी दलों के नेता प्राप्त करने का इंतजार करते रहते थे, अपितु कांग्रेस के अनेक नेता और कार्यकर्त्ता भी उतनी ही उत्सुकता दिखाते हुए उस्मानी से घनिष्ठ संपर्क रखते थे। उस्मानी के गुरु डॉ. संपूर्णानंद ने तो इस तथ्य का स्पष्ट उल्लेख अपनी संस्मरणात्मक पुस्तक तक में कर दिया है।

कानपुर केस में उन्हें पहला 'बोल्शेविक' करार देकर गिरफ्तार किया गया था, और उस केस में जब वे डांगे के साथ जेल भोग रहे थे, तो उसी दौर में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना हुई थी। स्वाभाविक ही था कि जेल में रहते हुए वे डांगे आदि के साथ कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य बन गए। वे अनौपचारिक संस्थापक सदस्यों में से थे।

कानपुर केस से बरी होने के बाद दो साल तक पार्टी का काम करते हुए उस्मानी फिर मेरठ षड्यंत्र केस में ख़तरनाक 'बोल्शेविक कम्युनिस्ट' के रूप में पकड़ लिए गए और जेल-यातनाएं भोगते रहे। इसी दौर में एक-दो कम्युनिस्ट साथियो के व्यक्तिगत आचरण के ओछेपन को देखकर उस्मानी पर बहुत विपरीत प्रभाव पड़ा क्योंकि पार्टी ने बजाय उनको दंडित करने के उल्टे प्रोन्नत कर दिया। इस पर तैश में आकर उन्होंने अपनी सदस्यता का सालाना नवीनीकरण नहीं करवाया। इस तरह सन् 1935 में यद्यपि औपचारिक रूप से सी.पी.आई. से उनका संबंध विच्छेद हो गया था किन्तु अंग्रेजी हुकूमत के लिए वे सदैव षड्यंत्र करने वाले 'क्रांतिकारी बोल्शेविक कम्युनिस्ट' बने रहे और वस्तुतः उनके काम हमेशा कम्युनिस्ट सिद्धान्तों और आदर्शों पर ही दृढ़ता के साथ पोषित-पल्लवित थे।

शौकत उस्मानी कांग्रेस में रहे तो कम्युनिस्ट साबित होते रहे और इतने जाने माने कम्युनिस्ट कि कांग्रेस की खिचड़ी कलचर में अपने आपको फिट नहीं कर पाए। कांग्रेसियों ने भीतर ही भीतर पार्टी के शीर्षस्थ पद पर न पहुँचने देने की तिकड़में चालू कीं और वे स्वयं तो पार्टी के पदाभिलाषी रहे ही नहीं, उन्होंने कई बार 'ऑफर'

ठुकरा भी दिए थे। वे सही मायने में क्रांति के लिए जो भी करणीय हो उसे करने को जी-जान से तत्पर रहते थे। उनके प्रकट और गुप्त सब प्रकार के कामों का नतीजा था कि उनकी प्रत्येक दिन की गतिविधि की खुफ़िया डायरी तैयार होती थी और गिरफ्तारी के समय कम्युनिस्ट या कांग्रेस या अन्य किसी पार्टी के बड़े से बड़े पदाधिकारी से पहले शौकत उस्मानी का नंबर आता था अथवा वे पहले नंबर की छापामारी में पकड़े जाते थे और वह भी हिंसावादी कम्युनिस्ट के रूप में। यद्यपि उस्मानी ने कभी किसी को रत्तीभर तकलीफ़ नहीं पहुँचाई, अलबत्ता जेल में चीखते हुए कैदी की आवाज़ सुनकर पुरज़ोर आवाज़ में उस 'मारपीट' को तत्काल रुकवा दिया। वास्तव में वे बहुत सहृदय और संवेदनशील व्यक्ति थे।

वे आर.एस.पी. (रिवोल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी) के सदस्य भी रहे। किन्तु जब उन्हें लगा कि पार्टी में 'सोवियत विरोध' का व्यापक रुझान है तो उन्होंने थोड़ी-सी अवधि के बाद ही अपने आपको अलग कर लिया, क्योंकि उन्हें पार्टी के इस रुझान के पीछे किसी प्रकार का तार्किक आधार नहीं दिखाई दिया। वे जब आपसी बहस में सोवियत संघ का पक्ष लेते तो पार्टी के अनेक नेताओं के गले नहीं उतरता था। कहा जा सकता है कि उस पार्टी में भी वे 'कम्युनिस्ट' माने जाकर उसके लिए दुश्पाच्य हो गए थे। भगतसिंह की पार्टी के नेताओं के साथ उनके घनिष्ठ संबंध रहे।

लंदन में छः साल की अवधि में वे वहाँ की लेबर पार्टी से इसलिए जुड़े कि उसके मंच पर अपने आप को खुल कर प्रकट करने का खुलापन अन्य दलों की अपेक्षा सबसे अधिक मात्रा में उपलब्ध था। उन्होंने भारत के गोवा मुक्ति आन्दोलन को वहाँ से प्रबल समर्थन देने के लिए अधिकाधिक उपयोग किया। यद्यपि ब्रिटेन की कम्युनिस्ट पार्टी के नेता उनके साथ सहअभियुक्त रह चुके थे और इसी पार्टी ने उनको चुनाव में अपना उम्मीदवार भी बनाया था, किन्तु उसका ट्रेड यूनियनवाद पर जरूरत से ज्यादा दारोमदार था और उस्मानी क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए एकमात्र ट्रेड यूनियनवाद को ही उपकरण के रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं थे। भारतीय कम्युनिस्टों द्वारा भी सर्वाधिक जोर ट्रेड यूनियनवाद पर दिया जाता था और उस्मानी इस विषय पर अपने मतभेद साफ़तौर पर जाहिर किया करते थे। लेबर पार्टी में भी वे कम्युनिस्ट के रूप में मशहूर हो गए थे। ब्रिटेन की नागरिकता लेने के अनुरोध को भी उन्होंने नकार दिया था और फिर उस पार्टी का साथ भी छूट गया।

काहिरा में दस साल तक रहते हुए वे बिना किसी पार्टी से संपर्क किए हर तबके के प्रगतिशील लोगों से जुड़े रहे और भारत के वामपंथियों के साथ संबंध बनाए रखा।

जब काहिरा से सन् 1974 में वापिस भारत आए तो भारतीय [illegible]निस्ट से जुड़ गए और अंत तक उसी के सदस्य बने रहे। अजय भवन, कार्यालय कार्यरत रहे जहाँ मेरठ केस के जेल के सहयात्री डॉ. अधिकारी पार्टी [illegible]

इतिहास लेखन का कार्य संपादित कर रहे थे।

उन दिनों एक उक्ति हरेक पढ़े-लिखे राजनीतिज्ञ की जबान पर रहती थी कि 'एक बार जो कम्युनिस्ट बन गया वह सदैव कम्युनिस्ट ही रहता है' और यह उक्ति और किसी पर पूरी तरह लागू हो या न हो, शौकत उस्मानी पर तो पूरी तरह चरितार्थ होती ही है। वे हिजरत के बहाने से हिन्दुस्तान की आज़ादी के लिए हथियारों की मदद लेने सोवियत यूनियन गए और वहाँ से कम्युनिज्म की शिक्षा लेकर वापिस लौटे तो उनके पास हथियार तो नहीं थे लेकिन एक उपाधि अवश्य थी और वह थी 'बोल्शेविक कम्युनिस्ट।' इस पद (बोल्शेविक कम्युनिस्ट) से उन्हें अंत तक मुक्ति प्राप्त नहीं हुई चाहे वे कांग्रेस में रहे हों, चाहे आर.एस.पी. में या ब्रिटेन की लेबर पार्टी की सदस्यता स्वीकार कर ली हो और एक बार सी.पी.आई. से अलग ही क्यों न हो गए हों—न तो किसी पार्टी ने, न विदेशी या देशी सरकार ने, न किसी नेता या आम आदमी ने और न ही उन्होने खुद ने ही इस 'शौकत उस्मानी' नाम के व्यक्ति को इस सम्मानित पदक—'बोल्शेविक कम्युनिस्ट' से अलग करके जाना और पहचाना।

वास्तव में वे जीवन भर ल्यू शाओ ची के मापदंड पर एक 'अच्छे और उच्च कोटि' के कम्युनिस्ट रहे।

शौकत उस्मानी के बहुआयामी व्यक्तित्व के विषय में अभी तक बहुत कम कहा गया है। कई पुस्तकों में चलते प्रसंगों में उनका उल्लेख भर किया जा सका है। तात्कालिक प्रचार तो अनेक दैनिक समाचार पत्रों और समकालीन पत्रिकाओं में उपलब्ध है, लेकिन समग्रता के साथ देखा जाय तो वह नितान्त अपर्याप्त ही प्रतीत होता है और नजरअंदाज किया हुआ भी।

उस्मानी की भूमिगत गतिविधियाँ बाहरी क्रिया-कलापों से किसी भी तरह कम महत्त्वपूर्ण नहीं थीं। उन्होने विशेष विकट परिस्थितियों के अनुसार अनेक प्रकार की वेशभूषा धारण की। कभी मोची का वेश धारण किया, कभी दरवेश, कभी पारसी बने तो कभी यूरोपियन। कहीं उनका नाम सिकन्दर सूर है, तो कहीं जॉनसन या जैक्सन अथवा यहाँ एक फ्रांसीसी नाम है तो वहाँ टर्की आदि। कहीं वे पर्शियन लहजे में बोले है तो कहीं रूसी, कही अग्रेजी स्वरयंत्र काम में लिया है तो कहीं पंजाबी, उर्दू या हिन्दी आदि। वे छात्रों में छात्र या शिक्षक बन कर काम करते रहे तो मजदूरों में मजदूर अथवा सैनिकों मे उन जैसे और बुद्धिजीवियों मे बुद्धिजीवी। वे पत्रकार भी थे, संवाददाता और संपादक भी तथा मंजे हुए स्वतत्र लेखक भी। नेता भी थे तो चिकित्सक भी। वे प्रचारक भी थे तो वितरण एजेंट भी। किसी जगह मैनेजरी की, तो किसी जगह मास्टरी या बाबूगीरी। जेलों में मूंज बटाई और बागवानी तो की ही। उन्हें गुप्तचरों को चकमा देने का अच्छा खासा अनुभव प्राप्त हो गया था और इसके लिए उनको चतुराइयाँ भी हासिल थी। लेकिन बचते-बचाते हुए भी केन्द्रीय ब्यूरो की आँखें उन्हें किसी न किसी तरह पकड़ने में पहल कर ही लेती

थीं। इस 'आँखमिचौनी' या 'तू डाल-डाल मैं पात-पात' के खेल का भागीदार होना ही उनकी एकमात्र नियति थी।

अनेक मुद्दों पर अपने दोस्तों और साथियों के साथ उस्मानी के गहरे मतभेद होते थे, लेकिन वे जिससे मतभेद रखते थे, उसके गुणों की सदा कद्र करते थे। एम.एन. राय के साथ मतभेद होते हुए भी वे सदा उनके गहन अध्ययन, उनकी प्रतिभा और अभिव्यक्ति के सबसे बड़े प्रशंसक रहे। यह गुण एम.एन. राय में भी था। राय उस्मानी का बहुत अधिक सम्मान करते थे और अपने पत्र और साप्ताहिकों में उस्मानी को उपयुक्त टिप्पणी के साथ उद्धृत और प्रकाशित करते थे। मुजफ्फर अहमद उस्मानी से ईर्ष्या रखते थे और उनके खिलाफ़ अनर्गल टिप्पणियाँ भी प्रकाशित करते थे। अहमद की जलन या उनके पूर्वाग्रह का प्रमाण उनकी पुस्तक 'The Communist Party of India and its Formation Abroad' या और कहीं यत्र तत्र देखा जा सकता है जिसमें उस्मानी को 'कट्टर संप्रदायवादी', 'अवसरवादी', 'ट्रॉटस्कीवादी' आदि फ़तवे दे कर कुमंडित किया गया है, जिनका सप्रमाण मुंहतोड़ जवाब उस्मानी के द्वारा ही अपनी 'आत्मकथा' और अन्य रचनाओं के माध्यम से दिया जा चुका है जिसे दोहराने की आवश्यकता नहीं। लेकिन उस्मानी ने मुजफ्फर अहमद की विशेषताओ को नकारा नहीं—अलबत्ता मतभेदों की ओर संकेत तो किया ही। उस्मानी के चरित्र की यह शालीनता उनका स्वभाव बन चुकी थी।

उस्मानी की लगभग सारी कृतियों का सृजन या तो जेल के सीखचों के भीतर हुआ अथवा आजादी के आन्दोलन के दौर में विविध प्रकार से जूझते हुए क्रियाकलापों की व्यस्तता के प्रवाह में। लेकिन लंदन की ब्रिटिश म्यूजियम सेन्ट्रल लाइब्रेरी में गहन अध्ययन के बाद रचित 'न्यूट्रिटिव वैल्यूज ऑफ फ्रूट्स, वेजिटेबल्स, नट्स एण्ड फूड क्योर्स' और अप्रकाशित रचना 'आत्मकथा' जैसी पुस्तकें इसके अपवाद कहे जा सकते हैं। इन दोनों में शौकत उस्मानी की मौन साधना को देखा जा सकता है। 'आत्मकथा' तो फिर भी उनके जीवन संघर्षों की घटनाओ से संबंधित है किन्तु 'फूड क्योर्स' जैसी पुस्तक तो उनके गहन अध्ययन और शोध का ही प्रतिफल है। इसकी विषयवस्तु ही उस्मानी को एक अन्य शीर्ष स्तर पर अवस्थित कर देती है। कोई कैसे सोच सकता है कि उस्मानी जैसा हलचल प्रकृतिवाला व्यक्ति लगातार छः साल तक शांत और सुस्थिर होकर एक आश्चर्यजनक अन्तर्वस्तु को वांछित और अपेक्षित स्वरूप प्रदान कर सकेगा। अनेक विपरीत परिस्थितियों में किए हुए उनके इस अथक प्रयास को एक अन्य प्रकार के संघर्ष की संज्ञा दी जा सकती है।

शौकत उस्मानी निरंतर संघर्षों में चलते रहे। उनका जीवन संघर्ष का पर्याय बन गया अथवा उन्होंने संघर्ष को ही जिया, संघर्ष को ही भोगा। यह देश की आज़ादी का संघर्ष था। यह सर्वहारा वर्ग के साथ मिलकर लड़ा गया संघर्ष था। यह साम्राज्यवादी शोषण और उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष था। यह विश्वयुद्ध के खिलाफ विश्वशांति के लिए संघर्ष था। यह क्रांतिकारियों का प्रतिक्रांति के विरुद्ध संघर्ष था। यह स

कट्टरता के विपरीत मोर्चेबन्दी का प्रयास था।

यह उस्मानी का हथियारबन्द संघर्ष था, यह उसकी जेल-यातनाओं को लगातार झेल कर किया जाने वाला संघर्ष था, यह उसके द्वारा निरंतर लंबी भूखहड़तालें करके अपने खून को सुखाते जाने का संघर्ष था, यह उसके भूमिगत रहते हुए भागदौड़ कर जागरण का बिगुल बजाते जाने का संघर्ष था। यह उसका मुखर संघर्ष भी था तो मूक संघर्ष भी। सारतः यह दानवी ताकतों को परास्त करने के लिए समूची मानवता का संघर्ष था। कोई उनसे पूछता कि अब हमें क्या करना चाहिए तो उस्मानी का उत्तर होता था–संघर्ष, संघर्ष...और संघर्ष!

रचनाकार

शौकत उस्मानी ने अपने जीवनकाल में लगातार साठ साल से अधिक साहित्य साधना की। उनकी इस साधना में जेल-यातनाओं और विविध राजनीतिक संघर्षों में व्यस्त रहने के कारण अनेक व्यवधान भी उपस्थित होते रहे, किन्तु इसके बावजूद उनकी लेखनी चलती रही। दरअसल उनका लेखन भी साहित्यिक संघर्ष ही बन गया था। एक ओर प्रकाशकीय समस्याएं थीं तो दूसरी ओर आए दिन पुलिस के द्वारा आकस्मिक छापे मारने से उत्पन्न परेशानियाँ। उनकी अनेक मूल्यवान रचनाएं तो छापामारी, प्रकाशकीय बदनीयती और इसी प्रकार के अन्यान्य कारणों से जन्मते ही मौत के मुँह में पहुँचा दी गईं।

उनकी रचनाओं के शीर्ष नाम इस प्रकार हैं:

रचनाएँ	भाषा
1. पेशावर टू मॉस्को	अंग्रेजी : अनुवाद–उर्दू, हिन्दी
2. अनमोल कहानियाँ	हिन्दी
3. फ़ोर ट्रवलर्स	अंग्रेजी : अनुवाद–उर्दू, हिन्दी
4. फौजी सितारा	उर्दू
5. ऐनिमल कान्फ्रेंस	अंग्रेजी
6. जंगल कान्फ्रेंस	अंग्रेजी
7. आइ मैट स्तालिन ट्वाइस	अंग्रेजी
8. जनरल स्ट्राइक	अंग्रेजी
9. मज़दूर का लड़का	उर्दू
10. इंडस्ट्रियल सर्वे ऑफ पर्शिया	अंग्रेजी
11. ए पेज फ्रॉम रशियन रिवोल्यूशन	अंग्रेजी
12. ग्लिम्पसेज़ ऑफ द हिस्ट्री ऑफ़ द पैलेस्टाइन : पास्ट एंड प्रेजेन्ट	अंग्रेजी
13. न्यूट्रिटिव वैल्यूज़ ऑफ़ फ्रूट्स, वैजीटेबल्स, नट्स एंड फूड क्योर्स	अंग्रेजी
14. हिस्टोरिक ट्रिप्स ऑफ़ ए रिवोल्यूशनरी	अंग्रेजी
15. ऑटोबायोग्राफी	अंग्रेजी
16. रूस यात्रा	उर्दू
17. जगदीश	हिन्दी
18. नाइट ऑफ़ एक्लिप्स	अंग्रेजी

इसके अलावा उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में भी काफी महत्त्वपूर्ण कार्य किया। 'अलफ़तह', 'इजिपशियन गजट', 'फ्री प्रेस जर्नल', 'रेडियन्स', 'कंपास' आदि पत्र-पत्रिकाओं में संपादन, सहसंपादन, राजनीतिक विश्लेषण, टिप्पणीकरण, स्वतंत्र लेखन, संवाद प्रेषण जैसी अनेक विधाओं में उन्होंने अपने नाम से या छद्म नाम से इतना गहरा और इतना अधिक मात्रा में लिखा कि उसका संकलन करना और उसका अध्ययन प्रस्तुत करना अपने आप में एक बहुत बड़ी समस्या है।

यह संभव है कि उनकी रचनाओं की सूची अपूर्ण हो और उसमें और कोई शीर्षनाम और जोड़ना पड़े। फिर यदि इसको ही पर्याप्त मान लिया जाय तो सबसे बड़ी अड़चन यह है कि उनके द्वारा लिखी गई पुस्तकों की संख्या में आधी से अधिक तो उपलब्ध ही नहीं हैं। जो उपलब्ध हुई हैं उनका संक्षिप्त परिचय इसी रचना में अन्यत्र दिया जा चुका है। यहाँ तक कि इनके अलावा न तो उनके परिवार के किसी सदस्य के पास कोई प्रति है, न ही किसी पुस्तकालय में और न ही किसी प्रकाशक के पास।

प्रकाशित (उपलब्ध)—

1. Historic Trips of a Revolutionary
2. अनमोल कहानियाँ
3. रूस यात्रा
4. Four Travellers
5. I Met Stalin Twice
6. Animal Conference
7. Jungle Conference
8. Nutritive Values of Fruits, Vegetables, Nuts and Food Cures.

अप्रकाशित (उपलब्ध)—1. Autobiography

बाकी सब रचनाएं अनुपलब्ध हैं।

उस्मानी साहित्य का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

यात्रा विवरण—1. Peshawar to Moscow
2. Historic Trips of a Revolutionary
3. रूस यात्रा

कहानी—1. अनमोल कहानियाँ
2. Night of the Eclipse

उपन्यास—1. Four Travellers
2. फौजी सितारा
3. General Strike
4. मजदूर का लड़का

5. जगदीश

साक्षात्कार—1. I Met Stalin Twice

व्यंग्य—1. Animal Conference

2. Jungle Conference

विश्लेषण—1. Industrial Survey of Persia

2. A Page from Russian Revolution

ऐतिहासिक विश्लेषण—1. Glimpses of the Histroy of the Palestine : Past and Present

आत्मकथा—1. Autobiography

शोध—1. Nutritive Values of Fruits, Vegetables, Nuts & Food Cures

शौकत उस्मानी ने सन् 1916 से अर्थात् पन्द्रह साल की किशोरावस्था से ही लिखना आरंभ कर दिया था और सन् 1978 के आरंभ तक अर्थात् जिन्दगी के आखिरी किनारे तक निरंतर लिखते रहे। इन छ: दशकों से भी अधिक समय में लिखा गया आधे से अधिक साहित्य अकाल मौत का शिकार कर दिया गया—पुलिस, किसी प्रकाशक या अन्य किसी के द्वारा।

उनके द्वारा लिखी गई बचपन की कविता की कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं :

ओ, मेरी आँखों के सितारे, ओ, मेरे स्वर्गोद्यान,
ओ, मेरी पवित्र जन्मभूमि, ओ, मेरे भारत!
एक समय था जब सारी दुनिया ईर्ष्या से निहारती थी
तुम्हारी संपदाओं औ तुम्हारे खूबसूरत बगीचों को
यूरोप के युवाओं के सपनों में भी तुम्हारे द्वार की धूल मिल गई
तो वे गहरी नींद से जग कर उल्लसित, चकित हो जाया करते थे
किन्तु अब
बाग उजड़ गया है
बुलबुल और फूलों को नष्ट कर दिया गया है
कौन है वह शैतान
जिसने लूट लिया है इस उद्यान को!

('आत्मकथा'—मूल अंग्रेजी से अनुवादित)

उपर्युक्त रचनावधि में अनेक प्रकार की राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय घटनाएँ घटित हुईं जिनका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। दादी अम्मा से सुनी 1857 के महाविद्रोह की कहानियों को वे बार-बार याद करते हैं। तिलाड़ीजी और संपूर्णानंदजी जैसे गुरुओं की राष्ट्रीय धारा की प्रेरणास्पद पहचान उनके मस्तिष्क में उथल-पुथल मचा रही है। स्वतंत्रता संघर्ष के विविध आयाम, जैसे गाँधीजी के सत्याग्रह कार्यक्रम, सविनय अवज्ञा, जगह-जगह मजदूरों की हड़तालें, किसानों के विद्रोह, जलियांवाला बाग

का निर्मम हत्याकांड, वामपंथी हलचल, भूमिगत क्रांतिकारियों के संगठनों की कार्यवाहियाँ आदि—उस रचनाकार की विषयवस्तु बन रहे हैं तो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर 'रूस की महान् अक्टूबर क्रांति' उद्वेलित किए जा रही है।

घर से निकल कर पेशावर और पेशावर से मॉस्को तक पहुँचने की घटनाओं ने तो जिस पहले प्रकाशन—'पेशावर से मॉस्को तक' को जन्म दिया उसने उस्मानी को अत्यंत व्यापक प्रचार प्रदान किया, तो उनके लिए आगे की गिरफ्तारियों की भूमिका भी भलीभांति तैयार कर दी।

कानपुर और मेरठ षड्यंत्र केसों में और फिर डी.आई.आर. में प्राप्त बंदी जीवन के अनुभवों की तीक्ष्णता-तीव्रता उनकी सारी रचनाओं में अनेक तरीको से उभर कर आच्छादित हो रही है।

उस्मानी की कहानियों में नारी उत्पीड़न की टीस है तो गुलामी की बेडियो को तोड़ने की संघर्षात्मक प्रक्रिया भी। रुक्मिणी, राधा और शैला के चरित्रांकन को उस्मानी जैसा कुशल कलाकार ही सफलता की मंजिल तक पहुँचा सकता है। रुक्मिणी तोडे गए प्रेम की त्रासदी में मरने की नियति की शिकार होती है। उसे संगतराश की लड़की बताया गया है जो लेखक की या पडौसी की किसी निकट की घटना के आधार की ओर संकेत करता है। 'डाह' में हसन और कमर नामों को हटा दिया जाय और क्रमशः शौकत उस्मानी और मुजफ्फर अहमद पढा जाय और हसन की आत्महत्या को कहानी से निकाल दिया जाय तो तत्त्वतः वह दो कम्युनिस्टों के संबंधों की दास्तान के रूप में प्रकट हो जायगी। कम्युनिस्ट शैला रूमानियत की तरंग में बहकर इश्कबाजी में फंस जाती है किन्तु जब उसे एहसास होता है कि वह जिसे चाहती है वह ऐयाश के अलावा और कुछ भी नहीं अर्थात् वह किसी भी सामाजिक सरोकार का व्यक्ति नहीं हो सकता तो वह उससे किनारा कर लेती है।

आज़ाद ख़याली की शिकार है राधा। वह सामाजिक परिवर्तन के लिए संगठनात्मक कार्य करने की प्रेरणा लेकर कार्यक्षेत्र मे उतरती है जिसके अच्छे परिणाम सामने आते है। लेकिन रूढ़िग्रस्त ससुराल में जब वह बिना घूंघट रहना चाहती है तो सास उसे घर में बंद करके पीट-पीट कर मार देती है। राधा के प्रगतिशील व्यक्तित्व को उभारते समय उस्मानी के मस्तिष्क में प्रतिबिंबित किसी रूसी नारी की छवि प्रतिष्ठित रही है।

'अनमोल कहानियों' की प्रत्येक कल्पनाकृति के आवरण को सरका कर देखने पर कहीं न कहीं कहानीकार स्वयं या उसका कोई भोगा हुआ यथार्थ मिल जाएगा। उस्मानी की रचनाओं को पढ़ने से पहले उस्मानी को खुद को अच्छी तरह पढ़, समझ लिया जाना उपयोगी होगा।

छात्र, नवयुवक, श्रमिक, बुद्धिजीवी तथा किसान की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों के यथार्थ और उनके द्वारा अपनी परेशानियों का सामान्यीकरण करके उनसे छुटकारा पाने के जद्दोजहद को उन्होंने अपनी औपन्यासिक संरचना के माध्यम से

मुखरित किया। हर रचना उस्मानी के भीतर को प्रतिबिंबित करती चली जाती है।

'फोर ट्रेवलर्स' का हिन्दी अनुवाद 'चार यात्री' और उर्दू तर्जुमा 'चार मुसाफ़िर' के रूप में सामने आया। इस लघु उपन्यास के चार किशोर यात्री कहीं पुलिस थाने में आग लगा कर भाग जाते हैं और उस्मानी के ही रास्ते अर्थात् पेशावर और फिर काबुल के रास्ते से सोवियत संघ में प्रवेश कर जाते हैं।

मनोवैज्ञानिक आधार को लेकर उस्मानी ने अपने आप को एक नये रूप में अभिव्यक्त किया है। कला की पृष्ठभूमि पर कथानक को खड़ा करके उसमें शौर्य, साहस, उल्लास, करुणा, शिष्ट शृंगार, रौद्र, वीभत्स और कुशलता के रंगों का ऐसा समायोजन किया है कि उसे बार-बार पढ़ने की रुचि बनी रहती है। स्वयं लेखक का अपनापन उसे एक जीवंत रचना बना देता है। एक ओर परतंत्र राष्ट्र की तड़पन है तो दूसरी ओर एक समाजवादी देश का बदलता हुआ स्वरूप।

उस्मानी अपने चार यात्रियों को उस मंजिल तक पहुँचाने में सफल होते हैं जहाँ किशोरावस्था में अनेक संभावनाओं का उद्घाटन होता है। प्राकृतिक और मानवीय सौंदर्य के प्रति आकर्षण और जिज्ञासा जगाने तथा रहस्यों के भीतर झांकने की सहज प्रवृत्ति के साथ ही शोषण और उत्पीड़न के विरुद्ध विद्रोह करने की आकांक्षा का एक ऐसा लोकमंच है 'चार यात्री' कि जिसका जोड़ अन्यत्र मिलना दुष्कर प्राय: है।

'फ़ौजी सितारा' एक और उपन्यास है जिसमें एक नौजवान के साहसातिरेक के साथ सोफनियत की रंगीनी, जासूसियत की जिज्ञासा और एशिया और यूरोप के मंचों पर प्रदर्शित विविध भूमिकाओं का सजीव चित्रण है। शातिर शमीम में रचनाकार ने स्वयं को ढाल कर एक नये प्रकार का व्यक्तित्व खड़ा कर दिया है। दुर्भाग्य से यह रचना भी अब उपलब्धि से परे है। प्रस्तुत टिप्पणी का आधार एक विज्ञप्ति है जो 'फ़ोर ट्रेवलर्स' के पीछे के कवर पेज पर अंकित की गई है।

'जनरल स्ट्राइक', 'मज़दूर का लड़का' और 'जगदीश' ऐसे उपन्यास थे जिन्हें पुलिस ने नष्ट कर दिया, अत: अधिकृत रूप से इनके विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। इनके विषय में न तो कोई टिप्पणी उपलब्ध है और न कोई विज्ञप्ति ही। इनका नामोल्लेख इनके रचनाकार उस्मानी ने एक नहीं, अपितु अनेक स्थानों पर किया है। फिर भी इन शीर्षकों और लेखक की अन्य रचनाओं और उसे क्रियाकलापों से सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इनमें श्रमिक वर्ग के शोषण, दमन और उत्पीड़न का यथार्थ चित्रण होगा और साथ ही संघर्ष की प्रक्रिया या उसकी तीव्रता की ओर अभिमुखता का आभास होगा। हो सकता है कि लेखक ने इनकी रचना में अपनी किशोरावस्था या जवानी को कल्पना का रंग दिया हो।

'I Met Stalin Twice' (मैं स्टालिन से दो बार मिला) पुस्तिका एक विशेष प्रकार की मिलन विवरणिका कही जा सकती है। इसमें उस स्टालिन की ... की झलक दी गई है जिसे दुनिया 'लौह पुरुष' और 'क्रूर तानाशाह' कह कर

हृदयहीनता की कहानियाँ गढ़ती रही है। दूसरी ओर इसमें कॉमिन्टर्न की बैठक का, जिसमें उस्मानी अध्यक्ष मंडल में शामिल थे–वह हवाला दिया गया है जिसमें विश्व के प्रसिद्ध कम्युनिस्ट नेताओं ने 'ट्रॉट्स्की' को लेकर स्टालिन पर जम कर प्रहार किए और स्टालिन भावावेगरहित मुद्रा में सुनते रहे, सहते रहे और अंत में जब उन्होंने सहज आर संतुलित स्वभाव में सप्रमाण तर्क प्रस्तुत किए तो सारा वातावरण एकदम बदल कर उनके पक्ष में हो गया। उस्मानी यह सिद्ध करने में सफल रहे हैं कि स्टालिन बिना दस्तावेज, सबूत अथवा तार्किक कारण के किसी भी नतीजे पर नहीं पहुँचते थे, जबकि अनेक साम्राज्यवादी दलाल लेखक स्टालिन को नितान्त अतार्किक, सत्तान्ध या मतान्ध, आत्मकेन्द्रित और अमानुषिक तथा अपने राजनैतिक समकक्षों की नृशंस हत्या करवाने वाले सत्तालोलुप व्यक्ति के रूप में काले रंग से कलंकित करने में कसरत करते चले जा रहे थे।

'हिस्टोरिक ट्रिप्स ऑफ ए रिवोल्यूशनरी' (Historic Trips of a Revolutionary) में 'पेशावर से मॉस्को', 'कराची से मॉस्को' और 'दिल्ली से मॉस्को' तक की तीन यात्राओं का समेकित विवरण है। यह उनकी अंतिम प्रकाशित रचना है। वैसे 'पेशावर से मॉस्को' तक की यात्रा का विवरण सन् 1927 में अलग पुस्तिका के रूप में प्रकाशित हुआ था और उसका इतना अधिक प्रचार हुआ था और इस पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में इतनी व्यापक प्रतिक्रिया हुई कि उस्मानी प्रत्येक राजनीतिज्ञ और स्वतंत्रता सेनानी में सुविख्यात हो गए। सन् 1920, 1928 और 1975 में की गई इन तीनों यात्राओं का परिचय आगे के पृष्ठों में देखने को मिलेगा। उस्मानी की अनेक रचनाओं में इनका उल्लेख मिलता है। 'रूस यात्रा' शीर्षक से एक अलग रचना भी है।

इसके अलावा 'A Page from Russian Revolution' में महान् अक्टूबर क्रांति के विश्वव्यापी प्रभाव का तथा लेखक के स्वयं के लिए उसके प्रेरणास्रोत होने का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

'Industrial Survey of Persia' और 'Glimpses of the History of Palestine : Past and Present' दोनों अनुपलब्ध हैं किन्तु शीर्षक ही उनकी विषयवस्तु की ओर संकेत देने में पर्याप्त हैं। इन दोनों रचनाओं को ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक कृतियों की श्रेणी में रखा जा सकता है।

शौकत उस्मानी के साहित्यिक प्रवाह में एक अप्रत्याशित मोड़ भी रहा है और उसे पहचाना जा सकता है उनकी अपवादस्वरूप रचना 'न्यूट्रिटिव वैल्यूज ऑफ़ फ्रूट्स, वेजिटेबल्स, नट्स एंड फूड क्योर्स, (फलों, सब्जियों, मेवों के पोषक मूल्य और भोज्य पदार्थीय चिकित्सा से) इस प्रकार के धारा घुमाव और अप्रत्याशित परिवर्तन की पृष्ठभूमि में उस्मानी की राजनीतिक उदासीनता या हताशा की झलक स्पष्टतया देखी जा सकती है। वे हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की सत्ताओं के प्रतिगामी चरित्र की बारीकियों को गहराई से परख चुके थे। श्रमिक-कृषक विरोधी कानून जीवित,

किन्तु उपेक्षित क्रांतिकारियों में घुटन पैदा कर रहे थे और वामपंथी और जनवादी पार्टियों के अन्तर्कलह जनसंघर्षों की भावधारा को मंद करते जा रहे थे तथा साथ ही सरकारी मंत्री सत्ताधिकारियों के माध्यम से उस्मानी जैसे वास्तविक स्वतंत्रता सेनानियों को जानबूझ कर पीछे धकेलते चले जा रहे थे। आशा निराशा में डूबती जा रही थी। उत्साह हताशा में विलुप्त होने लगा था।

किन्तु जीवन भर गतिशील रहनेवाला व्यक्ति निष्क्रिय और संन्यासी बन कर तो नहीं रह सकता—वह किसी न किसी स्वस्थ सक्रियता के परिक्षेत्र में पांव रख कर ही आगे बढ़ेगा। इसी मानसिकता में उस्मानी अपना मार्ग तलाशने में कामयाब हुए। उन्होंने कुछ महीनों के लिए किसी प्राइवेट फर्म में मामूली-सी नौकरी करके अलग प्रकार की कैद की विवशता को झेला ताकि कुछ राशि इकट्ठी करके अपने विषय के शोधकार्य को ब्रिटिश म्यूज़ियम सेन्ट्रल पुस्तकालय, लंदन में अध्ययनरत रह कर पूरा कर सकें। छः साल की अथक साधना के फलस्वरूप उन्होंने अपने मकसद को पूरा किया और उपर्युक्त ग्रंथ की रचना की।

इस बहुमूल्य शोध रचना पर डॉ. संपूर्णानन्द, जोगेश चंद्र चटर्जी, श्री प्रकाश, प्रो. ओ.पी. मोलेहानोवा आदि पारखियों ने जो अभिनंदनीय सम्मतियाँ प्रस्तुत की हैं, दर्शनीय हैं। इनमें मोलेहानोवा तो 'इंस्टीटयूट ऑफ़ न्यूट्रिशन, द एकेडमी ऑफ़ मेडिकल साइंस, मॉस्को, की इस विषय की विशेपज्ञा रही हैं।

पोपण और चिकित्सा दोनों का समन्वय मनुष्य के शरीरिक और मानसिक स्वास्थ्य और सौंदर्य के लिए अत्यंत आवश्यक है। यह समन्वय तभी संभव होता है जब हम प्रकृति की संपदाओं का भली-भांति ज्ञान प्राप्त करें और उनके समुचित और संतुलित उपयोग को अपनी ही प्रकृति का अंग बना लें। फलों, मेवों तथा जड़ी-बूटियों के रूप में हमें इस पृथ्वी ने जो कुछ दिया है उनसे अनेक कायिक और मानसिक विकृतियों से बचा जा सकता है। इन प्राकृतिक वस्तुओं के परीक्षण और विश्लेपण का विषय इतना व्यापक और जटिल है कि इन पर भारत और दुनिया के अन्य सभी देशों में विशेपज्ञों ने बड़ी-बड़ी शोध पुस्तकें लिख डाली हैं। शौकत उस्मानी की विशेपता यह है कि उन्होंने सरल से सरल भापा का प्रयोग करके सर्वसाधारण पाठक को इसकी गंभीरता को समझाने का सफल प्रयास किया है।

आज जहाँ विकसित देश ही पर्यावरण को प्रदूपित करने के लिए सबसे ज्यादा अमानवीय भूमिका अदा कर रहे हैं और पृथ्वी की समग्र मानवता को विनाश के कगार पर पहुँचाने में लगे हुए हैं। औद्योगीकरण की अंधी होड़, परमाणु बमों के परीक्षणों, अनुपयोगी वस्तुओं और कचरों तथा बिना बिके मालों के द्वारा महामृत्यु को निमंत्रण दे रहे हैं। ऐसे वातावरण में उस्मानी का यह शोध हमें जीवन को सुख, तन्दुरुस्ती और खूबसूरती की दिशा दिखाने का प्रयास कर रहा है। वह याद दिला रहा है कि 'स्वास्थ्य ही सच्चा धन है', 'तन्दुरुस्ती हजार नियामत' और 'स्वस्थ तन में स्वस्थ मन' आदि।

उस्मानी ने इसके माध्यम से जो देन दी है वह चिरकाल तक प्रासंगिक रहेगी। इससे आगे आने वाली न केवल इस देश की, अपितु विश्व के प्रत्येक देश की वर्तमान और भावी पीढ़ियाँ उपकृत होंगी। इस अर्थ में 'न्यूट्रिटिव वैल्यूज ऑफ फ्रूट्स, वेज़िटेबल्स, नट्स एंड फूड क्योर्स' को सांस्कृतिक भाषा में कालजयी कहा जा सकता है और इसके लिए लेखक के इस श्रम के लिए उसके प्रति आभार भी प्रकट किया जा सकता है।

उस्मानी की साहित्य शृंखला में भारी-भरकम कड़ी है उनकी अप्रकाशित रचना 'औटोबायोग्राफी' (आत्मकथा) 'यही मेरी ज़िन्दगी है।' आत्मकथा में लेखक अपनी कहानी की बारीक से बारीक और गुप्त से गुप्त बात को खोल कर रख सकता है और इसके साथ ही अपने पक्ष में अनेक प्रकार के स्पष्टीकरण भी प्रस्तुत करता है, अत: उसका भारी-भरकम होना स्वाभाविक ही होता है। वह अपनी स्वीकृतियों और अस्वीकृतियों को भी उसमें दर्ज कर ही देता है। सबसे अहम बात यह होती है कि लेखक द्वारा स्वयं का आत्मीकरण करने, अपनी टीसों का पुन: नवीनीकरण, अपने कटु-मधु संस्मरणों का फिर से साक्षीकरण करने और पूरे फैले हुए जीवन-पटल पर उतरी अपनी-परायी रेखाओं का ताजगी के साथ अंकेक्षण आदि करने के आखिरी मौके का उपयोग किया जाना होता है। ये सब बातें इस कथा पर भी लागू होती हैं।

हरेक की आत्मकथा अधूरी होती है जैसे कि किसी रचना के अंतिम छोर तक पहुँचने से पहले ही रचनाकार का निधन हो जाय और वह अपूर्ण रह जाय। कमबख़्त निधन इतना संवेदन-शून्य होता है। उस्मानी की आत्मकथा भी अपूर्ण है। इसमें उनके जीवन के एक दर्जन वर्षों की घटनाओं का उल्लेख नहीं मिलता। इसके अलावा उस्मानी ने अपनी और अपने परिवार की अनेक अंतरंग बातों को जानबूझ कर छिपा लिया है जैसे कहीं पर भी अपनी पत्नी और पुत्र के विषय में एक शब्द तक भी खर्च करने का कष्ट नहीं उठाया। जबकि कई घटनाओं को बार-बार दोहरा कर पुनरुक्ति का आरोप सिर पर मढ़ लिया है। इसमें उस्मानी के इकसठ या बासठ वर्षों का लेखा-जोखा ही आ सका है जबकि इसके बाद भी वे और पंद्रह-सोलह साल तक जीवित रहे थे। इस संभावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि उन्होंने उन चार सौ चौंसठ टाइपशुदा पूरे पृष्ठों के बाद उसमें पूरक पृष्ठ जोड़ दिए हों क्योंकि किसी एक जगह पर उन्होंने इसकी पृष्ठ संख्या के पांच सौ से ऊपर होने का उल्लेख किया है जो देखने को उपलब्ध नहीं हुए। ऊपर कही गई संख्या के पृष्ठ तरतीबवार एक ही जिल्द में बंधे मिले हैं और चार सौ चौंसठवें पेज के अंत में लिखा है-'बस यही है मेरी ज़िन्दगी।' इससे यह अनुमान भी लगाया जा सकता है कि चलत में बताई गई पृष्ठों की संख्या वृद्धावस्था की विस्मृति का कारण ही रही हो।

बहरहाल इसमें बचपन से लेकर लंदन में शोध करने तक की घटनाओं का

विस्तृत वर्णन पढ़कर ही संतोष किया जा सकता है।

आत्मकथा के सोलह भागों के अनेक अध्यायों में उनके द्वारा अपने आप को खतरे उठाने में पहल करने, कष्ट पर कष्ट झेलने, आजादी के लिए अनेक प्रकार के संघर्षों में अनवरत सक्रिय रहने, जेल के सीखचों के कटुतम अनुभव हासिल करने, केरकी की रक्षा करने, गहन अध्ययन करने, शारीरिक-मानसिक वेदनाओं और संवेदनाओं में से गुज़रने, राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का वस्तुगत एवं आलोचनात्मक विवेचन करने, आत्मालोचन प्रस्तुत करने, दूसरों के प्रति अपनी और अपने प्रति दूसरों की प्रतिक्रियाएँ दर्शाने और देश के विभाजन के कारणों से लेकर आज़ादी के बाद की दोनों देशों की वस्तुस्थितियों का यथार्थपरक विश्लेषण करने के लेखक: नायक के स्वरूप को रेखांकित किया है।

इस रचना में पुरातत्त्व और न्यायालय के दस्तावेजो, पत्र-पत्रिकाओं के उद्धरणों और अनेक साक्षियों को हूबहू सम्मिलित करके इसको पूरी तरह प्रामाणिक बना दिया गया है। लेकिन इसके संवादों, सुंदर और भयानक प्राकृतिक दृश्यों, मानवीय भव्यताओं, भावमय पद्यांशों और लोकगीतों की कड़ियों, रोमांचक वाक्यों और व्यंग्यात्मक चुटकियों ने इसे एक उच्चस्तरीय कलाकृति के रूप में भी प्रतिष्ठित कर दिया है। इस अर्थ में इसे आत्मकथा शैली का उपन्यास भी कहा जा सकता है। राजस्थानी, उर्दू, फारसी, हिन्दी और अंग्रेजी की कहावतों और मुहावरों के जड़ाव ने उस्मानी की कथा को अभूतपूर्व सज्जा से अलंकृत कर उसमें नई सजीवता का प्रादुर्भाव कर दिया है।

शौकत उस्मानी घर-परिवार से रहित होकर स्वतंत्रता सग्राम में जूझने वाला इतिहास पुरुष है और वह भी भारत के साथ-साथ सोवियत संघ, ब्रिटेन और मिस्र जैसे देशों के इतिहासों का पात्र और उनकी आत्मकथा भी उसी तरह राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं के विश्लेषण का एक प्रामाणिक इतिहास है। इसकी खासियत यह है कि इसमें घटनाओं का उतना उभार नहीं है और न ही उनको आकर्षण का केन्द्रबिन्दु बनाया गया है, बल्कि उनके आंकलन को प्रमुखता प्रदान की गई है।

इस 'आत्मकथा' की त्रासदी यह है कि देश की आज़ादी के लिए अपना सब कुछ छोड़-छाड़ कर अपनी जिन्दगी की आहुति दे दी उसका यह स्वजीवनालेख पिछले बीस साल से किसी अलमारी की कैद से आज़ाद होकर प्रकाश का दर्शन नहीं कर सका। इसके पीछे क्या कारण रहा है—इसके औचित्य को सिद्ध करते जाने से कोई लाभ नहीं। वह तो कोई भी कर सकता है क्योंकि हर बात की वकालत करने वाले तो सब जगह मिल ही जाते है। प्रश्न यहीं आकर अटक जाता है कि इसे और कितने अर्से तक इस जेलयातना को भुगतना पड़ेगा या कि उसे उम्र भर के लिए कैद की सज़ा मिली हुई है जो दीमक द्वारा पूरी तरह चट कर दिए जाने के बाद ही पूरी होगी। इसका जवाब राजधानी में स्थित भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के केन्द्रीय कार्यालय के अलावा और किसके पास होगा—इन पक्तियों के लेखक को इसका पता नहीं है।

उस्मानी ने अपने जीवन भर के अनुभवों को इसमें अंग्रेजी के माध्यम से पिरोया है। इसको किसी संस्थान से संपादित भी करवाया जा सकता है ताकि अनावश्यक पुनरोक्तियों से इसे मुक्त किया जा सके और इसकी प्रकाशन व्यवस्था हो। फिर उस संपादित संस्करण के हिन्दी और उर्दू भाषाओं में अच्छे अनुवाद तैयार करवाए जाएँ और उनकी भी सुचारु प्रकाशन व्यवस्था की जाय। यह सारा काम एक साल के भीतर कर दिया जाना चाहिए ताकि आलोचक इसकी समीक्षा करके इसका समीचीन आकलन प्रस्तुत कर सकें।

यों तो शौकत उस्मानी की प्रत्येक रचना का स्तर काफ़ी ऊँचा है और वह अपने आप मे बहुत महत्त्वपूर्ण है, लेकिन जो सबसे अधिक चर्चित रहीं वह हैं 'पेशावर से मॉस्को' और 'ऐनिमल कान्फ्रेंस'। 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' एक अत्यंत भव्य रचना है—विषयवस्तु और कला-सौंदर्य दोनों ही की दृष्टि से। इसकी अंतर्वस्तु समस्त मानवता को स्पर्श करती चलती है। विश्व की भयंकरतम घटना—हिरोशिमा और नागासाकी पर अमरीका द्वारा परमाणु बम फेंके जाने के फलस्वरूप हुए उन नगरों के सर्वनाश की विभीषिका पर दुनिया भर के साहित्य में पहली प्रतिक्रिया व्यक्त की शौकत उस्मानी ने तीखे से भी तीखे व्यंग्य भरे तेवर के साथ अपनी 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' में। उस्मानी अपने जीवन में केवल 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' की ही रचना करते तो इसी से साहित्य जगत में अपनी पहचान बनाने में सफल हो सकते थे।

'ऐनिमल कान्फ्रेंस' का पूरक भाग 'जंगल कान्फ्रेंस' है यद्यपि ये दोनों अलग-अलग पुस्तकाकार में प्रकाशित हुई हैं, जिसकी वजह 'जगल कान्फ्रेंस' का बाद में लेखन और प्रकाशन होना है।

'ऐनिमल कान्फ्रेंस' के विषय में 'संडे स्टैंडर्ड' (बंबई) ने लिखा कि 'यह अब तक की सर्वश्रेष्ठ रचना है।' 'बोम्बे क्रॉनिकल' (साप्ताहिक) के अनुसार 'जंगल के समस्त जीवधारी एक साथ एकत्रित होकर वर्तमान विश्वस्थिति का परीक्षण करते हैं और उनके परिवेश में हस्तक्षेप करने वाले मानव प्राणी की नियति का विश्लेषण करते हैं।' 'द टाइम्स ऑफ सीलोन' (कोलंबो) का कहना है—'लेखक एक ऐसी स्थिति पैदा कर देता है कि जानवर हिमालय की तराई मे इसलिए सम्मेलन में इकट्ठे होते है कि वे यह तय करें कि मानव के पृथ्वी पर न बचे रहने की हालत में कितनी कुशलता के साथ इस धरती पर अपना शासन चला सकेंगे। शौकत उस्मानी का विश्वास है कि अमरीका और ब्रिटेन परमाणु बमों के आक्रमण करके इस मानव जाति का विनाश कर देंगे।'

बंबई के 'जमहूरियत' के मतानुसार 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' जगख़ोरी ताकतों के मुँह पर एक सधा हुआ तमाचा है।' काका डी.आर. हरकरे इस रचना को 'पूर्व का शांति संदेश' कहकर अभिनंदित कर रहे है, तो लंदन से चौधरी अकबर ख़ाँ की टिप्पणी है कि 'लेखक ने बहुत ही सुंदर भाषा में आज की संघर्षशील राजनीति को अभिव्यक्ति प्रदान की है।' इटली से ए. रब ने शौकत उस्मानी की इस चमत्कृत

कृति पर हार्दिक बधाई देते हुए 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' को 'वास्तव में एक बहुत बढ़िया रचना' बताकर अपनी प्रसन्नता प्रकट की। इग्लैंड के रेवेंड फ़ादर डब्लू.जे. रिंजर ने पुस्तक को 'सर्वाधिक सुरुचिपूर्ण' रूप में दर्शाया।

एलेक हैरिसन (लंदन)—'ऐनिमल कान्फ्रेंस' निश्चय ही उच्च स्तर की रचना है जिसे अभिव्यक्ति का आदर्श उदाहरण कहा जा सकता है। 'नेशनल हेराल्ड' लखनऊ की मान्यता है कि 'परमाणु हथियारों पर व्यंग्य करने वाली यह कृति लेखक द्वारा जंगखोरों के विरुद्ध की गई तीव्र प्रतिक्रिया को प्रतिबिंबित करती है।' बंबई के 'इन्कलाब' पत्र ने कहा—'यह उन जंगखोर ताकतों की साजिशों पर मुक्तकंठ से किया गया व्यंग्य है जिन्होंने नैतिक मूल्यों को तिलांजलि दे दी है, जो दूसरों की जिन्दगी से खेल रही हैं और मानवता का विनाश करने पर आमादा हैं।'

बंबई से 'इंडियन एक्सप्रेस' ने लिखा—'व्यंग्य रचना में रुचि रखने वाले पाठकों में इस पुस्तक की लोकप्रियता का सबूत इस बात से ही मिल जाता है कि चार साल के थोड़े से अर्से में ही तीसरा संस्करण निकालना पड़ा है। आम जनता ने इसे 'शांति संदेश' कह कर इसकी सराहना की है।... वास्तव में यह आनन्दप्रद पठन सामग्री है। और बंबई के 'भारत ज्योति' ने परमाणु हथियारों के खिलाफ़ इस मार्मिक लघु रचना के प्रति आभार व्यक्त किया।

सन् 1945 ई. की 6 और 9 अगस्त की सुबह अमरीका ने क्रमशः हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बम छोड़ कर संपूर्ण मानवजाति की आत्मघाती संभावनाओं का संकेत दे दिया था और शौकत उस्मानी ही विश्व साहित्य का वह पहला व्यंग्यकार था जिसकी तीक्ष्णतम प्रतिक्रिया 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' के रूप में तत्काल विद्युत् प्रवाह की तरह फैल गई अथवा यह भी कहा जा सकता है कि अमरीका की इस महाविनाशकारी करतूत के खिलाफ़ उस्मानी द्वारा किया गया लेखकीय प्रत्याक्रमण था। यह मर्मभेदी चोट थी। ध्वंस के खिलाफ़ रचना का, शांति का व्यापक संदेश था—विश्व मानव की सुरक्षा के लिए आह्वान! इससे बढ़ कर कोई क्या कर सकता था। सबने उस्मानी का आभार माना।

व्यंजना की एक झलक में अमेरिका के नैतिक मूल्यों पर इस प्रकार चोट की जाती है—'हिटलर, उसके कब्जे में तो सारी परमाणु ऊर्जा थी, लेकिन उसने परमाणु बम के प्रहार के 'घृणित काम' को अमरीका के लिए छोड़ दिया ताकि वह हिरोशिमा और नागासाकी पर इसे करके पूरा करे!'

एक जगह कुत्ता विन्सटन चर्चिल के चेहरे की तुलना करते हुए कहता है—'वास्तव में यह तो सर्वमान्य सत्य है कि यह चेहरा तो हमारे गोत्र के 'बुलडॉग' की वंशावली के चेहरे से हूबहू मेल खा रहा है।'

इसका परिचय देते समय जो कुछ कहा गया है उसका एक अंश इस प्रकार है:

प्रस्तुत रचना के संरचनात्मक संगठन का अध्ययन करने से शौकत उस्मानी

के गहरे अनुभवों का परिचय मिलता है। 'मैनज़ुइन रिपब्लिक्स' की प्राक्कल्पना, 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' में चुनाव पद्धति का होना, एजेन्डे पर बहस का संचालन, फिर प्रस्ताव—बीमारी के लक्षण, निदान और उपचार तथा उपचार के बाद निगरानी का प्रबंध। प्रस्तावों को नीचे की जड़ों तक पहुँचा कर उन्हे सार्वजनिक बनाने हेतु 'वाटर ऐनिमल कान्फ्रेंस' और 'बर्ड कान्फ्रेंस' के रूप में विभागीय संगठनों के सम्मेलनों के आयोजन, जिनमें केन्द्रीय पर्यवेक्षक द्वारा रिपोर्टिंग करना, अंत में एक संविधान को स्वीकृत और अंगीकृत करना और फिर 'सामूहिक नृत्यगान' के साथ 'सुखांतिका' की भारतीय साहित्य परंपरा का निर्वाह करते हुए 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' की परिसमाप्ति की घोषणा। तत्पश्चात् उत्तरार्द्ध में सब विभागों सहित एक 'प्लेनम' के रूप में 'जंगल कान्फ्रेंस' को संयोजित कर उसे सैद्धांतिक रंग देना। इतने लघुकाय ढांचे का इतना सुव्यवस्थित, इतना सुन्दर स्वरूप! बहुत कम, बहुत ही कम देखने को मिला करता है।

'ऐनिमल कान्फ्रेंस' मे मानवेतर जीव-जगत के विविध प्राणियों और मानवों के स्वयं के हावभाव, स्वभाव और आवेग, आवेश, सहजता और रहस्यमयता; कुटिलता क्रूरता, चतुरता एवं तस्करी, चाकरी व चाटुकारिता आदि का समेकीकरण करके उसको जीवंत लेखांकन का उदाहरण बना दिया गया है। यों तो चित्रमयता सर्वत्र व्याप्त है, किन्तु दो-तीन नमूने पेश करना ही पर्याप्त होगा—

शेर ने अपना विशाल भाल ऊपर उठाया मानो उत्सुक हो, हाथी ने उसके इशारे को दोस्ताना अंदाज़ में समझ लिया। शेर मुस्कराया और उसने भरपूर आत्मविश्वास के साथ कहा...।' 'हाथी ने अपनी सघन सूंड को प्रशंसा की मुद्रा में ऊंचा उठाया, हँसा और कहा—'हे, भद्र, भद्र! लेकिन तुम्हारी (शेर की) सदैव की सलाहकार मिस लोमड़ी के बारे में क्या कहना है, क्या तुमने उस माननीया से सलाह करना बंद कर दिया है?'...

गाय ने अपने चंदीले सींगों को हिलाया, ऊंट ने अपनी लंबी गर्दन को, कुत्ते ने अपनी पूंछ हिलाई और बंदर ने अपने नथने कंपकंपा कर सहमति व्यक्त की।'

जगह-जगह लोकोक्तियों और मुहावरों की बहार है, जैसे—'जो इन्दा पाविन्दा (पर्शियन) अर्थात् 'जिन खोजा तिन पाइयां', 'चट मंगनी पट ब्याह' (राजस्थानी), 'काजी जी दुबले क्यों? शहर के अंदेशे में।' (उर्दू) और 'केम छे, सारो छे' (गुजराती) अर्थात् कैसे हो—सब ठीक।

यहाँ बिल्ली शेर की मौसी है तो लोमड़ी उसकी सलाहकार। संबोधन के रूप में 'फ्रेंड्स एंड कॉमरेड्स' का प्रयोग मिलेगा।

इस अमूल्य धरोहर की प्रासगिकता तब तक बनी रहेगी जब तक कि परमाणविक हथियारों से इस धरती को मुक्त नहीं कर दिया जायगा।

और उस्मानी की अंतिम रचना है जनवरी सन् 1978 में लिखित एक लघु निबंध, जिसका शीर्षक है—(The Forgotten Ones) 'द फोर्गोटन वन्स' (वे, जिन्हें

भुला दिया गया)। इस टाइपशुदा रचना के भी केवल प्रारंभिक दो पृष्ठ ही उपलब्ध हो सके हैं जिनका अनुवादित अंश पीछे के पृष्ठों में दे दिया गया है। इसको प्रामाणिक बनाने के लिए ही प्रथम पृष्ठ के हासिये में उस्मानी ने अपने सांकेतिक हस्ताक्षर कर दिए हैं। यह अंतिम रचना इस अर्थ में है कि इसे स्वयं टाइप करने के एक माह बाद अर्थात् 26 फरवरी सन् 1978 को तो उनका निधन ही हो गया था।

इसमें उस्मानी 31 साल पहले के उस दिन का स्मरण कराते हैं जब भारत से विदेशी सत्ता को पदच्युत होकर यहाँ से विदा होना पड़ा था और अब देश 29वें गणतंत्र दिवस को मनाने जा रहा है। किन्तु साल-दर-साल इन राष्ट्रीय पर्वों के आयोजन के बावजूद क्या हम वास्तव में उन शहीदों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित कर पाते हैं जिन्होंने आज़ादी के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी थी।

यहाँ लेखक के अन्तरतम की वेदना झलकती है। उन्होंने न केवल अपनी बल्कि सारे स्वंतत्रता सेनानियों की पीड़ा को अभिव्यक्ति दी है। उस्मानी ने यहाँ भारत के प्रत्येक क्षेत्र के शहीदों और संघर्षरत जुझारुओं को अपने श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए देश में व्याप्त शोषण और उत्पीड़न की ओर इंगित किया है। उन्होंने कम्युनिस्ट आन्दोलन के संदर्भ में कानपुर और मेरठ षड्यंत्र केसों में (जिनमें वे अग्रिमपंक्ति में गिरफ्तार किए गए थे) जेल-यातनाएँ भोगने वाले बहादुरों का उल्लेख करते हुए एक ओर उनके साहस का अभिनंदन किया है तो दूसरी ओर उनके प्रति उपेक्षा दिखाए जाने की कृतघ्नता को भी उजागर किया गया है।

इसके आगे के पृष्ठों के अनुपलब्ध होने के कारण इसके निष्कर्षों को तो बता पाना संभव नहीं है। पर उन्होंने शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले, वतन पर मरनेवालों का यही बाकी निशां होगा।' जैसी पंक्तियां दोहरा कर उस युग के प्रवाह को फिर से ताज़गी दे दी।

* * * *

शौकत उस्मानी की अधिकतर रचनाएँ अंग्रेजी में लिखी गईं और बाद में उनके उर्दू, हिन्दी या अन्य भाषाओं में अनुवाद हुए। संभवत: अधिकतर अनुवाद उन्होंने खुद ने ही किए होंगे। 'अनमोल कहानियाँ' की रचना हिन्दी में की गई थी तो 'फ़ौजी सितारा', 'मज़दूर का लड़का' और 'रूस यात्रा' अथवा एकाध कोई अन्य रचना उर्दू में। भाषा के उपयोग के विषय में फेर-बदल भी संभव है, लेकिन यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उस्मानी ने ज्यादातर अंग्रेजी में ही लेखन-कार्य किया। वैसे उस्मानी मैट्रिक से आगे किसी शिक्षण संस्था में नही पढ़े, लेकिन फिर भी उन्होंने अपने स्वाध्याय से अंग्रेजी के धाराप्रवाह बोलने और लिखने की महारत हासिल कर ली थी।

भाषा के संबंध में उल्लेखनीय है कि हिन्दी में जो प्रेस छापामारी [illegible] में आ गए उनसे सीख लेकर अन्य प्रकाशक उस्मानी जैसे खतरनाक लेखक
लगे। लगभग यही हाल उर्दू प्रकाशकों का भी था और उर्दू साहित्य

दिक्कत भी थी कि उसका प्रसार क्षेत्र काफी सीमित था। संभवत: ये कठिनाइयाँ अंग्रेजी के संबंध में उतनी मात्रा में नहीं थीं। प्रकाशको की विश्वसनीयता भी प्रश्नों के घेरे में होती थी और उस्मानी कुछेक से भोग भी चुके थे—पैसा पांडुलिपियाँ गंवाकर। शायद इसीलिए अपनी कई पुस्तकों के प्रकाशक वे स्वयं ही थे।

चाहे जिस भाषा में उन्होंने लिखा हो, प्रत्येक में अंग्रेजी, उर्दू, हिन्दी, राजस्थानी और पर्शियन आदि अन्य देशी-विदेशी भाषाओं का सुंदर समन्वय मिलेगा। यह उनके बहुभाषी लेखकीय व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का परिचायक है। पता नहीं कितनी ही भाषाओं के शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, कहावतें, पद्यांश, लोकगीतों के प्रयोग उनकी किसी भी रचना में से छांटे जा सकते हैं। शब्दों के द्वारा बहुत सारी संस्कृतियो की झलक एक साथ देखने को मिल जायगी। अनेक देशों की सभ्यताओं का समायोजन उनकी रचना को अन्तर्राष्ट्रीयता के स्तर तक ले जाने में सक्षम है। उस्मानी के लिए भाषा के प्रवाह को सहज बनाए रखना आवश्यक प्रतीत होता है, इसके लिए वे अंग्रेजी को इन्द्रधनुही बना कर अपनी ही शैली का आविष्कार कर लेते हैं।

सरल सीधी-सादी भाषा में छोटे-छोटे वाक्य प्राकृतिक और मानवीय सौंदर्य को कितनी सहजता के साथ दर्शाते प्रतीत होते हैं:—

'कार्तिक के दिन हैं, दरख्त मिट्टी से लदे हुए हैं, हवा भी बहुत कम चलती है इसलिए मिट्टी को भी पेड की पत्तियों पर खूब जमने का अवसर मिला है, सामने नदी के किनारे एक नीम के तले चर्खा लिए हुए एक सत्रह-अठारह वर्ष की सुन्दर लड़की जिसका सीना उभरा हुआ है, रंग गेहुंआ है, भौहें काली कमानों की तरह झुकी हुई हैं, आँखें ऐसी हैं जैसे लबालब प्याले, नदी पर आने वालों से बेख़बर, पत्तियों से झड़ने वाली धूल से अनजान सी बैठी चर्खा कात रही है। कभी-कभी वह अत्यंत सुरीली लय में गाना गाती है—'साजन सोना ले गए, सूना कर गये देश।' गीत की एक-दो कड़ियाँ कह कर वह खतम हुई पूनी को उतारती है, कभी तकले को उतारती है, कभी सर से उतरी हुई धोती को सम्हालती है और गीत गाना शुरू कर देती है।'

('आज़ाद ख़याली की शिकार—राधा' से)

इसी तरह से अन्य उद्धरण उनकी अंग्रेजी और उर्दू की रचनाओं में जगह-जगह देखने को मिल जायेंगे।

जगह-जगह प्रभावशाली संवाद है किन्तु बड़बोलापन कहीं नहीं। जिसने जैसा कहा उससे कम ज्यादा कहने की जरूरत ही नहीं दिखाई देती। उस्मानी की हिन्दी भी हिन्दुस्तानी है तो उर्दू भी हिन्दुस्तानी और यहाँ तक कि उनकी अंग्रेजी भी एक प्रकार की हिन्दुस्तानी ही कही जा सकती है। किसी भाषा में शास्त्रीयता के आडंबर का प्रवेश करने ही नहीं दिया गया, लेकिन इससे गहनता को कहीं क्षति नहीं पहुँची।

उस्मानी के पत्रों में किशोर और युवा पीढ़ी के मजदूर-मजदूरनियाँ, कम्युनिस्ट और क्रांतिकारी लोग और अन्य निहायत ग़रीब नर-नारी हैं। सब एक-दूसरे की और

स्वयं की आर्थिक और सामाजिक विषमताओं से पीड़ित हैं। सब समाज में परिवर्तन के आकांक्षी भी हैं और सचेष्ट भी। वे पांडित्य और शास्त्रीयता की पाखंडपूर्ण शब्दावली को नहीं चाहते। अपने जीवन में उन्होंने पुलिस की मार झेली है। लाठी, गोली, आगज़नी का सामना किया है जिसमें उनके साथी चल बसे हैं। उन्होंने हड़तालें और भूख हड़तालें की हैं तो वे उच्च वर्ण के द्वारा मसले-कुचले भी गए हैं। इसलिए भीतर का एक कोना टीसता-सिसकता है तो दूसरा गुस्से से सुर्ख़ कर देता है। उस्मानी अपने पात्रों के साथ एकमेक होकर भोगता है, इसलिए जितना वह यथार्थ है उतना ही उसका कृतित्व भी यथार्थ है। केवल नाम ही काल्पनिक हैं और यदि उनको हटा कर देखें तो वे सुपरिचित से प्रतीत होंगे। न कहीं चमत्कार है, न छिपाव-दुराव और न ही अतिरंजना।

ऐनिमल कान्फ्रेंस तो मानवेतर प्राणियों की ही दुनिया है जहाँ 'म्याऊँ-म्याऊँ', 'भौं-भौं' की ध्वनियाँ निकाल कर या गर्जन-तर्जन करके या फिर सिर ऊँचा करके अथवा पूंछ हिला कर ही सारे प्रस्ताव रखने पड़ते हैं और बहस होती है, संशोधन पेश किए जाते हैं और फिर उन्हें पारित करने के लिए राय मांगी जाती है। उस्मानी को इन प्राणियों को भाषा देने में विशेष मेहनत करनी पड़ी होगी।

आत्मकथा में भाषागत विविधता का होना स्वाभाविक ही है तो 'न्यूट्रिटिव वैल्यूज़' की विषयवस्तु ही शोधपरक है। अन्य कृतियाँ विवरण और विश्लेषण प्रधान होंगी जो अधिकतर अनुपलब्ध हैं। औपन्यासिक रचनाओं अथवा कहानी संकलनों में चुस्ती की अधिकता का होना स्वाभाविक ही लगता है।

* * * *

उस्मानी अपने युग के राजनीतिक साहित्यकारों की प्रथम श्रेणी के रचनाकार थे। उन पर अपने पूर्वकालिक और समकालीन प्रगतिशील साहित्य, उस युग के अपने अनुभवों तथा साथ ही अपने साथियों के अनुभवों और उस दौर के घात-प्रतिघात से उभरी छवियों और छायाओं का प्रभाव रहा है जिसे उन्होंने अपनी रचनाओं में ढाला है।

प्रत्येक लेखक की आत्मकथा उसकी अपनी होती है जिसकी तुलना किसी और की आत्मकथा से नहीं की जा सकती, फिर भी उसकी राजनैतिक विश्लेषण-शैली से इतिहास की रचना की जा सकती है। इस दृष्टि से उस्मानी की आत्मकथा को भी बड़े गर्व के साथ सारे स्वतंत्रता सेनानियों की आत्मकथाओं की श्रेणी में रख कर देखा जा सकता है।

उनके कथानकों का विकसित स्वरूप यशपाल, कृशनचंदर, और अब्बास में देखा जा सकता है तो व्यंग्य हरिशंकर परसाई, राजेन्द्र माथुर और शरद जोशी में। ऐतिहासिक विश्लेषणों में वे प्रायः इस देश में भी रहते रहे हैं तो उसके आर-पार की दृष्टि भी प्रतिष्ठित करते हैं।

* * * *

प्रकाशकों ने उस्मानी की कई कृतियों को तो गुम किया ही, इसके अलावा कुछेक को फेर-बदल के साथ किसी के नाम से भी छपवा कर बेच दिया। उनकी खुद की छापी पुस्तकों का भी मामूली-सा पैसा देकर हिसाब चुकता कर दिया जबकि उन प्रकाशकों ने उससे काफ़ी पैसा कमाया।

*   *   *   *

शौकत उस्मानी की रचनाओं मे पुनरुक्तियों ने प्रवाह और प्रभाव मे व्यवधान ही उपस्थित किया है। केवल व्यंजना इसका अपवाद है। कथानकों की अंतर्वस्तु में अनेक समानताएँ हैं।

उनके जीवन की अस्तव्यस्तता ने एक प्रकार की अस्थिरता को ही पैदा किया है जिसका असर उनके शारीरिक और मानसिक वातावरण को प्रभावित करता रहा है। राजनैतिक दृष्टि से भी वे कई परिवर्तनों में से गुज़रने को विवश हुए दिखाई देते हैं। इसकी वजह से उनकी प्रहारशक्ति में शिथिलता का प्रवेश होना स्वाभाविक ही था। वे विभिन्न दलों के आंतरिक संघर्ष मे जूझने के बजाय उन से किनारा करते गए। इसका नतीज़ा यह हुआ कि उनको अपनी कई दिशाओं के मोड़ तलाशने पड़े। इन विविध मोड़ों की झलक अभिव्यक्ति के बिखराव के रूप में परिलक्षित होती है। कुछ हद तक इसे आत्मकेन्द्रीयता में भी शुमार किया जा सकता है।

उनका आधे से अधिक साहित्य आज तक उपलब्ध नहीं हो सका है, इसलिए ऐसे उच्चस्तरीय रचनाकार की समग्र रूप से समीक्षा करना संभव नही दिखाई देता और न ही उसका औचित्य प्रमाणित किया जा सकता है। अच्छा यही हो कि इसके लिए और अधिक प्रयास किए जाएँ और उनके इस क्षेत्र के कृतित्व का सही मूल्यांकन किया जाकर उनका उपयुक्त स्थान निर्धारित किया जाय।

साहित्य की सबसे बड़ी पकड़, उसकी प्रभावोत्पादकता और उसकी प्राप्ति इस बात पर निर्भर करती है कि उसके रचयिता ने अपनी और अपने साथ सबकी अन्तर्वेदना को कितनी गहनता के साथ अभिव्यक्ति दी है और वह किस वर्ग के हितों को प्रतिबिम्बित करती है। इस अर्थ मे यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि शौकत उस्मानी एक महान् साहित्यसर्जक थे। मानवीय भावना और चेतना के अनुपम शिल्पी थे। स्वंतत्रता संग्राम के विविध आयामों के एकमात्र निरपेक्ष चितेरे थे। 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' की उलटबासियों की तुलना में तो कोई ठहरता ही नहीं। उनके कथानकों में जिन सामाजिक मूल्यों को प्रस्थापित किया गया है वैसा अन्यत्र कहाँ मिलेगा।

जो कुछ भी हमें प्राप्त हो उसको उसी रूप में 'शौकत उस्मानी रचनावली' के नाम से प्रकाशित किया जाना न केवल अपेक्षित ही है, अपितु उसकी अनिवार्यता भी है ताकि आगे के समीक्षकों को शोधसामग्री उपलब्ध हो सके और भावी पीढ़ियाँ आगामी संघर्षों के लिए प्रेरित की जा सकें।

इस रचनावली के संपादन—प्रकाशन से पूर्व उनकी विशेष उपलब्ध रचनाओं

जैसे 'ऐनिमल कान्फ्रेंस', 'जंगल कान्फ्रेंस', 'नाइट ऑफ द एक्लिप्स', 'फोर ट्रेवलर्स' और 'न्यूट्रिटिव वैल्यूज़' को हिन्दी-उर्दू अनुवाद सहित पुनर्मुद्रित करवाया जाय और अप्रकाशित रचना 'औटोबायोग्राफी' को संपादित करके उसे शीघ्र प्रकाशित किया जाय और फिर उसके भी हिन्दी-उर्दू संस्करण निकाले जाएँ। क्या कोई संस्था या सरकार एक सुदृढ़, क्रांतिकारी स्वंतत्रता सेनानी के प्रति इतनी-सी श्रद्धांजलि नहीं दे सकती जबकि पता नहीं कितने कलमघिस्सुओं को आज पुरस्कारों से लादा जा रहा है।

वस्तुतः शौकत उस्मानी ने अपनी रचनाओं से समूचे रचना संसार को गौरवान्वित किया है। इस अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त क्रांतिकारी कलाकार के प्रति जितनी अधिक कृतज्ञता प्रकट की जाय वह भी कम ही होगी।

प्रकाशकों ने उस्मानी की कई कृतियों को तो गुम किया ही, इसके अलावा कुछेक को फेर-बदल के साथ किसी के नाम से भी छपवा कर बेच दिया। उनकी खुद की छापी पुस्तकों का भी मामूली-सा पैसा देकर हिसाब चुकता कर दिया जबकि उन प्रकाशकों ने उससे काफ़ी पैसा कमाया।

* * * *

शौकत उस्मानी की रचनाओं में पुनरुक्तियों ने प्रवाह और प्रभाव में व्यवधान ही उपस्थित किया है। केवल व्यंजना इसका अपवाद है। कथानकों की अंतर्वस्तु में अनेक समानताएँ हैं।

उनके जीवन की अस्तव्यस्तता ने एक प्रकार की अस्थिरता को ही पैदा किया है जिसका असर उनके शारीरिक और मानसिक वातावरण को प्रभावित करता रहा है। राजनैतिक दृष्टि से भी वे कई परिवर्तनों में से गुज़रने को विवश हुए दिखाई देते है। इसकी वजह से उनकी प्रहारशक्ति में शिथिलता का प्रवेश होना स्वाभाविक ही था। वे विभिन्न दलों के आंतरिक संघर्ष में जूझने के बजाय उन से किनारा करते गए। इसका नतीजा यह हुआ कि उनको अपनी कई दिशाओं के मोड़ तलाशने पड़े। इन विविध मोड़ों की झलक अभिव्यक्ति के बिखराव के रूप में परिलक्षित होती है। कुछ हद तक इसे आत्मकेन्द्रीयता में भी शुमार किया जा सकता है।

उनका आधे से अधिक साहित्य आज तक उपलब्ध नहीं हो सका है, इसलिए ऐसे उच्चस्तरीय रचनाकार की समग्र रूप से समीक्षा करना संभव नहीं दिखाई देता और न ही उसका औचित्य प्रमाणित किया जा सकता है। अच्छा यही हो कि इसके लिए और अधिक प्रयास किए जाएँ और उनके इस क्षेत्र के कृतित्व का सही मूल्यांकन किया जाकर उनका उपयुक्त स्थान निर्धारित किया जाय।

साहित्य की सबसे बड़ी पकड़, उसकी प्रभावोत्पादकता और उसकी प्राप्ति इस बात पर निर्भर करती है कि उसके रचयिता ने अपनी और अपने साथ सबकी अन्तर्वेदना को कितनी गहनता के साथ अभिव्यक्ति दी है और वह किस वर्ग के हितों को प्रतिबिम्बित करती है। इस अर्थ मे यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि शौकत उस्मानी एक महान् साहित्यसर्जक थे। मानवीय भावना और चेतना के अनुपम शिल्पी थे। स्वंतत्रता संग्राम के विविध आयामों के एकमात्र निरपेक्ष चितेरे थे। 'ऐनिमल कान्फ्रेंस' की उलटबांसियों की तुलना में तो कोई ठहरता ही नहीं। उनके कथानकों में जिन सामाजिक मूल्यों को प्रस्थापित किया गया है वैसा अन्यत्र कहाँ मिलेगा।

जो कुछ भी हमें प्राप्त हो उसको उसी रूप में 'शौकत उस्मानी रचनावली' के नाम से प्रकाशित किया जाना न केवल अपेक्षित ही है, अपितु उसकी अनिवार्यता भी है ताकि आगे के समीक्षकों को शोधसामग्री उपलब्ध हो सके और भावी पीढ़ियाँ आगामी संघर्षों के लिए प्रेरित की जा सकें।

इस रचनावली के संपादन—प्रकाशन से पूर्व उनकी विशेष उपलब्ध रचनाओं

जैसे 'ऐनिमल कान्फ्रेंस', 'जंगल कान्फ्रेंस', 'नाइट ऑफ द एक्लिप्स', 'फोर ट्रेवलर्स' और 'न्यूट्रिटिव वैल्यूज' को हिन्दी-उर्दू अनुवाद सहित पुनर्मुद्रित करवाया जाय और अप्रकाशित रचना 'औटोबायोग्राफी' को संपादित करके उसे शीघ्र प्रकाशित किया जाय और फिर उसके भी हिन्दी-उर्दू संस्करण निकाले जाएँ। क्या कोई संस्था या सरकार एक सुदृढ़, क्रांतिकारी स्वंतत्रता सेनानी के प्रति इतनी-सी श्रद्धांजलि नहीं दे सकती जबकि पता नहीं कितने कलमघिस्सुओं को आज पुरस्कारों से लादा जा रहा है।

वस्तुतः शौकत उस्मानी ने अपनी रचनाओं से समूचे रचना संसार को गौरवान्वित किया है। इस अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त क्रांतिकारी कलाकार के प्रति जितनी अधिक कृतज्ञता प्रकट की जाय वह भी कम ही होगी।

उपलब्ध रचनाएँ : एक परिचय

अनमोल कहानियाँ–(हिन्दी)–लेखक–शौकत उस्मानी, प्रकाशक–श्रमजीवी साहित्य सदन, साजन्स बिल्डिंग, केसरगंज, अजमेर (राजपूताना) मार्च–1939, पृष्ठ—100, मुद्रक—पं. खूबचन्द शर्मा, देहली कमर्शियल प्रेस, देहली।

व्यवस्थापक द्वारा पाठकों से—'...इन कहानियों का मरहठी, गुजराती, उर्दू व गुरुमुखी संस्करण शीघ्र ही निकालने की व्यवस्था की जा रही है। शौकत उस्मानी लिखित 'चार मुसाफिर' और 'जनरल स्ट्राइक' (General Strike) नामक दो महत्त्वपूर्ण राजनैतिक क्रान्तिकारी कहानियों की पुस्तकें शीघ्र ही इसी संस्था से प्रकाशित होने वाली हैं।'

कहानियाँ—(1) रुक्मिणी, (2) डाह, (3) बद्री का शौक, (4) भग्न हृदय, (5) नरेन्द्र—दोस्त था मगर रफीक (Comrade) नहीं था, (6) कम्युनिस्ट शैला (Love is a Bourgeois Prejudice), (7) शफ़ातुल्लाह, (8) फन्दा, (9) आज़ाद ख्याली की शिकार—राधा, (10) पुराना खर्राट—रूसी लेखक मिखायल जसचेन की रूसी कहानी का उस्मानी द्वारा उर्दू अनुवाद और उसका हिन्दी रूपांतरण और (11) बाप का बदला।

उपर्युक्त सभी कहानियाँ जीवन की यथार्थ भूमि पर आधारित हैं और प्रगतिवादी साहित्यधारा का प्रतिनिधित्व करती हैं। सामाजिक और राजनैतिक परिवेश में रचित कथानकों में लेखक की संवेदनशील अनुभूतियाँ मुखरित हुई हैं।

उन्नीस-बीस रुपये मासिक आय के संगतराश की लड़की रुक्मिणी की शादी मजबूरन उससे काफ़ी कम उम्र के लड़के से कर दी जाती है और घटनाक्रम का विकास एक दफे रुक्मिणी को उसके पूर्व प्रेमी रतन से छिपे तौर पर मिला देता है, किन्तु मुलाकात का भेद खुल जाता है। रुक्मिणी को बुरी तरह पीटा जाकर अधमरा कर दिया जाता है। वह पाबन्द कर दी जाती है। फिर मानसिक तनाव और शरीरिक रुग्णता की शिकार होकर मर जाती है। इस गरीब लडकी की मौत पर सिवाय रतन के कोई रंजीदा नहीं होता और वह भी होता है भीतर ही भीतर। एक त्रासदी!

एक ही पार्टी के दो मेम्बर हैं हसन और कमर तथा आपस में दोस्त भी। हसन सही मायने में क्रांतिकारी था। वह जान जोखिम में डालकर काम करता था। देश-विदेश में प्रसिद्ध होने लगा और उसकी बढ़ती हुई मशहूरी ने उसके दोस्त कमर में राजनीतिक 'डाह' पैदा कर दी। वह उसके खिलाफ़ ऊल-जलूल प्रचार करने लगा। आखिर उसने जाल रचकर हसन को पार्टी से निकलवा दिया। हसन इस सदमे को सहन न कर सका और 30 साल की उम्र में ही उसने खुदकशी कर ली। उभरते

राजनैतिक जीवन की आत्महत्या!

'बद्री का शौक' कहानी का नायक एल्जिन मिल का बुनकर मजदूर है। उसे 'मजदूर राज' आने पर अटल विश्वास है और साथ ही यह भी कि उसके आने पर ही हर प्रकार के शोषण और अत्याचार का अंत तो होगा ही साथ ही सारी मुसीबतें खतम हो जायेंगी। इस आस्था को लेकर वह 'मज़दूर राज का प्रचारक' बन जाता है और हर जगह भाषण देने लगता है। सहज सरल अभिव्यक्ति दूसरों पर असर करने लगती है। इस बढ़ते प्रभाव को देखकर सरकारी तंत्र बौखला जाता है और एक सभा में भाषण देने के अपराध में बद्री को जेल की सजा काटनी पड़ती है और पाठक सोच सकता है कि बद्री के परिवार का क्या हाल हुआ होगा और खास कर उसकी जवान बहिन का जिसकी वह शादी करना तय कर रहा था।

आत्मकथा शैली में लिखी गई है कहानी—'भग्नहृदय।' वैहलेरिया नायक की प्रेमिका है, लेकिन वह ठहरा एक ग़रीब मजदूर—मोटर फैक्टरी में पुर्जे बनाने वाला और वह थी चार गांव के मालिक फौजी पेंशनर जनरल सवाडो की लड़की! नायक (सीरियो) जनरल के यहाँ उसके पाइप की सफाई करने रोज जाता है और वह वैलेरिया को और किसी और से मंगनी का तय होते हुए भी वैलेरिया उसको चुराई नज़र से देखते हैं—भीतर ही भीतर एक दूसरे पर फिदा होते हैं। हालात मोड़ लेते हैं—नायिका के माँ-बाप एक सप्ताह के लिए बाहर जाते हैं और वैलेरिया सीरियो को पत्र लिखकर बुलाती है। दोनों खूब मिलते हैं। जर्मनी भागने की योजना बनती है। सारी तैयारी हो जाती है, लेकिन ऐन मौके पर भागते समय पकड़ लिए जाते हैं। सीरियो की खूब पिटाई होती है और उसे पुलिस के हवाले कर दिया जाता है। वैलेरिया अदालत में सीरियो के साथ अपनी मौहब्बत को कबूल करती है और बाप को आरोपित करती है कि वह उसे किसी और के साथ शादी करने को मजबूर कर रहा है इसलिए उन दोनों को भागने को विवश होना पड़ा। लेकिन मजिस्ट्रेट का फैसला उल्टा होता है और सीरियो को एक साल की सजा हो जाती है और वैलेरियो अगले दिन से ही हमेशा के लिए घर से भाग जाती है। 'भग्नहृदय' एक दुःखांतिका बन कर रह जाती है।

19 साल का एक नौजवान कम्युनिस्ट 'नरेन्द्र' कॉलेज छोड़ मजदूरों मे साहित्य बांट कर आन्दोलन में कूद पड़ता है। वह एक प्रखर वक्ता भी है। पुलिस उसके पीछे पडती है मगर वह वेष बदलकर काम करता रहता है और पकड़ में नहीं आता। उसकी गिरफ्तारी के लिए दो हज़ार रुपए की घोषणा भी कर दी जाती है। छिपते भागते वह अपने मित्र विनोदी के पास चला जाता है। विनोदी ने दगा करके अपने भाई सुरेश के हाथों पत्र देकर पुलिस को सूचित करना चाहा, पर सुरेश ने पत्र पढ़ लिया और उसने पत्र पहुँचाने की झूठमूठ खबर अपने भाई को दी और मौका पाकर नरेन्द्र को उस चंगुल से निकाल दिया। काश, विनोदी भी 'कॉमरेड' होता।

'कम्युनिस्ट शैला' गोआ से भागकर भारत आती है और बंबई के मज़दूरों

में काम करने लगती है। पहले तो पार्टी में उसकी गतिविधियों को परखा जाता है और बाद में उसे मजदूर औरतों को पार्टी की शिक्षा देने के काम में नियुक्त किया जाता है। ईसाई लड़की होने के कारण पुलिस भी उसको नज़रअंदाज करती है। वह देश के अनेक हिस्सों में काम करती घूमती है। इसी दौरान उसकी ज़िन्दगी में आर्थर नाम का नौजवान आता है जो होम मेम्बर के सैक्रिटेरियट में क्लर्क है और गैर राजनीतिक है। शैला की असावधानी का फ़ायदा उठाकर आर्थर उसका एक लिफाफाबंद पार्टी संदेश होम मेम्बर को पहुँचा देता है। पार्टी को खबर लगती है और वह इस पर गंभीरता से विचार करती है। बहस होती है और शैला अपनी गलती स्वीकार कर लेती है। उसे समझ आ जाता है कि सिद्धांतहीन व्यक्ति से मोहब्बत करना पार्टी के लिए कितना घातक होता है। शैला को पंजाब में सावधानी के साथ काम करने को भेज दिया जाता है। खोखली इश्कबाजी के चोंचलेपन पर पटाक्षेप!

हज्जाम शफ़ातुल्लाह गिरहकटों में शामिल होकर पकड़ा जाता है और तीन माह की सजा काटने के बाद 'ठाकर सी मोरार जी मिल' में काम करने लगता है। जबान का तेज तर्रार वह अपनी और अपने खानदान की डींग हाँकता फिरता है। मज़दूरों की बस्ती के लोग सुनते-सुनते तंग आ जाते हैं। एक दिन किसी मज़दूर ने जवाबी हमला बोलते हुए खानदानी नवाबी या नवाबी रिश्तेदारी के शोषण और ग़रीबों की मेहनत पर जीने की शैतानियत का ऐसा खुलासा किया और साथ ही कामगारों और किसानों पर ऐसा फ़ख्र जताया कि शफ़ातुल्लाह आहत और परेशान हो गया और बदला लेने की सोचने लगा। लेकिन जब वह अपनी बीवी को लाता है और एक दिन बातों ही बातों में किसी पड़ोसिन के सामने शफात के खानदानी हज्जाम होने का राज खुल जाता है तो हवाई किला काफ़ूर हो जाता है।

खुफिया विभाग के अधिकारी परेशान हैं कि क्रांतिकारी अशरफ पांच साल की सज़ा भुगतने के बाद चुप क्यों है और वे उसके बारे में क्या रिपोर्ट भेजें जबकि अशरफ़ का बाप एक ओर उसके जेल की यातना से अस्वस्थ होकर उसका इलाज करवाने में लगा होता है और साथ ही घर की गरीबी से जूझने के लिए उसे नौकरी करने को और शादी करके घर बसाने को राजी कर लेता है। सी.आई.डी. वाले जाल ('फंदा') रचते है और किसी हसन अली को माध्यम बनाकर एक सभा का आयोजन करवा देते हैं जिसका विषय होता है—'क्रांति और देश के युवक'। सभा जुड़ती है और अशरफ सदारत करते हुए आखिर में बहुत जोशीला भाषण दे मारता है। पांचवें रोज पुलिस वाले उसे गिरफ्तार कर लेते है। अशरफ के पिता के मंसूबे बिखर जाते हैं।

'आज़ाद ख़याली की शिकार—राधा' के पति कल्याणसिंह को टैक्स न देने और जमींदार के आदमी पर हमला करने के ज़ुर्म में पांच साल की कैद हो जाती है। राधा से उसकी शादी दो महीने पहले हुई थी, गौना भी नहीं हुआ था जिसकी तैयारी चल रही थी कि यह घटना हो गई। राधा दिन भर चर्खा चलाती और वियोग

का गीत गाती अपना समय बिताती है। एक दिन उसका बचपन का साथी लछमन उसके यहाँ आ जाता है और उसको राधा की शादी और उसके तुरंत बाद की घटना की जानकरी मिलती है। लछमन संगठन और संघर्ष की बात समझता है और तकरीर करके मजदूर-किसान एकता की बात इस तरह पेश करता है कि राधा उसे गांठ बांध लेती है। रूस में औरतों की क्रांतिकारिता की दलील तो उस पर बेहद असर करती है। उसमें जागृति पैदा हो जाती है। वह जगह-जगह जाकर लोगों को संगठित होने का आह्वान करने लगती है। कुछ उसे 'राधे पगली' कहते हैं पर वह प्रचार करती जाती है। लछमन भी गांव में प्रचार करता घूमता है। इनके काम से किसान संगठित होते हैं। इधर कल्याणसिंह सज़ा काट कर घर आता है। वह संगठन देखकर खुश होता है। वह राधा को घर ले आता है। उसने पर्दा हटा दिया। सास ने उसे घर में बन्द करके बहुत पीटा और उसके घर से बाहर जाने पर पाबंदी लगा दी। कल्याण मां के सामने चुप था। आखिर राधा घुटती-पिटती एक दिन दम तोड़ देती है। यों होती है नारी के स्वतंत्र विचारों की निर्मम हत्या।

रूसी लेखक मिखायल ज़सचेन की लघुकथा का शौकत उस्मानी ने अनुवाद किया है 'पुराना खर्राट' शीर्षक से। इसमें पाई-पाई का हिसाब मांगनेवाले एक पुराने हिसाब-क्लर्क की मनःस्थिति का चित्रण है।

सी.आई.डी. इंस्पेक्टर हिदायतुल्ला के बेटे लतीफ़ का खून खौलने लगता है जब उसे यह मालूम होने लगता है कि उसका बाप 'आज़ाद खयाली युवकों व क्रांतिकारियों को' गिरफ्तार करवा जेल भिजवाता है क्योकि वह बढ़ती उम्र के साथ खुद स्वतंत्र विचारों का होता जा रहा है। वह मन ही मन बाप से नफ़रत करने लगता है।

हिदायतुल्ला एक 'साम्यवादी षड्यंत्र' का पता लगाने में कामयाब हो जाता है—गुप्त छापाखाना, क्रांतिकारी साहित्य और बीस मजदूर व विद्यार्थियों के ठिकाने। वह सरकारी तंत्र में मशहूर होकर तरक्की का दावेदार हो जाता है। लतीफ मन में बाप से बदला लेने की सोचता है। जब बाप दौरे पर गया तो उसने खोजते-बीनते उसकी जेब से नोट-बुक निकाल कर पढ़ी जिसमें उसी की कॉलेज के एम.ए. के विद्यार्थी विपिन बिहारी के मकान पर रविवार को साम्यवादियों की एक गुप्त बैठक होने की सूचना थी। लतीफ़ शुक्रवार को ही पूछताछ कर कॉलेज में विपिन से संपर्क करता है और आगाह कर देता है और यह भी बता देता है कि वह भी पार्टी सदस्य न होते हुए भी साम्यवादी है।

सबके मना कर दिए जाने के कारण मीटिंग नहीं हुई। पुलिस आई और विपिन के घर की तलाशी हुई, पर मिला कुछ नहीं। हिदायतुल्ला को मुँह की खानी पड़ी। गद्दारी करने वाले खबरनवीस पार्टीमैन रहमत अली को लताड़ा गया।

घर आकर हिदायतुल्ला ने नोटबुक संभाली तो उस सूचना वाले पेज पर निशान के रूप में एक छोटा चिट मिल गया। उसने लतीफ़ को जा पकड़ा और

मारा-पीटा और फिर गिरफ्तार करवा दिया। चुराने का मुकदमा चलता है, दो साल की सख्त कैद की सजा दी जाती है तथा जेल में विविध प्रकार की अमानुषिक यंत्रणाएँ। छः माह में ही वह *'जिन्दगी की कैद व फिरंगी की जेल दोनों से मुक्त होकर मुर्दों की बस्ती में जा बसा।'*

यह है 'अनमोल कहानियाँ' की आखिरी पेशकश!

'अनमोल कहानियाँ' युवा क्रांतिकारी शौकत उस्मानी की चिरस्मरणीय ओजपूर्ण जीवन की अनुभूतियों की कलात्मक मार्मिक अभिव्यक्ति है—एक भोगा हुआ यथार्थ। सामाजिक राजनीतिक पृष्ठभूमि पर तिक्तता के साथ हृदयस्पर्शी एवं साथ ही सौंदर्यमय भावबोध की संरचना!

उस्मानी ने अपने इन्कलाबी कामों के कारण जिन्दगी का बेहतरीन हिस्सा जेलों की यंत्रणाएँ भोगते बिताया। उनकी अधिकांश कहानियों के पात्र जेल में कष्ट उठाकर अपनी जिन्दगी की आहुति देते हुए दिखाई देते हैं चाहे वह बद्री हो, चाहे *'भग्नहृदय'* का नायक, *'फंदा'* का अशरफ़ और *'बाप का बदला'* का लतीफ हो। उस्मानी की तरह ही उनके अधिकांश पात्र मजदूर-किसानों के राज को लाने के लिए अपने अरमानों को कुर्बान करते हैं। ज्यादातर घटनाएँ दर्द की दास्तानें हैं—शोषित पीड़ित इंसानों के भीतर की आंच से जलती हुई।

रुक्मिणी और राधा सामाजिक संकीर्णता की बलि चढ़ती है तो अशरफ़ और लतीफ़ राजनैतिक विभीषिका के शिकार। *षड्यंत्र, ईर्ष्याद्वेष, धोखेबाजी आदि विकृतियाँ* कथानक के अन्तर्द्वंद्वों को उभारते हैं।

सब मिलाकर 'अनमोल कहानियाँ' अंग्रेजी राज के खिलाफ उस्मानी के रचनामय स्वतंत्रता संग्राम का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है।

उस्मानी की भाषा को हिन्दी उर्दूमयी चुस्त हिन्दुस्तानी कहा जा सकता है जिसमें कहीं-कहीं शायरी का रंग भी है, जैसे :

ता सहर वह भी न छोड़ी तूने ओ बादे सबा
यादगार रौनके महफिल थी परवाने की खाक़ (रुक्मिणी)

प्राकृतिक और मानवीय सौंदर्य का समन्वय भी उनकी लेखनी से उतर कर *कितनी आकर्षक छवि बिखेरता है, इसे 'राधा' में देखा जा सकता है :*

'कार्तिक के दिन हैं, दरख्त मिट्टी से लदे हुए हैं, हवा भी बहुत कम चलती है इसलिए मिट्टी को भी पेड की पत्तियों पर खूब जमने का अवसर मिला है, सामने नदी के किनारे एक नीम के तले चर्खा लिए हुए एक सत्रह-अठारह वर्ष की सुन्दर लड़की जिसका सीना उभरा हुआ है, रंग गेहुँआ है, भौंहें काली-काली कमानों की तरह झुकी हुई हैं, आँखें ऐसी हैं जैसे लबालब प्याले, नदी पर आने वालों से बेखबर, पत्तियों से झड़ने वाली धूल से अनजान-सी बैठी वह चर्खा कात रही है। कभी-कभी वह अत्यंत सुरीली लय में गाना गाती है—'साजन सोना ले गये, सूना कर गये देश।' गीत की एक-दो कड़ियाँ गाकर वह खतम हुई पूनी को उतारती है, कभी

तकले को उतारती है, कभी सर से उतरी हुई धोती को सम्हालती है और फिर गीत गाना शुरू कर देती है!' (आज़ाद खयाली की शिकार—राधा)

प्रस्तुत रचना के पुनर्मुद्रण की आवश्यकता है और उसको समीक्षा की कसौटी पर कसकर उसका उच्चस्तरीय मूल्यांकन करने की भी।

'चार यात्री' का प्रकाशन हिन्दी में और 'चार मुसाफ़िर' का प्रकाशन उर्दू में सन् 1939 ई. में हुआ। 'Four Travellers' का अंग्रेजी में प्रकाशन 'USTA Publication Corp.' द्वारा सन् 1950 में किया गया जिसका मुद्रण 'CRESCET Printing Press A.M. 25, FRERE Road, Karachi' द्वारा किया गया। शौकत उस्मानी से उस समय संपर्क करने का पता उन्हीं की कलम से अंकित किया हुआ मिलता है—Shaukat Usmani, P.O. Box No. 1768, Saddar Karachi-3 (Pakistan), इस अंग्रेजी संस्करण के भीतर बाएं पृष्ठ पर लेखक के सिर पर टोप पहना हुआ चित्र है और दाहिने पृष्ठ के शीर्ष पर लिखा है 'Four Travellers' by Shaukat Usmani, Alias Sikandar Sur.

Four Travellers रचना को लेखक द्वारा समर्पित किया गया है 'खुदीराम बोस और उन अन्य शहीदों की स्मृति को, जिन्होंने अपने प्राणों का बलिदान भारत में अथवा उससे बाहर कहीं पर इस विशाल उपमहाद्वीप की आज़ादी के लिए किया।' कराची संस्करण में दिनांक 27 जून, 1950 ई. को अपने उपनाम के विषय में उस्मानी द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण भी छपा हुआ है।

'भूमिका' के अनुसार इसकी रचना सन् 1930 में हुई थी, किन्तु इसका प्रकाशन नौ साल बाद होने के कारणों में से एक यह भी था कि 'उर्दू प्रकाशक मेरे (उस्मानी के) स्तर के राजनैतिक लेखकों को पसंद नहीं करते थे।' इसलिए 'उसके बाद मैंने उर्दू में लिखना छोड़ दिया, वजह यह कि उर्दू मेरी मातृभाषा नहीं है—मैंने अंग्रेजी और उर्दू एक ही साल पढ़ना शुरू किया था। मैं राजस्थानी हूँ और स्वभावतः मेरी भाषा राजस्थानी है।'

उस्मानी की अनेक पांडुलिपियां पुलिस छापामार कर ले गई और नष्ट कर दीं। उन्हीं के शब्दों में, 'कहाँ है मेरी 'जनरल स्ट्राइक', कहाँ है 'मज़दूर का लड़का', कहाँ गया 'Industrial Survey of Persia' और कहाँ है 'A Page From the Russian Revolution' जिसे मेरठ में किसी उर्दू लेखक द्वारा अनूदित करके अपने ही नाम से छाप दिया गया। मेरे साहित्य के विकास में सबसे बड़ा रोड़ा था अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद का शैतानी पंजा जिसने मुझे कभी तसल्ली से नहीं बैठने दिया और यौवन के सोलह साल सीखचों में हड़प लिए अर्थात् कानपुर षड्यंत्र केस 9 मई, 1923 से 26 अगस्त, 1927, मेरठ षड्यंत्र केस 20 मार्च, 1929 से 1 जुलाई, 1935 और द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान 16 जुलाई, 1940 से जनवरी, 1945 तक। यह कीमत मुझे स्वतंत्रता संग्राम में अपनी भूमिका की एवज में चुकानी पड़ी!'

'चार यात्री' के विषय में लेखक ने खुलासा कर दिया है कि यह एक सच्चाई

से भरा उपन्यास है। कुछ नाम काल्पनिक हैं, कुछ सही। शदीवा एक यथार्थ महिला है, रूसी नेता और गणराज्य के वर्णन भी यथार्थ हैं। चौथराम और उसके साथियों के नाम काल्पनिक हैं किन्तु ये व्यक्ति हिन्दुस्तान में ही पैदा हो चुके थे!

157 पृष्ठ के इस लघु उपन्यास को 'फ़रार होना' से लेकर 'स्कूल' तक पंद्रह परिच्छेदों में विभाजित किया गया है। बहुनायकीय इस कृति का केन्द्र किशोरावस्था है। चारों बालक श्रमिक वर्ग के हैं। आयु 14-15 साल की है। अंग्रेजी साम्राज्यवाद के खिलाफ भारतवासियों ने जंग छेड़ रखा है जिसके कई रूप हैं। हड़तालें, लाठी, गोली, आगजनी, तोड़-फोड़, हत्या आदि सब कुछ चल रहे हैं। अनेक केन्द्रों में से बंबई भी एक केन्द्र है। अशरफ़, मनीराम, बाबू और चौथराम जैकब सर्किल के ब्रिटिश पुलिस थाने को आग लगाकर भाग जाते हैं। इनके पास नाचने-गाने की कला है। वेश बदले हुए ये चारों बांसुरी, खंजरी और ढोलक लिए सरे बाजार और गली-कूचों में नाच-गाकर पैसा कमा कर चलते रहते हैं और छः महीने के बाद पेशावर पहुँच जाते हैं। वे तय करते हैं कि ब्रिटिश पुलिस के पंजों से बचने के लिए काबुल के रास्ते से सोवियत संघ में प्रवेश कर जाएंगे और तब वहाँ मजदूरों की सरकार उन्हें हर प्रकार की मदद कर देगी। यहाँ से यात्रा शुरू होती है और अपने नाम बदल लेते हैं—बाबू 'अकबर', मनीराम 'हमीद' और चौथराम 'हैदर' हो जाता है और अशरफ़ को अपना इस्लामी नाम बदलने की आवश्यकता नहीं दिखाई पड़ती।

ख़ैबर दर्रे को दिसंबर की असह्य ठंड में पार करते हुए, ठहर कर कहीं अपनी कलाबाजी से पैसे बटोर कर आगे बढ़ते हुए काबुल पहुँच जाते हैं। वहाँ उन्हें गर्म कोट-पेंट ख़रीदने पड़ते है जो सस्ते भाव मिल जाते हैं। इस प्रकार वे तीन-चार महीने गुज़ार कर वसंत ऋतु के आरंभ में पुनः काफ़िलों के साथ आगे बढ़ जाते हैं। तीन दिन बाद जाबुल-अस-सिराज़ (प्रकाश पर्वत) पहुँचते हैं। पहाड़, नदी, झरनों के अद्भुत प्राकृतिक सौंदर्य का आनन्द उठाते हुए और कारवांसराय में विश्राम करते हुए वे गुलबहार छोडकर उन पहाड़ों की उस चढाई के लिए अपने आपको तैयार करने लगे जिसे पार करना कुशलतर पर्वतारोहियों के लिए भी अत्यंत कष्टसाध्य कार्य है।

'जब तुम इन बीहड़ वन-जंगलों के नज़दीक आओगे तो कुछ हद तक भारत में हिमालय और अरावली के घने जंगलों को भूल जाओगे। पर्वतों पर चढ़ते हुए इन दोस्तों ने इतने भयानक दृश्य देखे जिनकी कभी कल्पना तक नहीं की गई थी। रास्ते के सीधे ऊपर से उन्हें लटकते हुए ऊँचे शिलाखंडों का सामना करना पड़ा जो सिर्फ मनुष्यों को ही नहीं बल्कि सैकड़ों हाथियों को भी बड़ी आसानी से धकेल कर कुचल सकते थे।'

'कुछ ऐसे स्थान और ठहराव थे जहाँ रास्ता इतना संकड़ा और ख़तरनाक था कि उस पर मुश्किल से एक ही समय में एक खच्चर अथवा एक आदमी ही चल सकता था। यदि दुर्भाग्यवश किसी का पांव फिसल गया तो वह लुढ़कता हुआ

नीचे अंगड़ाई लेते हुए दर्रों में पहुँच जाता। ऐसा लगता है कि बहुत से स्थानों पर रास्ते पहाड़ी ढलानों से काटे गए है और ये पहाड़ लगभग या तो घाटियों की तलहटियों में या भयानक तेज़ी से बहती हुई नदियों और तेज नालों में जाकर समाप्त होते हैं।'

काफिला ताशकरघान पहुँचा और चैन से विश्राम किया। चारों यात्रियों को हिन्दुस्तानी दूकानदार मिला जिसने उनका खूब आदर-सत्कार किया। यात्रियों ने अपने नाच-गाने के शानदार कार्यक्रम प्रस्तुत किए। उन्होंने धीमी गति से बहती खुल्लम नदी की भव्यता को मुग्ध होकर देखा। इसमें बच्चे पशुओं के फूले हुए चमड़ों पर तैर रहे थे। 'ये बच्चे छोटी उम्र के थे और ऐसे लग रहे थे मानो छोटी मछलियां तैर रही हों।' यहाँ के वातावरण में किसी खूबसूरत किशोरी को देखकर मोहित हो जाना कितना स्वाभाविक है। यदि इस पर भी कोई मोहित न हो तो वह पत्थर के सिवा और कुछ नहीं हो सकता।

दूकानदार बिशनचन्द के घर में तेरह साल की सुन्दर लड़की ने उसके घर आए आगन्तुकों पर एक 'आकर्षक प्रभाव' डाला। लड़की के जादुई चेहरे ने चारों लड़कों को स्तब्ध कर दिया। वे मूर्तियों की तरह हो गए। वे मौन हो खड़े रह गए। उनकी आँखें पथरा गईं और लड़की के चेहरे को घूरती रह गईं। किन्तु लज्जा और गरिमा की भावना ने शीघ्र ही बीच में दखल दे दिया। उन्होंने उसके भाई की उपस्थिति को भांपते हुए उसके चेहरे से आँखें फेर लीं और यह इसलिए भी कि उनको यहाँ इस घर में अपने अतिथि होने का एहसास भी हो गया। लड़के किशोरावस्था में थे और अभी तक यौवन से परे थे। फिर भी मानव प्राणी के लिए किसी सुन्दर वस्तु को देखने की सहज प्रवृत्ति होती है जो आनन्द देती है चाहे वह उसे प्राप्त न भी हो। इसी मानव स्वभाव के वशीभूत वे निश्छल, पवित्र बालहृदय भी थे।

एक माह तक ये चारों साथी भारतीय दूकानदारों के यहाँ बारी-बारी से मेहमान रहे और उन्होंने हर रात को अपने संगीतमय कार्यक्रम सफलतापूर्वक तथा ससम्मान प्रस्तुत किए। उनकी प्रसिद्धि सारे शहर में फैल गई। उन्होंने सबको अपने कौशल से चमत्कृत कर दिया।

काबुल की सर्दी और ताशकरघान के सुन्दर वसन्त मौसम का अनुभव प्राप्त करके अब अपने काफिले के साथ मिलकर मजार शरीफ की ओर चल पड़े। रास्ते में हँसते, मजाक करते और दूसरों से बतियाते हुए वे एक गांव में पहुँचे और रात भर कारवां सराय में विश्राम किया ताकि अगले सुबह से शुरू होने वाली कठिन यात्रा के लिए तैयार हो जाएँ।

दो-तीन बार इसी तरह रुकते-रुकते वे तीन दिन बाद मज़ार शरीफ़ के करीब पहुँच जाते हैं। जब वे शहर में घुसते हैं तो उन्हें मजार शरीफ़ ताशकरघान के समान ही लगा, अलबत्ता वह उससे कुछ बड़ा अवश्य था, क्योंकि वहाँ रूसियों और यूरोप के अन्य देशवासियों के आवागमन से चहल-पहल कुछ अधिक ही रहती थी। यह जगह वैसे भी उत्तरी अफ़ग़ानिस्तान का सैनिक केन्द्र था। प्राय: सेना के अधिकारी

और अन्य पर्यटक बाज़ार में घूमते देखे जा सकते थे। तुर्कमानी और यहूदी भी आते जाते मिलते थे।

यहाँ एक हाजी ताज मौहम्मद पेशावरी नाम के धनी व्यापारी के घर पर इन चारों की महफिल रखी गई। हाजी की आयु 60 वर्ष के करीब थी। वह सब बच्चों को समान रूप से प्यार करता था। उसके पांच लड़कियां थीं और दो लड़के हुए थे लेकिन छोटी उम्र में गुज़र चुके थे। सब लड़कों को अपना समझकर उनसे पितातुल्य व्यवहार करता था। भारतीयों के प्रति उसका सहज स्नेह होने के कारण उसने इन बालकों को विशेष आग्रह से अपना अतिथि बना लिया। उन्होंने यहाँ भी बहुत उम्दा कार्यक्रम पेश किया। खूब प्रशंसा फैलने लगी।

अगले दिन मज़ार शरीफ़ के प्रांतीय गवर्नर के आदेश पर अपना संगीत कार्यक्रम उनके निवास पर प्रस्तुत करना था। हाजी उन्हें वहाँ ले गया। जब वे वहाँ पहुँचे तो उन्होंने एक अनोखा दृश्य देखा। दो पुलिस के दरिन्दे एक ताजिक को एक तिकोने पर बांधकर बेरहमी से कोड़े मार रहे थे और उनका शिकार वह लाचार बेचारा दर्दनाक आवाज़ में कराह रहा था। उसकी पीठ, जांघों और पुट्ठों से खून बह रहा था। गवर्नर और उसके दोस्त तथा अधिकारी इस दृश्य का आनंद उठा रहे थे।

चारों दोस्तों के लिए यह सब असहनीय हो गया। वे गुस्से से लाल हो गए। उन्होंने हाजी से इस पिटाई का कारण पूछा तो हाजी ने औरों से पूछकर बताया कि अकाल के कारण यह किसान कर नहीं चुका सका। इस पर उसे गवर्नर ने सौ कोड़ों की सजा दी है। इन यात्रियों ने कार्यक्रम पेश करने से इन्कार कर दिया और हाजी ने गवर्नर से यह कहकर छुट्टी ले ली कि एक लड़के के अचानक पेट में दर्द हो गया है। 'इसलिए कार्यक्रम अगले दिन किया जायेगा।' गवर्नर ने जाने की इजाजत दे दी।

अगले सुबह वे वहाँ से रवाना हो गए और इस तरह उन्होने अफगानिस्तान से विदा ली। लगभग एक घटे बाद नाव नदी पार करके वे ओक्सस नदी के दूसरे किनारे पहुँच गए जहाँ सोवियत संघ का क्षेत्र शुरू हो गया।

सोवियत सघ के अधिकारियों ने उन चारों की छानबीन की और जब उन्हें तसल्ली हो गई कि ये चारों भारतीय लड़के श्रमिक वर्ग के हैं और ब्रिटिश सरकार के खिलाफ चलने वाले स्वतंत्रता संग्राम में हिस्सेदार होने की वजह से (फ़रार) बागी हैं, तो अधिकारियों ने बड़ी हिफाज़त के साथ रखा। टिरमिज़ शहर इन लड़कों को बहुत व्यवस्थित और सुन्दर लगा। चौड़ी सड़कों पर किशोरावस्था के लडके-लडकियों की एक-सी पोशाक वाली कतारें बैंड के साथ मार्च करती हुई दिखाई दीं। यों बाजार में घूमते हुए उन्हें कुछ लड़के-लड़कियां मिल गए और आपसी परिचय करते-कराते इन चारों दोस्तों को यह मालूम हो गया कि ये सोवियत लड़के-लड़कियाँ अपने 'कोम्सोमोल' संगठन के प्रतिनिधि हैं जो संस्था के द्वारा उनका स्वागत करने के लिए उनकी तलाश में ही भेजे गए हैं। दुभाषिए के माध्यम से आपस में मेल-मिलाप

करके जब वे कारवां सराय पहुँचे तो जोशीले नारों के साथ 'कोम्सोमोल' के प्रतीक्षारत अन्य सदस्यों ने उनका भव्य स्वागत किया।

'कोम्सोमोल' सोवियत संघ में 'कम्युनिस्ट यूथ लीग' का एक स्तरीय सांगठनिक विभाग है। 'कम्युनिस्ट यूथ लीग' के छोटी उम्र के बच्चों के संगठन को 'पायोनियर', किशोरावस्था के संगठन को 'कोम्सोमोल' और बड़े लोगों के संगठन को 'पार्टी' के रूप में जाना जाता है।

नदी के किनारे पर कोम्सोमोल की शानदार इमारत स्थापित है जिसकी ऊपरी मंजिल पर स्कूल है, बीच की मंजिल पर छात्रावास और नीचे की सतह पर कोम्सोमोल का कार्यालय और फिर खेलकूद का खुला मैदान। स्कूल में सहशिक्षा का प्रबंध है। लड़के और लड़कियाँ अलग-अलग कमरों में रहते हैं किन्तु अन्य प्रबंध जैसे भोजन, खेलकूद, अध्ययन तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम एक साथ एवं एक समान ही हैं। वे एक साथ बागवानी तथा कृषि-कार्य करते हैं। महिलाएं और पुरुष शिक्षक भी एक साथ शिक्षण-प्रशिक्षण का कार्य करते हैं। यहाँ शिक्षा अनिवार्य है, उन्हें संगीत भी सिखाया जाता है। बच्चों के अपने रंगमंच हैं और अपने ही सिनेमाघर। लड़कियाँ सैनिक परेड, खेलकूद और शूटिंग अभ्यास में लड़कों से किसी बात में पीछे नहीं रहतीं।

अब अशरफ, मनीराम, चौथराम और बाबू अपने असली नामों में रहने लगे। बड़े रेड हॉल में उनका स्वागत किया गया जहाँ लेनिन का बड़ा चित्र लगा हुआ था। 'कोम्सोमोल जिन्दाबाद' का सुन्दर बैनर था। सारा भवन ललाई लिए हुए था।

चारों को नई पोशाकें दी गईं और भरपूर आवासीय सुविधाएँ।

एक सप्ताह बाद कोम्सोमोल के समरकंद सम्मेलन में भाग लेने के लिए उनको प्रतिनिधि के रूप में शामिल कर दिया गया। सभी प्रतिनिधि ट्रेन पर सवार हुए।

रास्ते में बतियाते हुए वे बोखारा गणराज्य में प्रविष्ट हुए जहाँ वहाँ की कोम्सोमोल शाखा ने उनका शानदार स्वागत किया। बोखारा से रवाना होकर वे समरकन्द चले आए। आपस में अपने-अपने अनुभवों का आदान-प्रदान करते गए।

समरकन्द सम्मेलन में संपूर्ण साक्षरता, पर्दा प्रथा का पूरी तरह उन्मूलन, कृषि विकास, विभिन्न भाषाओं का समुचित विकास, अफगानिस्तान और भारतीय बालक-बालिकाओं के साथ कोम्सोमोल के संबंध, हर जगह किंडरगार्टनों का फैलाव और वैज्ञानिक आधार पर स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार पर कार्यक्रम निर्धारित करने पर विचार विमर्श किया गया।

इसके बाद यूरोपीय क्षेत्र से होते हुए ये चारों मॉस्को पहुँचे और वहाँ वे स्कूल में दाखिल हुए और उन्होंने अध्ययन करना शुरू किया। यहाँ उपन्यास 'चार यात्री' का कथानक समाप्त होता है।

'चार यात्री' उपन्यास के रूप में लेखक के जीवन की सच्चाई है, एक यथार्थ अनुभूति है। देश को पराधीनता से मुक्त कराने के दुस्साहसिक क्रान्तिकारी प्रयासों

में चार किशोरों का संलग्न होना, फरार होकर रास्तों की असह्य मुसीबतों का सामना करना और सोवियत संघ में जाकर वहाँ के क्रांतिकारी अनुभवों का अध्ययन करना आदि कार्यकलापों के पीछे रचनाकार शौकत उस्मानी के अपनेपन की छाया है। इसीलिए यह एक प्रामाणिक कहानी है। यह किशोरावस्था का पहला उपन्यास है जिसमें राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय इतिहास का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पृष्ठ सन्निहित है। इसे समझने के लिए सन् 1930 की यहाँ-वहाँ की राजनीतिक घटनाओं का पुनरावलोकन आवश्यक होगा।

इन दिनों प्रचलित छोटी-मोटी मामूली स्तर की रचनाओं के 'लोकार्पण' नाम के विज्ञापनी समारोह कितने छिछले लगते हैं, क्रांतिकारी शौकत उस्मानी द्वारा दिया गया खुदीराम बोस और अन्य शहीदों की स्मृति के इस 'समर्पण' के सामने।

कैशोर के भावावेग, स्वतंत्र होने की सायास आकांक्षा, मुसीबतों को आमंत्रित करने की आदत, कलात्मक सुरुचि, प्राकृतिक और मानवीय सौंदर्य के प्रति सहज आकर्षण, अन्याय और उत्पीड़न के विरुद्ध विद्रोह और रहस्यों के भीतर झांकने की प्रवृत्ति के अन्तर्तम में पैठना 'चार यात्री' की अन्यतम सार्थकता है। देश, काल और पात्र के समायोजन के फलक पर अंकित ये रेखाएं अनुपमता का आभास देती हैं।

अपनी मातृभाषा 'राजस्थानी' के इस कृतिकार का हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी पर समान अधिकार होने के कारण ही इसको उसने 'चार यात्री' का हिन्दी, 'चार मुसाफिर' का उर्दू और 'फोर ट्रेवलर्स' का अंग्रेजी कलेवर देकर 'एक में दो' का अर्थात् लेखक और अनुवादक दोनों का एक साथ निर्वाह कर दिया। इसके अलावा कई अन्य विदेशी भाषाओं और बोलियों के शब्दों, मुहावरों, कहावतों और काव्यांशों ने अभिव्यक्ति को नये आयाम देकर सुसमृद्ध बना दिया। देशाचार और लोकाचार जगह-जगह सहायक सिद्ध हो रहे है। इसी प्रकार वेशभूषा, आत्मीयतापूर्ण व्यवहार और आंशकायुक्त सतर्कता दिखाने में उस्मानी की उस्तादगी साफ तौर पर प्रकट हो सकी है।

'चार यात्री' उस्मानी का एक किशोर मनोवैज्ञानिक अपितु क्रांतिकारी उपन्यास है और अपनी किस्म की पहली साहित्यिक सरचना। वह नितांत मौलिक है तथा अत्यंत मूल्यवान भी। विचार और संवेदना का उच्च और गहन संश्लेषण लिए हुए। संवादों में प्राणवान नाट्यतत्त्व हैं। सर्वग्राह्य अर्थवत्ता इसकी अपनी विशेषता है। शौर्य, साहस, उल्लास, करुणा, पवित्र शृंगार रौद्र, वीभत्स एवं कौशल ने कृति को सरलता, सफलता और सार्थकता से अभिषिक्त कर दिया है।

उपनिवेशवादी तंत्र के अत्याचारों के खिलाफ उस्मानी की यह खुली लेखकीय बगावत है तो अंधविश्वासों के विरुद्ध एक उत्तप्त विद्रोह। अनेक सभ्यताओं और संस्कृतियों का समायोजन है तो उभरती हुई नयी सभ्यता और संस्कृति का नवोन्मेष। स्काउटिंग और कोम्सोमोल का अन्तर स्पष्ट है। एक घिसी-पिटी शिक्षा-व्यवस्था और विज्ञान, कला समन्वित शिक्षा योजना का बुनियादी फर्क और अधिक विश्लेषण

की गुंजायश नहीं छोड़ता।

अंतिम छोर पर आकर पात्रों की अनेक संभावनाओं की ओर इंगित किया गया है और साथ ही एक जिज्ञासा को भी उद्भूत किया गया है कि इसकी अगली कड़ी की प्रतीक्षा बनी रहे। यहाँ यह कहना अनुचित न होगा कि यह उपन्यास अपने आप में पूरा भी है और अधूरा भी। समकालिक भी है और अग्रगामी भी। विप्लवकारी पृष्ठभूमि पर टिका हुआ होते हुए भी वह रचनात्मक संलग्नता का प्रतीक है।

सारत: 'चार यात्री' शौकत उस्मानी की जीवन शैली की अभिव्यंजना है।

* * * *

कवर के अंतिम पृष्ठ पर

ADVERTISEMENT

1.	Peshawar to Moscow	(In 6 Languages)
2.	Anmole Kahanian	(Urdu & Hindi)
3.	Char Musafir	(Urdu & Hindi)
4.	Fauji Sitara	(Urdu)
5.	Animal Conference	(English)

Published by Usta Publications Corp.

• • • •

1. Fauji Sitara-(In Urdu) Alias Shatir Shamim

An Urdu Novel by Shaukat Usmani, author of 'Peshawar to Moscow'.

If you want to read adventures.

If you want to read romance.

If you want to read a detective novel.

Then please read 'Fauji Sitara' Alias 'Shatir Shamim' and enjoy the adventures of a young man in Europe and Asia through the pages of this novel. Available at every wellknown book shop in Karachi and in Hyderabad (Sind) Price 1/8/0

All rights reserved by the author.

2. Fauji Sitara (In Urdu) (By Shaukat Usmani)

Read this novel if you have not done already.

It will carry you deep in Europe during the last war. It will give you plenty of detective feats. If you love romance, read it, if you love action, read it, if you want to know what a lad can do in the world, read this novel.

It is adventures

It is romance

It is a description of the feats of Shamim

Available at all well-known Book Company

Price originally 2/0/0 now reduced to Rs. 1/8/0

Other works of the author 'Char Musafir' & 'Anmole Kahanian' in Urdu and Hindi available at-

Bharat Publishing House, Civil Lines, Agra (U.P.)

'Rus Yatra' in Hindi. Available from-Pratap Press, Kanpur (U.P.)

I. Animal Conference-(A Satire and allegory on Atom and H. Bombs) by Shaukat Usmani Alias Sikander Sur-1st Edition-May, 1950 (Karachi) 2nd Edition March 1952, Karachi and 3rd Revised and enlarged Edition, July 1954, Bombay. Pages 50, Price 2-8-0, dedicated to the memory of Animal Victims of the Bikini Atom Bomb Experiment. Published by ILA Trading Corporation, 121-22, St. Xavier's Street, Parel, Bombay, 12 & Printed at Mohamadi Fine Art Litho Works, Mazagon, Bombay, 10 Preface dated 6th May, 1950. And together with II. Jungle Conference : Dedicated to the memory of the martyrs of Hiroshima and Nagasaki in the year of grace, one thousand nine hundred and forty five. Foreword dated 15.11.1953 and Introduction dated 21 12.1953, pages From 51 to 111.

I Animal Conference के आवरण पृष्ठ पर आकाश, हिमगिरि, पेड़, मैदान और नदी की पीठिका दिखाई गई है और उसमें नभचर, थलचर और जलचर पशु-पक्षी दिखाए गए हैं। हरेक प्राणी का आम तौर पर जैसा रंग हुआ करता है उसी रंग में उसे चित्रित किया गया है, जैसे—हाथी भूरा है तो गाय सफेद आदि। प्रकाशकीय और लेखकीय प्राक्कथनों के छ: शीर्षक और तीन अतिरिक्त (Appendixe) हैं। इसी तरह 'जंगल कॉन्फ्रेंस' में दस शीर्षक हैं और एक पूरक (Supplement)।

सभी जानवर सम्मेलन के मूड में बैठे दिखाए गए है। सबके मन मे कहने-सुनने की आतुरता दिखाई दे रही है। लोमड़ी को अध्यक्षीय आसन पर बैठाया गया है। *चित्र में मानव-प्राणी का अभाव है क्योंकि उसके विरोध में तो 'एनीमल कॉन्फ्रेंस' का आयोजन किया ही जा रहा है।*

जब अगस्त 1947 में भारतीय उपमहाद्वीप का रूपांतरण हुआ तो मनुष्यों के दिमागों में भी बहुत बडे परिवर्तन हो गए। मनुष्य पशु बन गए और पशु मानवोचित में बदल गए। एक अपूर्व युग का सूत्रपात हुआ। भारत माँ की स्वतंत्रता के संघर्ष में ईमानदारी से बलिदान देने वाले क्रांतिकारियों को पीछे धकेल कर व्यवसाय शिकारी

और पदलोलुप नई दिल्ली प्रशासन की ओर लपक पड़े। अवसरवादियों ने स्वार्थ-सिद्धि के लिए बुनियादी बदलाव के रास्ते को जाम कर दिया और नई सत्ता से चिपकने लगे।

मनुष्य की पाशविक प्रवृत्ति की चरम सीमा अमरीका द्वारा हिरोशिमा और नागासाकी में आणविक बम विस्फोटों के करने पर जाहिर हो चुकी थी जिसमें मनुष्य ने लाखों मनुष्यों को क्षण भर में राख बना दिया और साथ ही थलचर, जलचर सभी काल के ग्रास बन गए। मानव पहले से तो अनेक प्रकार के जानवरों के शोषण उत्पीड़न का कारण हो ही रहा था, अब वह पूरी तरह उसका हत्यारा भी साबित हो गया। इसीलिए जानवरों ने अपने ही नहीं अपितु अपने आप के दुश्मन मानव के खिलाफ़ मोर्चाबन्दी करने के लिए 'जानवर सम्मेलन' का आयोजन किया। उद्देश्य था जल, थल और नभ को आणविक बमों के विनाशकारी प्रभाव से मुक्त करना।

शेर ने हाथी को समझाया कि आणविक युद्ध होने वाला है और ऐसा होते ही यह पृथ्वी मानवरहित होगी और तब इस पर हमारा ही आधिपत्य होगा। इसलिए भावी संभावनाओं पर विचार करने के लिए एकजुट होने की जरूरत है। इसलिए हमें 'जानवर सम्मेलन' बुलाकर उसमें निर्णय लेने की पहल करनी चाहिए। हाथी को बात जंच गयी और सबको बुलाया गया।

सम्मेलन में जलचर, थलचर और नभचर सभी इकट्ठे हुए। वादविवाद के बाद शेर के प्रस्ताव और हाथी के अनुमोदन पर शेर की सलाहकार 'मिस फौक्स' (कुमारी लोमड़ी) को सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुन लिया गया। अध्यक्ष के सुझाव पर एक नए गणतंत्र की स्थापना का प्रस्ताव आया जिसका नाम 'Manguin Republics' रखा गया।

इसी दौरान शेर को एक अखबार मिलता है जिसका शीर्षक है 'आणविक युद्ध में ग्रेट ब्रिटेन की सुरक्षा असंभव।' ब्रिटेन के साथ चर्चिल की चर्चा हुई जिसका चेहरा 'बुलडॉग' के समान बताया गया। कुत्ते ने उसमें अपना जातीय रिश्ता [illegible]

इस सम्मेलन में काफी बहस के बाद शेर ने सात प्रस्ताव रखे—

(1) जानवरों का उस झरने पर पूर्ण नियंत्रण हो जिससे [illegible] होता है और जब वह ज्वलंत होता है तो वह ऐसी गैसें, [illegible] पैदा कर देता है जो सभी राडार प्रणाली का प्रतिरोधी, [illegible] होता है और चारों तरफ फैल जाता है।

(2) एक केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी का [illegible] हाथी, भेड़िया, चमगादड़, कछुआ, घड़ियाल, [illegible] जिराफ़, गधा और रीछ शामिल हों।

(3) वार्षिक सम्मेलन हर साल की [illegible] और हो सके तो विशेष अधिवेशन भी [illegible]

(4) हिमालय की तराइयों में [illegible]

बुजुर्गों के मूल निवास स्थान रहे हैं उनमें मानव जाति के आगमन को रोका जाय। हमारा प्रस्ताव है कि इन स्थानों को 'एटम और हाइड्रोजन बम निष्प्रभ' क्षेत्र बनाया जाय। इसके लिए इन तमाम घाटियों और मैदानों में गैसीय कोहरों के बादलों से उस चमत्कारी झरने के पानी को फैला दिया जाय। कतिपय पर्वतों, घाटियों और गुफाओं में मनुष्य का प्रवेश निषिद्ध कर दिया जाय, ताकि आणविक युद्ध से उसकी जाति सुरक्षा का स्थान न प्राप्त कर सके।

(5) जैसे ही परमाणु या हाइड्रोजन बम के प्रयोग की सूचना हो हमें तुरंत पहले से ही अपनी सुरक्षा हेतु सारे क्षेत्र पर भाप के बादल फैला देने चाहिए। हमें अपने आवासीय स्थानों को मानवी हथियारों का प्रतिरोधी बनाना होगा।

(6) परमाणु युद्ध के फलस्वरूप जैसे ही मानवजाति अपने आप को नष्ट कर दे, वैसे ही सारी पृथ्वी का पुनर्वितरण करना होगा।

(7) और अंततः हमारी शासन प्रणाली को हमें लोकतांत्रिक नियमों और सिद्धांतों पर संचालित करना होगा और हमें अधिक आत्म-बलिदान करके मांसाहार छोड़ना होगा।

मांसाहार छोड़ने पर थोड़ी हलचल पैदा हो गई, अतः इसे बाद में विचार के लिए छोड़ दिया गया। बाद में सातों प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित घोषित कर दिए गए।

दूसरे सत्र में उपर्युक्त प्रस्तावों को जल, वायु, पृथ्वी और भूमिगत क्षेत्रों के अलग क्षेत्रीय सम्मेलनों में पारित करवाने का निर्णय लिया गया। अंत में समूह-गान के साथ सम्मेलन के सत्र की समाप्ति की घोषणा कर दी गई।

जलचर सम्मेलन बर्मा में इरविद्दी नदी के मुहाने पर रखा गया जिसमें सब प्रकार की मछलियाँ एवं अन्य जलजीव इकट्ठे हुए। मिस्टर शार्क को सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुना गया। मिस स्वान ने जानवर सम्मेलन की विस्तृत रिपोर्ट पेश की और प्रस्ताव भी रखे। यह भी बताया गया कि सन् 1946 में जब अमरीका द्वारा बिकिनी में भयंकर परमाणु बम का प्रयोग किया तो जलचरों को कितना ज्यादा नुकसान झेलना पड़ा। संपत्ति और प्राणियो का कितना विनाश हुआ। अमरीका के पूंजीपति मछली उत्पादों की कीमतें बढ़ाने के लिए हर मौसम में ऐसा ही करते हैं। पूंजीवादी कानून और अर्थव्यवस्था के लिए मांग को सप्लाई से ऊपर रखने के उद्देश्य से हर साल बहुत ज्यादा तादाद में बरबाद करना परमपवित्र कर्त्तव्य माना जाता है। मानव मृत्यु व्यवसायी प्राणी है। प्लेटो के अनुसार मनुष्य शैतानी काम में व्यस्त रहता है।

अंत में सर्वसम्मति से उपर्युक्त सात प्रस्तावों को स्वीकृति देते हुए यह प्रस्ताव पारित किया गया कि समूहों, महासागरों, नदियों, तालाबों, झीलो और झरनो के समस्त पानी को उन खनिजों और रसायनों के कोहरो और भापों के जरिए प्रतिरोधी बनाया जाकर सुरक्षित किया जाय और आज से जल के भीतर और ऊपर मनुष्य

के आगमन पर रोक लगाई जाय।

इसी प्रकार नभचर प्राणियों का सम्मेलन हुआ। यह नेपाल के निचले मैदानों में हिमालय के चरण स्थल पर संयोजित किया गया। सब प्रकार के पक्षी इसमें इकट्ठे हुए। इनमें बटेर, चकोर, पैट्रिज, वैक्स विंग, कौआ, चील, बाज, गिद्ध, उल्लू, बुलबुल, तोता आदि अन्य कई प्रकार के प्राणी शामिल थे। इसमें पहले सम्मेलन में पारित प्रस्तावों की छानबीन और बहस का मुख्य मुद्दा था। कुछ नए प्रस्ताव भी सामने आए।

अध्यक्षता के लिए कई नाम आए, आखिर सर्वसम्मति से मिस चकोर को सम्मेलन की अध्यक्षता करने के लिए चुन लिया गया। बाज ने अपना मत व्यक्त करते हुए कहा–'कॉमरेड अध्यक्षा, मै दृढ़ता के साथ कह सकता हूँ कि मानवप्राणी स्वयं में परमाणु बम का भंडार है। उसकी खोपड़ी में शैतान की खुराफात है, वह विनाश का खजाना है। वह अपने आपको और अपने आस-पास प्रत्येक को नष्ट ही करता है।' इसी प्रकार बहस चलती रही।

अंत में प्रस्ताव पास किया गया कि शैतान की शाखा और बकरे की दाढ़ी हमारी कमेटी के नियंत्रण में रहे और उन्हे वहाँ रखा जाय जहाँ आदमी का प्रवेश संभव न हो। गोंद, शाखाओं और पत्तियों को हमारे गुप्त हथियारों के रूप मे माना जाय और हम संकल्प लें कि इस रहस्य को किसी के सामने प्रकट नहीं करेंगे। बाकी सातों प्रस्ताव भी पारित किए गए।

उपर्युक्त क्षेत्रीय सम्मेलनों के समेकित प्रस्ताव 'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' की केन्द्रीय समिति के पास आए और उसने सब पर अपनी स्वीकृति की मोहर लगा दी। दूसरे दिन 'मैनगुइन रिपब्लिकस' का संविधान पास किया गया जिसमें किसी भावी संशोधन की गुंजाइश नहीं रखी गई। निगरानी समिति का नेतृत्व संयुक्त रूप से कौए, कुत्ते और बिल्ली को सौंपा गया।

अंत में केन्द्रीय समिति ने अपने सहायतार्थ अमरीका को उसके आधुनिक उपनिवेश ब्रिटेन सहित धन्यवाद का प्रस्ताव भेजा क्योंकि वहीं मानव जाति का विनाश करने के विश्वसनीय उपकरण हैं। इसके पश्चात् कॉन्फ्रेंस समाप्त हो गई।

II Jungle Conference—'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' सबसे पहले जनवरी 1949 ई. में समाचार पत्रों मे सीरियल के रूप में प्रकाशित हुई थी। मित्रों के लगातार दबाव के कारण शौकत उस्मानी ने दूसरी कॉन्फ्रेंस को 'जंगल कॉन्फ्रेंस' के शीर्षक से लिखा। इससे पूर्व दुनिया भर के और खास तौर से भारत, पाकिस्तान, लंका और बर्मा के पत्रों ने और व्यक्तिगत रूप से पूर्व और पश्चिम दोनों के सुप्रसिद्ध विद्वानों ने अपने पत्राचार के माध्यम से उस्मानी द्वारा शान्तिकामी मानवता के प्रति अर्पित उस लोकार्पण की मुक्त कंठ से सराहना की थी। इसी से प्रेरित होकर इस 'जंगल कॉन्फ्रेंस' की रचना संभव हुई। यह कृति पूंजीवादी सिद्धान्तों और शासनतंत्र के विरुद्ध एक विद्रोहाभिव्यक्ति है।

हिन्दूकुश की गोद में पंजशीर नदी के पास तंग घाटी में यह कॉन्फ्रेंस आयोजित की गई। इसमें समस्त वनजीव-जगत के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। प्रस्ताव और प्रतिप्रस्ताव के बाद 'मिस अबाबील' को सर्वसम्मति से अध्यक्ष के रूप में चुना गया।

अचानक गुफा में से निकले हुए एक गुहामानव ने सभा में प्रवेश किया और धरती को छू कर तीन बार सलाम किया। उसने निवेदन किया कि उसे सम्मेलन में भाग लेने दिया जाय क्योंकि वह भी अन्य वन्य जीवों की तरह मानव द्वारा प्रताड़ित है। इस पर शेर ने अपत्ति उठाते हुए कहा कि यह सही होते हुए कि वह भी उन्हीं की तरह मानव प्रताडित है, फिर भी मनुष्य होने के नाते वह भी एक कल्पनाशक्ति वाला प्राणी है, इसलिए सम्मेलन में भाग लेने का अधिकार उसे नहीं दिया जा सकता। इस आपत्ति के बाद उसे दंडित करने का प्रस्ताव आया जिस पर काफी बहस हुई और आखिर शेर के इस प्रस्ताव को मान लिया गया कि उसे विदेशमंत्री बनाकर अर्जुनिस्तान की राजधानी भेज दिया जाय। सिमुर्ग (काल्पनिक पक्षी) को उसके साथ भेज दिया गया। अर्जुनिस्तान मे उसे पहुँचाए जाने की सूचना सिमुर्ग ने वापस आकर दी। सिमुर्ग को धन्यवाद दिया गया, इसके बाद सम्मलेन शुरू किया गया। सर्वप्रथम सर्पिल पंखदैत्य ने स्वागत भाषण दिया। जिसका निष्कर्ष यह निकाला गया कि भविष्य में राडार युद्ध करने की मानव योजना दिखाई दे रही है। राडार युद्ध के साथ परमाणु, एन. और एच. बम तो अपनी भूमिका अदा करेंगे ही।

लोमड़ी ने पहले सम्मेलन में तय की गई योजना का हवाला देते हुए बताया कि राडार युद्ध हो चाहे नाभिकीय शस्त्रों का युद्ध—हमारे वाष्पमय प्रतिरोधी उपाय मनुष्य द्वारा निर्मित सारे विद्युतीय और गैर विद्युतीय हथियारों को नष्ट कर देंगे अब तब वे सारी मिसाइलें निष्प्रभावकारी बन कर धरी रह जायेंगी।

शेर ने वाला, मोन्ट बेल्ले और केन्द्रीय उताह के सेवियर ब्रिजरिजर्वोयर के जलांतर्गत में किए गए नाभिकीय हथियारो के प्रयोगों का हवाला दिया जो एक समाचार पत्र में (साल्टलेक सिटी, 13 नवबर, सन् 1953) में छपे थे। इन सब जलचरों ने बिकिनी प्रयोग को फिर से याद किया और अनुमान व्यक्त किया कि यह उससे भी अधिक विनाशकारी होगा।

अध्यक्षा ने यह स्पष्ट किया कि मनुष्य ये प्रयोग यूरोप में क्यों नहीं करता और फ्रांस कई बार विरोध का स्वर क्यो निकालता रहता है वैसे यदि फ्रांस चाहता तो हिरोशिमा और नागासाकी की विध्वंसक घटनाओं के घटित होने से पहले ही जर्मनी पर एटम बमों का प्रयोग करने मे सक्षम था, किन्तु वह अधिक लोकतंत्रवादी होने की वजह से ऐसा न कर सका। 'स्वतंत्रता, समानता और सहअस्तित्व' के नारों के कारण वहाँ के सैन्य प्रमुखों की इच्छा दबी रह गई। सब प्रकार के प्रतिरोधी उपायों के बावजूद हमें निरंतर चौकसी बरतनी होगी और इसके लिए कौए, बिल्ली और कुत्ते का यह कर्त्तव्य है कि मनुष्य की हर विनाशकारी योजना के बारे में समस्त

वनजीव जगत को इसकी पूर्व सूचना दें।

शेर ने मिस लोमड़ी से अनुरोध किया कि वह अपनी उस अवधारणा को सम्मेलन के सामने रखे जिसे 'अवचेतन सिद्धांत' कहा गया है। लोमड़ी ने इस पर एक व्याख्या प्रस्तुत की जिसका आशय यह था कि इस अवधारणा के पीछे यह अनुमान था कि तृतीय विश्वयुद्ध हुआ, जिसमें सब कुछ बरबाद हो गया। लगभग सारी पृथ्वी पानी में डूब गई। हिमालय भी गायब हो गया। यूरोप और अमरीका भी कहीं नहीं रहे। केवल कुछ भाग लंदन का और उसके मित्र देश समाजवादी सोवियत संघ का बचा क्योंकि मानव का मानव के द्वारा शोषण समाप्त कर दिया गया था। न अब कालाबाजारी थी और न ही लड़ाइयाँ। पूंजीवादी साम्राज्यवाद के मिटने पर सबको सब चीजें समान रूप से मिलने लगी थीं, यहाँ तक कि ऑक्सीजन भी कंट्रोल से। धनी हवाई कार में उड गए। बस्तियाँ रही नहीं। सन् 1999 तक आते-आते सारा जीवन समाप्त हो गया।

फिर गुफा के आदमी का हालचाल जानने के लिए प्रस्ताव आया और सिमुर्ग को यह जिम्मा सौंपा गया कि वह कौए, लोमड़ी और उल्लू को अर्जुनिस्तान ले जाए ताकि पता लगाया जा सके।

इनके वापिस आने पर बताया जाता है कि वह गुफा वाला आदमी वहाँ का शासक चुन लिया गया क्योंकि पहले का शासक मर गया था। फिर सबके सामने अर्जुनिस्तान का वर्णन किया जाता है। अंत में फिर विध्वंस का कल्पना चित्र प्रस्तुत किया जाता है।

परमाणविक प्रयोगों और नई बीमारियो के प्रभावो को दर्शाते हुए मई 1953 में वियना में हुए चिकित्सा वैज्ञानिकों के विश्व सम्मेलन के निष्कर्षों का हवाला देकर कौए ने बताया कि जापान में छोडे गए एटम बमों के दुष्परिणामों के फलस्वरूप उत्पन्न बीमारियों से मुक्ति दिलाने का सामर्थ्य चिकित्सा विज्ञान में नहीं है। सूक्ष्म कीटाणु शरीर की सैलों में इस तरह प्रवेश कर जाते है और ऐसी बीमारियाँ पैदा कर देते हैं कि न तो उनका निदान संभव हो सका है और न ही उनकी चिकित्सा। इस पर अध्यक्षा ने बताया कि इन बीमारियों का इलाज 'गुणबाद-ई-शार' (Dome of Mischief) नामक जड़ी-बूटी से किया जा सकता है। इसे कूट-पीस कर पानी में मिलाने से 'मेटल जर्म' (Metal Germ) का असर हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है। हमें इसे मनुष्य से इतना छिपा कर रखना चाहिए जैसे मनुष्य अपने व्यापारी रहस्यों और आणविक हथियारों को छिपाकर रखता है।

इसके पश्चात् सर्वसम्मति से एक त्रिसूत्री प्रस्ताव पारित किया जाता है—(a) 'गुणबाद-ई-शार' जड़ी-बूटी (Dome of Mischief) के रहस्य को सुरक्षित रखा जाय और केवल आवश्यकता पडने पर इसका उपयोग किया जाय। (b) उपर्युक्त फंफूदीवाली जड़ी-बूटी को अधिकाधिक इकट्ठा करके जमा करने-कराने की जिम्मेवारी कौए, कबूतर, अबाबील और बतख की होगी। (c) अपने रहस्यों को सुरक्षित रखने

हिन्दूकुश की गोद में पंजशीर नदी के पास तंग घाटी में यह कॉन्फ्रेंस आयोजित की गई। इसमें समस्त वनजीव-जगत के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। प्रस्ताव और प्रतिप्रस्ताव के बाद 'मिस अबाबील' को सर्वसम्मति से अध्यक्ष के रूप में चुना गया।

अचानक गुफा में से निकले हुए एक गुहामानव ने सभा में प्रवेश किया और धरती को छू कर तीन बार सलाम किया। उसने निवेदन किया कि उसे सम्मेलन में भाग लेने दिया जाय क्योंकि वह भी अन्य वन्य जीवों की तरह मानव द्वारा प्रताड़ित है। इस पर शेर ने अपत्ति उठाते हुए कहा कि यह सही होते हुए कि वह भी उन्हीं की तरह मानव प्रताड़ित है, फिर भी मनुष्य होने के नाते वह भी एक कल्पनाशक्ति वाला प्राणी है, इसलिए सम्मेलन में भाग लेने का अधिकार उसे नहीं दिया जा सकता। इस आपत्ति के बाद उसे दंडित करने का प्रस्ताव आया जिस पर काफी बहस हुई और आखिर शेर के इस प्रस्ताव को मान लिया गया कि उसे विदेशमंत्री बनाकर अर्जुनिस्तान की राजधानी भेज दिया जाय। सिमुर्ग (काल्पनिक पक्षी) को उसके साथ भेज दिया गया। अर्जुनिस्तान में उसे पहुँचाए जाने की सूचना सिमुर्ग ने वापस आकर दी। सिमुर्ग को धन्यवाद दिया गया, इसके बाद सम्मलेन शुरू किया गया। सर्वप्रथम सर्पिल पंखदैत्य ने स्वागत भाषण दिया। जिसका निष्कर्ष यह निकाला गया कि भविष्य में राडार युद्ध करने की मानव योजना दिखाई दे रही है। राडार युद्ध के साथ परमाणु, एन. और एच. बम तो अपनी भूमिका अदा करेंगे ही।

लोमड़ी ने पहले सम्मेलन में तय की गई योजना का हवाला देते हुए बताया कि राडार युद्ध हो चाहे नाभिकीय शस्त्रो का युद्ध—हमारे वाष्पमय प्रतिरोधी उपाय मनुष्य द्वारा निर्मित सारे विद्युतीय और गैर विद्युतीय हथियारो को नष्ट कर देंगे अब तब वे सारी मिसाइले निष्प्रभावकारी बन कर धरी रह जायेंगी।

शेर ने वादा, मोन्ट बेल्ले और केन्द्रीय उताह के सेवियर ब्रिजरिज़र्वोयर के जलांतर्गत मे किए गए नाभिकीय हथियारो के प्रयोगो का हवाला दिया जो एक समाचार पत्र में (साल्टलेक सिटी, 13 नवंबर, सन् 1953) में छपे थे। इन सब जलचरों ने बिकिनी प्रयोग को फिर से याद किया और अनुमान व्यक्त किया कि यह उससे भी अधिक विनाशकारी होगा।

अध्यक्षा ने यह स्पष्ट किया कि मनुष्य ये प्रयोग यूरोप में क्यो नहीं करता और फ्रांस कई बार विरोध का स्वर क्यों निकालता रहता है वैसे यदि फ्रांस चाहता तो हिरोशिमा और नागासाकी की विध्वंसक घटनाओं के घटित होने से पहले ही जर्मनी पर एटम बमों का प्रयोग करने में सक्षम था, किन्तु वह अधिक लोकतंत्रवादी होने की वजह से ऐसा न कर सका। 'स्वतंत्रता, समानता और सहअस्तित्व' के नारों के कारण वहाँ के सैन्य प्रमुखों की इच्छा दबी रह गई। सब प्रकार के प्रतिरोधी उपायों के बावजूद हमें निरंतर चौकसी बरतनी होगी और इसके लिए कौए, बिल्ली और कुत्ते का यह कर्त्तव्य है कि मनुष्य की हर विनाशकारी योजना के बारे में समस्त

वनजीव जगत को इसकी पूर्व सूचना दें।

शेर ने मिस लोमड़ी से अनुरोध किया कि वह अपनी उस अवधारणा को सम्मेलन के सामने रक्खे जिसे 'अवचेतन सिद्धांत' कहा गया है। लोमड़ी ने इस पर एक व्याख्या प्रस्तुत की जिसका आशय यह था कि इस अवधारणा के पीछे यह अनुमान था कि तृतीय विश्वयुद्ध हुआ, जिसमें सब कुछ बरबाद हो गया। लगभग सारी पृथ्वी पानी में डूब गई। हिमालय भी गायब हो गया। यूरोप और अमरीका भी कहीं नहीं रहे। केवल कुछ भाग लंदन का और उसके मित्र देश समाज़वादी सोवियत संघ का बचा क्योंकि मानव का मानव के द्वारा शोषण समाप्त कर दिया गया था। न अब कालाबाजारी थी और न ही लड़ाइयाँ। पूंजीवादी साम्राज्यवाद के मिटने पर सबको सब चीजें समान रूप से मिलने लगी थीं, यहाँ तक कि ऑक्सीजन भी कंट्रोल से। धनी हवाई कार में उड़ गए। बस्तियाँ रही नहीं। सन् 1999 तक आते-आते सारा जीवन समाप्त हो गया।

फिर गुफा के आदमी का हालचाल जानने के लिए प्रस्ताव आया और सिमुर्ग को यह जिम्मा सौंपा गया कि वह कौए, लोमड़ी और उल्लू को अर्जुनिस्तान ले जाए ताकि पता लगाया जा सके।

इनके वापिस आने पर बताया जाता है कि वह गुफा वाला आदमी वहाँ का शासक चुन लिया गया क्योंकि पहले का शासक मर गया था। फिर सबके सामने अर्जुनिस्तान का वर्णन किया जाता है। अंत में फिर विध्वंस का कल्पना चित्र प्रस्तुत किया जाता है।

परमाणविक प्रयोगों और नई बीमारियों के प्रभावों को दर्शाते हुए मई 1953 में वियना में हुए चिकित्सा वैज्ञानिकों के विश्व सम्मेलन के निष्कर्षों का हवाला देकर कौए ने बताया कि जापान में छोड़े गए एटम बमों के दुष्परिणामों के फलस्वरूप उत्पन्न बीमारियों से मुक्ति दिलाने का सामर्थ्य चिकित्सा विज्ञान मे नहीं है। सूक्ष्म कीटाणु शरीर की सैलों में इस तरह प्रवेश कर जाते हैं और ऐसी बीमारियाँ पैदा कर देते हैं कि न तो उनका निदान संभव हो सका है और न ही उनकी चिकित्सा। इस पर अध्यक्षा ने बताया कि इन बीमारियों का इलाज 'गुणबाद-ई-शार' (Dome of Mischief) नामक जड़ी-बूटी से किया जा सकता है। इसे कूट-पीस कर पानी में मिलाने से 'मेटल जर्म' (Metal Germ) का असर हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है। हमें इसे मनुष्य से इतना छिपा कर रखना चाहिए जैसे मनुष्य अपने व्यापारी रहस्यों और आणविक हथियारों को छिपाकर रखता है।

इसके पश्चात् सर्वसम्मति से एक त्रिसूत्री प्रस्ताव पारित किया जाता है—(a) 'गुणबाद-ई-शार' जड़ी-बूटी (Dome of Mischief) के रहस्य को सुरक्षित रखा जाय और केवल आवश्यकता पडने पर इसका उपयोग किया जाय। (b) उपर्युक्त फंफूदीवाली जड़ी-बूटी को अधिकाधिक इकट्ठा करके जमा करने-कराने की जिम्मेवारी कौए, कबूतर, अबाबील और बतख की होगी। (c) अपने रहस्यों को सुरक्षित रखने

और मनुष्य के रहस्यों का पता लगाने के लिए एक समिति का गठन किया जाता है जिसमें पुराने सदस्य अर्थात् बिल्ली, कुत्ता और चूहा और इनके साथ कौआ सम्मिलित किए गए। इसके साथ पुरानी निगरानी समिति को भी कायम रखा गया। फिर 'गम्बा' सामूहिक नृत्य हुआ, खाना-पीना और मनोरंजन रात भर चलता रहा। अगले दिन छुट्टी की घोषणा के साथ सम्मलेन स्थगित कर दिया गया।

सर्व सम्मेलन की पूरक रिपोर्ट अंतिम सत्र में पेश की गई। मिस्टर कोबरा ने यह रिपोर्ट रखते हुए आणविक हथियारों के भूमिगत प्रयोगों की विभीषिका की ओर ध्यान आकृष्ट किया। इसके साथ ही उसने विध्वंस के दुष्प्रभाव से निपटने के लिए कैक्टर परिवार के 'जलमोहिनी' पंखुड़ियों आदि की एक रसायन औषधि को बताया।

इस रिपोर्ट को पारित करने के साथ 'जंगल कॉन्फ्रेंस' समाप्त हो गई।

'Animal Conference' के विषय में सम्मतियाँ : (पुस्तक के अंतिम कवर पेज पर अंकित)

'Bharat Jyoti' (Bombay)–'Satire on humanity at large...the presentation of facts in metaphorical language makes the book interesting reading'.

'Sunday Standard' (Bombay)–'Brightest-ever book, telling us all about a conference of all the animals.'

'Bombay Chronicle Weekly' (Bombay)–'The animals of the Jungle gather together and examine the present world situation, the chances of human survival and of the world falling into their hands.'

"The Times of Ceylon" (Colombo)–'The author creates a situation where the animals assemble in the Himalayas to decide how best they should rule the earth when man is no more. Shaukat Usmani believes that USA and Great Britain will use the Atom Bomb to finish up the human race.'

'Inquilab' (Bombay)–'Slices of humour and jest...depicts the paucity of human brain.'

'Jamhouriet' (Bombay)–'A well balanced slap on the face of war-mongers'.

'Civil & Military Gazette' (Karachi)–'There are no divisions in the animal ranks...they promise for all teen-agers to appreciate. Grown-ups too would find it a refreshing reading'.

'Kultura' *(Cultural Organisation–Budapest, Hungry)*–'Read with great interest'.

Kaka D.R. Harkare (Bombay)–'Peace Message of the East'.

Choudhary Akbar Khan (London)-'The author has expressed in beautiful language, the militant politics of the day'.

Mr. Montegue Slater (London)-'I've read 'Animal Conference' and find it fascinating'.

Mr. Harry Pollitt (London)-'Enjoyed reading'.

Mr. A. Raab (Italy)-'Animal Conference' is actually very good...congratulate you on this marvellous book.'

Dr. B.V. Mehta, Ph. D. (Bonn-Germany)-'Animal Satire on human race.

Revered Fatter W.J. Ringer (England)-'Most interesting'.

Mr. Jogesh Chandra Chatterjee (Lucknow)-Interesting and fascinating'

Mr. Fenner Brockway (M.P. London)-'I have read 'Animal Conference' and think it relfects in a simple and picturesque born the agreement between human beings to live together in peace and co-operation... It is a parable which will appeal specially to the East.'

Mr. S.H. Raza (Karachi) 'Read with great interest'.

From the cover back of the book 'Nutritive Values' by Shaukat Usmani—

Dr. Sampurnanand (Lucknow)-'I congratulate you (Publisher) on bringing out Sri Shaukat Usmani's book 'Animal Conference.'

Alec Harrison, Editorial & Literary Agent, London—'The function of a good book 'Animal Conference' is that it should comfort the afflicted and afflict the comfortable. These writings (Animal Conference, Night of Eclipse and Four Travellers) certainly come within that high category and they are obviously books that have been written with *a high sense of vocation*'.

'National Herald' (Lucknow)—'The Book, a satire on nuclear weapons, reflects the author's strong condemnation of war mongers.'

'Inquilab' (Bombay)-'It is a full throated satire on all those who have estranged away from the moral values and especially on those who are engaged in playing with the lives of others and on those who are bent upon spreading destruction'.

'Indian Express' (Bombay)-'The fact that within the short of four years the book has gone into the 3rd edition shows

with Lovers of Satire. The press and the public have acclaimed the book as a 'Peace Message'... Besides conveying a very important message to humanity at large, the book provides a delightful reading.'

'Bharat Jyoti' (Bombay)–'Those who watch with alarm the present trend of newer and newer war weapons will appreciate this small volume with gratitude'.

• • • •

'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' का उत्तरार्द्ध लिखे जाने से पहले ही यह सारे शिक्षित जगत में इतनी बहुचर्चित हो चुकी थी कि वह बिना 'जंगल-कॉन्फ्रेंस' के भी अपने आप में पूर्णता प्राप्त करने में सक्षम हो सकी। शायद कइयो को 'जंगल कॉन्फ्रेंस' देखने की आवश्यकता ही महसूस नहीं हुई। ऐसा बहुत कम रचनाओं के साथ होता है। हिरोशिमा और नागासाकी पर अमरीका द्वारा परमाणु बम छोड़कर संपूर्ण मानव जाति की आत्मघाती साजिश को संकेत दिए जाने पर वह शौकत उस्मानी ही दुनिया का पहला व्यंग्यकार था जिसने तत्काल 'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' का प्रभावशाली प्रत्याक्रमण करके शांतिकामी विश्व को अपनी क्रांतिकारी विश्व चेतना का परिचय प्रदान किया। कबीर की सांध्य फिर भी साफ दो टूक सीधी वाणी की यह एक ऐसी चोट थी जो मर्म को चटका देती थी। मानवता की सुरक्षा में उसके दुश्मन साम्राज्यवाद पर जो हथियार उस्मानी के पास था उसे उसने अत्यंत कुशलता के साथ चला दिया 'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' ने एटम बम के धमाके के व्यापक प्रभाव के व्यापकत्व को चुनौती दे डाली।

मनीषियों ने कृति को विश्व के लिए 'शांति संदेश' के रूप में अभिव्यक्त करके उसका उपयुक्त मूल्यांकन किया है।

'मैनज्युइन रिपब्लिक' के आरंभ में आजादी की प्राप्ति के तत्काल बाद के अवसरवादियों पर चाट करते हुए कहा गया है कि किस प्रकार महान् स्वतंत्रता के वफादार संघर्ष सेनानियों को पीछे धकेल कर वे प्रशासन से चिपक गए और अपनी स्वार्थसिद्धि हेतु आगे बढ़ कर घुसपैठ करने में कामयाब हो गये।

विन्सटन चर्चिल के चेहरे की समानता कुत्ते के शब्दों में व्यक्त की गई, 'As a matter of proved, universally accept fact, the face resembles with that of our clan in the line of Bull-dog.'

अमेरिका की 'नैतिकता' का नमूना–'Hitler, it is said, had full control over all Atomic energy but this 'Unholy' task was left to U.S.A. to use the Atom Bombs in Hiroshima and Nagasaki.'

ऐसे और इनसे भी तीखे व्यंग्य प्रहार सारी 'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' में हर कहीं उपलब्ध हो जायेंगे। विस्ताराधिक्य से बचने के लिए इतना ही काफी होगा।

प्रस्तुत रचना के संरचनात्मक संगठन का अध्ययन करने से शौकत उस्मानी

के गहरे अनुभवों का परिचय मिलता है। 'मैंनजुइन रिपब्लिक्स' की प्राक्कल्पना, 'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' में चुनाव पद्धति का होना, एजेन्डे पर बहस, फिर प्रस्ताव-बीमारी के लक्षण, निदान और उपचार तथा उपचार के बाद निगरानी का प्रबंध। फिर प्रस्तावों को नीचे की जड़ों तक सार्वजनिक बनाने हेतु Water Animal Conference' और 'Bird Conference' के रूप में विभागीय संगठनों के सम्मेलनों का आयोजन, जिनमें केन्द्रीय पर्यवेक्षक द्वारा रिपोर्टिंग करना, अंत में एक 'संविधान' को स्वीकृत और अंगीकृत करना और फिर 'सामूहिक नृत्यगान' के साथ 'सुखांतिकता' की भारतीय साहित्य परम्परा का निर्वाह करते हुए 'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' की परिसमाप्ति की घोषणा। पुन: उत्तरार्द्ध में सब विभागों सहित एक 'प्लेनम' के रूप मे 'जंगल कॉन्फ्रेंस' को संयोजित कर उसे सैद्धांतिक रंग देना। इतने लघुकाय ढांचे का इतना सुव्यवस्थित इतना सुन्दर स्वरूप! बहुत कम, बहुत ही कम देखने को मिला।

'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' में मानवेतर जीव-जगत के विविध प्राणियों और मानव के स्वयं के भी हावभाव, स्वभाव और आवेग, आवेश, सहजता और रहस्यमयता; कुटिलता, क्रूरता, चतुरता एवं तस्करी, चाकरी व चाटुकारिता का समेकीकरण करके उसको जीवन्त लेखांकन का उदाहरण बना दिया गया है। यों तो चित्रमयता की उपलब्धि सर्वत्र है, किन्तु इतना कुछ ही देख लेना अपनी याददाश्त को ताजा करने के लिए सुविधाजनक रहेगा—'The lion raised his head, as if wishing, and the elephant caught the gesture in quite a friendly manner. The lion smiled and with great earnestness and confidence said (etc.)'. 'The elephant raised high his massive trunk in appreciation, laughed and said–"Hey! well, well! But what about your (lion's) eaternal adviser, Miss Fox; since when have you stopped consulting her good-self?"... 'Cow shook her moon-like horns, camel, his long neck, dog wagged his tail and the monkey quivered his nostrils in assent....'

उल्लू की विनाशक क्षमता का नमूना उल्लू की वाणी में ही निम्नांकित पद्यांश (लंबी कविता का अंतिम भाग) देखने योग्य है जो तेहरान के समाचार पत्र 'खल्क' में उल्लू के चित्र सहित प्रकाशित हुआ :–

Sadha Yateem-O-La Maken (Hundreds of orphans and homeless).

Aanan Ke and Be Khaniman, (Those who have no homes of their own).

Dar Kunj Har Veeren Dookan, (In the corners of every desolate shop)

Beeni ham Agosh-i-Sagn. (You will find them by the side of

Aan-ast Choonan, I enast chuneen, (That is like that, this is !"

Iran Nagar Veeran Ba Been (See Iran and find desolate)

शौकत उस्मानी ने भारत की आजादी के लिए क्रांतिकारी भूमिका निभाने हेतु *यायावरी की। वे दुनियाभर के क्रांतिचेता व्यक्तियों के सर्वाधिक प्रिय व्यक्ति बने।* अनेक सभ्यताओं और संस्कृतियों को आत्मसात् किया। अनेक भाषाओं पर आधिपत्य किया। फिर भी धरती से जुड़े रहने के कारण शास्त्रीयता को अपने पर कभी हावी नहीं होने दिया। बड़ी-बड़ी *गहरी सैद्धांतिकताओं को आम लोगों की सरल भाषा में सहजता से कह जाना उस्मानी की अपनी खूबी थी। लोकोक्तियों और मुहावरों* के प्रयोग हर जगह मिल जाएँगे। जैसे—"Joinda Yabinda' (Persian)-(One who seeks, finds) या 'जिन खोजा तिन पाइया', 'चट मंगनी पट ब्याह', काजी जी दुबले क्यों ? शहर की फ्रिक में (या देश की चिंता से), केम छे, सारो छे (गुजराती) या कैसे हो–सब ठीक!

फिर 'भोज पत्र', 'पारस पत्थर', बिल्ली को शेर की मौसी, लोमड़ी शेर की सलाहकार, 'म्यांऊ-म्यांऊ, जानवरो की अलग-अलग प्रवृत्तियो के संकेत, 'मिया मिट्ठू' बोलो, Shakh-I-AAHOO (हरिण के सींगों पर प्रेमियों द्वारा आवास निर्माण) तथा आदमी के पंख लगाना आदि।

इस अभूतपूर्व साहित्यिक व्यंग रचना में उस्मानी ने अपनी उस कल्पना को उजागर किया है जिसका आधार विश्व की वह यथार्थ दुर्घटना है जिसने मानव द्वारा मानवता के अस्तित्व को ही समाप्त करने की संभावना व्यक्त कर दी। ऐनिमल कॉन्फ्रेंस, नाभिकीय हथियार रूपी मृत्यु के महापुंज से जूझनेवाली शांति शक्तियों का संवेदनात्मक संबल बन कर सामने आई। इसीलिए विश्वभर में इसका *इतना सम्मान किया जाना* उसका प्राप्य ही कहा जायगा।

जब मनुष्य मानव जाति को ही समाप्त करने की तैयारी कर चुका तो सारी इन्सानियत के 'कॉमरेड' शब्द की सार्थकता ही कहाँ रही। साथ संघर्ष करके जीने मरने को अभिव्यक्त करने के लिए सर्वाधिक इस शब्द का उपयोग दुनियाभर के कम्युनिस्टों और अन्य वामपंथियों ने किया। जवाहर लाल नेहरू भी 'Friends and Comrades' का प्रयोग अपने संबोधनों में किया करते थे (जैसा कि 'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' में जगह जगह किया गया है)। शौकत उस्मानी द्वारा दुनिया की एक ऐसी भयानक परिस्थिति *सामने पेश किया जाना जिसमें मौत का भय है, और यह भय ही है जिसने नभचर,* थलचर और जलचर सभी को अपने पारस्परिक वैमनस्य को छोड़ने को विवश किया और अब सभी एक होकर अपने एकमात्र दुश्मन मनुष्य के खिलाफ मोर्चेबन्दी में 'कॉमरेड' बन गए। 'कॉमरेड' का प्रयोग जब शेर के द्वारा अपने से कमजोर या अपने ही शिकार के लिए किया जाता है तो साफ तौर पर उसमें उद्देश्य की एकरूपता दिखाई देती है। एकता के लिए ही हिंसक अपनी हिंसक प्रवृति को छोड़कर मांसाहार तक छोड़ने को तैयार हो जाते है। 'कॉन्फ्रेंस' के वातावरण की तुलना वामपंथियों की कांग्रेसों से की जा सकती है।

एक ध्यान देने योग्य पहलू यह भी है कि 'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' की अध्यक्षता

'शेर की सलाहकार' मिस फॉक्स (Miss Fox) करती है। अब मिस फॉक्स अबला नारी नहीं (जैसा कि पुरुष प्रधान समाज ने उसे कर दिया) और न ही नारी जाति की होने के कारण उपेक्षित है, बल्कि शौकत उस्मानी ने कॉन्फ्रेंस के माध्यम से सर्वोच्च सम्मान का स्थान देकर पुरुष प्रधानता के फलस्वरूप पैदा हुई सारी विकृतियों को चुनौती दे डाली है। उस्मानी ने इस गद्य काव्यमयी लेखांकनी के माध्यम से अपने उच्चतम मूल्यों को अत्यंत चतुरता के साथ अभिव्यक्त किया है।

ऊँचे दर्जे के समीक्षक की समीक्षा यदि उस्मानी के साहित्य को मिल पाती तो निस्संदेह भारतीय साहित्य के इतिहास में यह लेखक अनेकों से अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करता। अब भी उस्मानी साहित्य का गहराई से अध्ययन किया जाय और उसकी उपलब्धियों को कसौटी पर उतारा जाय तो वह क्रांतिकारी व्यक्ति साहित्य की भी एक अमूल्य धरोहर साबित हो सकता है।

'ऐनिमल कॉन्फ्रेंस' एक असाधारण कलाकृति है 'सतसैय्या' के तीर की तरह मार करने वाले 'दोहों' की तरह। आवश्यकता है आज भी इसके हिन्दी-उर्दू-अनुवाद घर-घर पहुँचाए जाने की। साम्राज्यवादी साजिशों के विरुद्ध संघर्ष आज भी उतना ही प्रासंगिक है।

* * * *

Night of the Eclipse-(A collection of 8 short stories) by Shaukat Usmani, Published by-Usta Publications Corp., Kitab Mahal, Elphinstone Street, Saddar, Karachi, Copyright with the author, 2nd Edition, June 1951. "Dedicated to Chekhov who inspired me."

प्रस्तावना के अनुसार शौकत उस्मानी ने ये कहानियाँ अपनी जेलयात्रा के तीसरे दौर अर्थात् सन् 1940 से 1945 के मध्य में जेल जीवन भोगते समय लिखीं। सामान्यतया वे प्रेमकथाओं को तब तक नहीं उठाते जब तक कि उनका आधार सामाजिक-राजनीतिक न हो। सन् 1945 के बाद लेखक के पास करीब ऐसी 60 कहानियाँ थीं जिनका प्रकाशन नहीं हो सका था। इसी प्रस्तावना मे लेखक ने बंबई की अपनी घनिष्ठ मित्र डॉ. (कौंटेस) वेरा क्रासी के प्रति आभार व्यक्त किया है जिन्होंने कतिपय कहानियों और उस्मानी की अन्य रचनाओं में मूल्यवान संशोधन देने का कर्तव्य वहन किया।

'नाइट ऑफ द एक्लिप्स' में निम्नांकित आठ कहानियों में संकलित किया गया है—

(1) Sweeper Girl	(भंगिन लड़की)
(2) Night of Eclipse	(ग्रहण की रात)
(3) 'I was absent, Alas'	(खेद, मैं अनुपस्थित था!)
(4) At her house	(उसके घर पर)

(5) Native Bracelets (देशी कंगन)
(6) Frigidity (बेरुखी)
(7) Love Villa (प्रेमनगर)
(8) Rukmini (रुक्मिणी)

हरिजन या भंगिन लड़की के लिए यह समझ पाना मुश्किल है कि उसे मैला क्यों ढोना पडता है जबकि 'ब्राह्मण' या अन्य उच्च वर्ण के लोगों को वही काम क्यों नहीं करना पडता। दादी केवल 'भगवान की देन' और 'पिछले जन्म के पापों का फल' कह कर उसको निरुत्तर कर देती है।

उपेक्षित, अपमानित और प्रताडित रूपा जवान और खूबसूरत औरत बन जाती है। सब उसकी ओर ललचायी नज़र से घूरते हैं और मनचले फबतियां कसते हैं। पर वह सारा ज़हर पी कर चुप रहती है।

आखिर इसी तिरस्कृत जिन्दगी के बोझ को ढोते-ढोते वह क्षय रोग से ग्रस्त होकर दु:खांतिका को वरण कर लेती है। आज भी उस जैसी रूपाएँ खिलते ही मुरझा जाती हैं और पता नहीं कब तक देश के इस तबके का यही हाल बरकरार रहेगा।

अगली कहानी का शीर्षक है 'नाइट ऑफ द एक्लिप्स' (ग्रहण की रात) यही शीर्षक उस्मानी के इस कहानी संकलन का भी है।

ग्रहण के कारण घर मे सभी गंगास्नान को चले जाते हैं तो चित्रकार बच्चन को मौका मिल जाता है और वह अपनी प्रेमिका माधुरी से मिलने उसके घर चला जाता है। संयोगवश वह भी उसे घर में अकेली मिल जाती है। ग्रहण की उस रात को उनका मिलन होता है। एक दूसरे के बीच वायदे हो जाते हैं लेकिन जातिगत संकीर्णता के कारण शादी नहीं होती और अत में उनके पुनर्मिलन की संभावनाएं समाप्त कर दी जाती है और उन दोनों की जिन्दगी में वैसी ग्रहणरात्रि कभी नहीं लौटती। इस तरह घुल-घुल कर मरते-मरते जीने की दास्तान बन जाती है।

लतीफ़ और सीता प्यार करते है और एक दूसरे के लिए सब कुछ करने की सोचते हैं तो सांप्रदायिक संकीर्णता बीच में मोटी दीवार बन कर उन दोनों के विवाह की संभावनाओं को ध्वस्त कर देती है। कथानक रेलयात्रा में वर्णित किया जा रहा है अर्थात् लतीफ अपने बीते दिनों की कहानी अपने दोस्तों को सुना रहा है और अनजानी पहचानी कृशकाय सीता पास में बैठी सुन रही है। ट्रेन जब रुकती है तो सीता अपने बच्चे को लतीफ को दे कर चौंकाती हुई कहती है—'अपने भानजे को प्यार करो लतीफ!' और कहानी का पटाक्षेप हो जाता है।

'At Her House' (उसके घर पर) का नायक एक गरीब सुथार है। प्रेमसिंह सुशिक्षित और सभ्य है। वह सरकारी कारखाने में नियुक्त है, किन्तु सुपरिन्टेन्डेन्ट कालीपदा उसे अपने घर में फर्नीचर की मरम्मत का काम करवाता है। वहाँ कालीपदा की लड़की नलिनी लता प्रेमसिंह से प्रेम करने लगती है। बात बढ़ती जाती है किन्तु लता का पिता प्रेमसिंह से अपनी लड़की की शादी करने से इसलिए इन्कार कर

देता है कि वह ग़रीब है। किन्तु कथानक में उस समय मोड़ आ जाता है जब एक रेल दुर्घटना में कालीपदा की मौत हो जाती है। प्रेमसिंह सुपरिन्टेन्डेन्ट बना दिया जाता है। नलिनी और प्रेमसिंह का रास्ता साफ़ हो जाता है और कहानी दुःखांतिका बनने के स्थान पर सुखान्तिका बन जाती है।

'देशी कंगन' (नेटिव ब्रेसलेट्स) का ब्रिगेडियर जनरल लार्किंग पठान कैदियों के साथ निर्मम अत्याचार करता है, किन्तु उसकी पत्नी उसके इस प्रकार के व्यवहार से घृणा करती है। वह जवान भी है और खूबसूरत भी। ब्रिगेडियर बूढ़ा, क्रूर और रूखे स्वभाव का है। पत्नी दयालु भी है और स्पष्टवादिनी भी।

ब्रिगेडियर एक खूबसूरत जवान अफगानी गड़रिये को मय उसकी भेड़ों के पकड़ कर बंदी बना लेता है और उसे घर ले आता है। एक दिन अमीर हसन ब्रिगेडियर के घोड़े की काठी साफ कर रहा था तो लार्किंग की पत्नी ने उसके पास एक चमकीली चीज़ देखी और पूछा–'यह क्या है?' 'नकली सोने के कंगन।' उस लड़के ने कहा

'तुम उनका क्या करोगे?'

'माँ ने मंगाए हैं मेरी होने वाली बीबी के लिए।'

'क्या तुम मुझे दे सकते हो, मै तुम्हारी बीबी बन जाऊँ।'

'तुम्हें लार्किंग को छोड़ना होगा।'

सौदा पट जाता है। साजिश होती है। श्रीमती लार्किंग अपने पति को शराब में ज़हर मिलाकर लडके के साथ सुदूर भाग जाती है और अंत में कंगन पहन कर अमीर हसन से शादी कर लेती है।

राधारामी 'बेरुखी' (Figidity) का अर्थ नही समझ पाती कि इस शब्द का प्रयोग राधेमोहन ने उसे ही लक्ष्य करके क्यों किया। राधेमोहन धनवान है। उसने राधारामी के लिए गहने खरीद कर दिए और इतना खर्च किया फिर भी बेरुखी बनी रही।

राधारामी अपनी दास्तान सुनाती है कि वह कैसे रामकली वेश्या के जाल में फंसी जो उसके लिए ग्राहकों से दौलत बटोरती है। वह दौलत और गहने नहीं चाहती—वे सब कुछ रामकली के पास है और राधेमोहन से उसने अपनी पिछली मोहब्बत की कहानी कह सुनाई। राधेमोहन को अब पता चलता है कि यह लड़की उसके दोस्त की बेटी है और उसका असली नाम 'पार्वती' है।

दूसरे सुबह राधेमोहन पुलिस को बुलाकर पार्वती उर्फ राधारामी को रामकली के पंजे से छुड़ा लेता है और उसे सकुशल अपने दोस्त अर्थात् पार्वती के पिता को सौंप देता है।

'लव विल्ला' (प्रेमनगर) सुनसान में स्थित भव्य, किंतु, खंडहर इमारत है जिसकी रखवाली एक चौकीदार करता है और हर वृहस्पतिवार को एक महिला आ कर अपने दिवंगत पुत्र की कब्र पर शमाओं को जलाती है और मिठाई बांटती है। कब्र मुस्तफा कासिम नामक धनी व्यापारी की है। एक बरसाती रात को दो राहगीर

लड़के आते हैं और चौकीदार उन्हें ठहरने की स्वीकृति दे देता है।

लड़कों के दिल में जिज्ञासा पैदा होती है उस पुरानी इमारत के बारे में जानने की, और यहीं से कहानी शुरू होती है।

मुस्तफ़ा कासिम एक ईसाई लड़की से प्यार करता है। उसकी माँ इसे मंज़ूर नहीं करती। वह ईसाई लड़की को अपनी पुत्रवधू नहीं बनाना चाहती। माँ और बेटे में विवाद गहराता जाता है।

मुस्तफ़ा कासिम की माँ उस ईसाई लड़की मैरी के पिता डी. क्रिस्टो को जो उसी के कारखाने में मैनेजर है—रिटायर कर देती है और सपरिवार अपने देश वापिस जाने को विवश कर देती है। एक दिन कासिम को सूचना मिलती है कि मैरी को काले सांप ने काट लिया और उसकी मृत्यु हो गई। इसी सदमें में मुस्तफा कासिम ने ज़हर पी कर आत्महत्या कर ली। उसी की यादगार में उस इमारत को 'लव विल्ला' (प्रेमनगर) की संज्ञा दी जाती है।

इस संकलन की अंतिम कहानी 'रुक्मिणी' है जो शौकत उस्मानी के ही अन्य कहानी संकलन 'अनमोल कहानियाँ' के हिन्दी संस्करण में सन्निहित है। यहाँ यह रचना उसी का अंग्रेजी अनुवाद है। इससे यह तो साबित हो ही जाता है कि 'रुक्मिणी' उस्मानी की सबसे अधिक प्रिय रचनाओ में से एक है। इसका अंग्रेजी अनुवाद भी उनके खुद के द्वारा ही किया हुआ है।

'रुक्मिणी मर गई' के पहले वाक्य ने ही पाठक की जिज्ञासा को उभार दिया है साथ ही उसकी संवेदना को भी झकझोर दिया है। उसकी मौत पर रोने वाला कोई नहीं–सिर्फ उसका प्रेमी रतन अलग-थलग बैठा रो रहा है।

'रुक्मिणी' का बड़ी आसानी से नाट्यरूपांतरण या फिल्मांकन किया जा सकता है। रुक्मिणी की पीड़ा पता नहीं कितनी ही रुक्मिणियों की पीड़ाओं को समेटे हुए है। 'राम नाम सत्' से शुरू होने वाली त्रासदी निम्नांकित दर्द में डूब कर समाप्त हो जाती है :

ता सहर वो भी न छोड़ी तूने ऐ बाद-ए-सदा,
यादगार-ए-रा उनके महफ़िल थी परवाने की ख़ाक।

इस संकलन की लगभग सभी कहानियों में मुफलिसी और मौहब्वत दोनों की पीड़ाएं एक साथ अंतःप्रवाहमान हैं। रोटी और कामना की अनिवार्यता एक सार्वजनीन दबाव है।

उस्मानी ने सौ से ऊपर कहानियाँ लिखीं जिनमें आधी ही प्रकाशित हो सकीं। बाकी कहाँ किस जगह रखी हैं इसका कोई पता नहीं और अब वे प्रकाशित हो भी सकेंगी कि नहीं—इस विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। हाँ, यह अनुमान तो लगाया ही जा सकता है कि उनमें सामाजिक उत्पीडन को उभार कर रखा गया होगा और उनकी पृष्ठभूमि में उस्मानी की अपनी चिंतनधारा और संवेदना रही होगी।

सरल भाषा में गहरी बात कहने के उदाहरण उपर्युक्त संकलन में यत्र तत्र सर्वत्र

मिल जायेंगे। संवाद इतने सार्थक हैं कि पात्र अपने परिवेश को सजीवता से सराबोर तो करते ही हैं साथ ही कथानक को अभिनय रूपांतरण में ढल सकने की क्षमता प्रदान करते हुए भी दिखाई देते हैं। अनेक स्थल गद्यकाव्यमय होकर एक विशेष आनंद की अनुभूति के शिखर को छूते हुए प्रतीत होते हैं।

उस्मानी की यह रचना हमारी एक और अमूल्य धरोहर है जिसकी सुरक्षा का उत्तरदायित्व हमें बखूबी वहन करना चाहिए। इसके लिए 'उस्मानी साहित्य संरक्षण संस्थान' का गठन भी किया जा सकता है या कोई सुव्यवस्थित और सुस्थापित संस्था भी इसकी जिम्मेवारी ओट सकती है।

* * * *

I Met Stalin Twice (मैं स्टालिन से दो बार मिला)–लेखक-शौकत उस्मानी, प्रकाशक-के. कुरियन, 25, वोड हाउस रोड, बंबई-1, मुद्रण-डी.एन. महले, कनाडा प्रेस, पोदार चैम्बर्स, 109, पारसी बाज़ार स्ट्रीट, फोर्ट, बंबई-1, प्रथम सस्करण-1953 सर्वाधिकार प्रकाशक द्वारा आरक्षित। प्रकरण-VI, पृष्ठ सं. 29, मूल्य-रु. 1 मात्र।

पहली मुलाकात–मॉस्को मे कॉमिन्टर्न कार्यालय के कमरे में अगस्त, सन् 1921 ई.

स्टालिन चुपचाप बैठे लोहे के पैन से लिख रहे थे। उनके होठ को लंबी मूंछ ने ढक रखा था, उनका चेहरा झुर्रीदार था और उस पर भोगी हुई यातना झांक रही थी। कमरा साफ-सुथरा एवं सामान्य सज्जावाला था। वातावरण गंभीर था। चमत्कृत करने वाली असाधारणता का नाम-निशान नहीं था। यह ठीक दूसरे किसी कमरे के समान ही था। कार्ल मार्क्स, फ्रेडरिक एंगेल्स, रोज़ा लक्सम्बर्ग और कार्ल लीब्रमीख्त के चित्र दीवारों की शोभा बढ़ा रहे थे।

नौजवान शौकत उस्मानी ने कमरे में प्रवेश किया। स्टालिन ने गंभीर और दृढ़मुद्रा में देखा। उन्होंने आगन्तुक को कुर्सी पर बैठने का संकेत दिया, किन्तु युवक नहीं बैठा। वह जल्दी में था। उस्मानी ने रूसी भाषा मे कहा–'मैं वापिस हिन्दुस्तान जाना चाहता हूँ; कृपया मेरे जाने की व्यवस्था करें।''

पुस्तिका में इस मुलाकात के पीछे की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए बताया गया है कि शौकत उस्मानी किन प्रेरणाओं एवं परिस्थितियों के कारण अपना घर छोड़कर रवाना हुए, ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासन को समाप्त करने के लिए हथियारों की मदद की तलाश में अभियान चालू किया, मुहाजिर के रूप में अफगानिस्तान में प्रवेश किया, अनेक असह्य कष्टों को झेलते हुए आखिर सोवियत संघ की सीमा में चले गए। सोवियत संघ में अक्टूबर क्रांति की रक्षा के लिए प्रतिक्रांतिकारियों के विरुद्ध अर्थात् क्रांतिकारी सेना के पक्ष में युद्ध में सशस्त्र भाग लिया। केरकी की रक्षा में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करने की वजह से सोवियत सरकार ने भारतीय क्रांतिकारियों का उच्च मूल्यांकन किया। उन्हें 'होटल लक्स' में ठहराया गया था।

सन् 1921 की ग्रीष्म में मास्को में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी काँग्रेस

हुई। इसमें भाग लेने के लिए अनेक देशो के कम्युनिस्ट नेताओं से मिलने का अवसर मिला। वैसे शौकत उस्मानी पहली बार 7 फरवरी, 1921 को प्रिंस क्रोपाट्किन के अंतिम संस्कार में भाग लेने के लिए आए लेनिन से मिल चुके थे और दूसरी बार उन्हें 'नई आर्थिक नीति' के पक्ष में बोलते हुए देखा था।

जब कॉमिन्टर्न ने भारतीय क्रांतिकारियों को ब्रिटिश सरकार के खिलाफ हथियार देने की मांग को अस्वीकार कर दिया तो उन्होंने भारत वापिस लौटकर स्वाधीनता संघर्ष में भाग लेने का निश्चय किया। इसी उद्देश्य से शौकत उस्मानी की स्टालिन के साथ उपर्युक्त पहली मुलाकात हुई थी। स्टालिन उस समय कम्युनिस्ट पार्टी के शीर्षस्थ नेता और जातीयताओं के लिए पीपुल्स कमीसार थे। उस्मानी स्टालिन से अपने लिए स्पष्ट उत्तर लेने के लिए दृढ़ निश्चय किए हुआ था।

स्टालिन कठोर दिखाई दे रहे थे। उस्मानी से बात करते समय उनका चेहरा भावाभिव्यक्ति-रहित था। उस्मानी द्वारा भारत लौटने का कहने पर स्टालिन ने उसकी ओर आँखें गढाते हुए पूछा—'तुम् यहाँ किसलिए आए थे। क्या तुम यहाँ से पढ़ाई किए बिना वापिस जाना चाहते हो? उस्मानी ने सोवियत संघ से हथियार देने की अपनी मांग दोहराते हुए बताया कि कामिन्टर्न ने इसे स्वीकार नहीं किया है। स्टालिन ने जवाब दिया 'बात यह नहीं है, हम तुम्हारी मदद करना चाहते हैं, पर तुम्हारे खुद के लोग ही आपस में लड़ पडे हैं और उन्होंने ही तमाम मदद को ठुकरा दिया है।' इस बात को उन्होने सोवियत संघ में आए भारतीयो में सोवियत मदद के बारे में हुए विभाजन और भारत मे कांग्रेसियों द्वारा इसका प्रबल विरोध करने के संदर्भ मे कहा था। जब उस्मानी ने कहा–'वह उनमें से किसी मे शामिल नहीं है।' तो स्टालिन ने कहा–'यह अच्छी बात है कि तुम्हारा उन विचारों से कोई वास्ता नहीं। यदि तुम जाना ही चाहते हो तो वास्तव मे तुम्हारी योजना क्या है?'

'मेरी योजना पर्सिया से होते हुए जाने की है। मैं पर्सियन भाषा अच्छी तरह जानता हूँ और मुझे कॉमिन्टर्न से किसी प्रकार की आर्थिक सहायता की ज़रूरत नहीं है।'

इस पर स्टालिन मुस्कराए और यह इस साक्षात्कार में पहली बार हुआ। उन्होंने पूछा–'बिना पैसे के तुम क्या करोगे?'

'मै दरवेश का भेस बदल कर आसानी से जा सकता हूँ।'

'इसकी जरूरत नहीं है। सारी दुनिया में कॉमिन्टर्न के लोग मौजूद है और वे तुम्हारी मदद करेंगे। क्या तुम मुझसे वायदा करते हो कि तुम हमारे साथ संपर्क बनाए रखोगे?'

'निश्चय ही, बशर्ते आप हमें हथियारों से लैस साजोसामान से मदद करें।

'याद रखो, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ऐसी किसी प्रकार की साहसिकता के विरुद्ध है। वे हमेशा ऐसी सहायता के विरुद्ध अखबारों में बयानबाजी करते हैं। और लेख लिखते हैं।' उनका आशय गांधीजी द्वारा 'यंग इण्डिया' में लिखे गए इस संबंध के

लेखों से था। उन्होंने फिर कहा 'हम तुम्हें जाने की स्वीकृति देते हैं, लेकिन मैं तुम्हें चेतावनी देता हूँ कि तुम जब भारत पहुँचोगे तो वहाँ के हालात देखकर निराशा से घिर जाओगे, क्योंकि वहाँ एक प्रकार का अहिंसात्मक संघर्ष चल रहा है। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो वापिस यहाँ लौट आना और यहाँ हमेशा तुम्हारा स्वागत होगा।'

इतना कहकर स्टालिन ने हाथ मिलाया, कुछ मुस्कराए और इसी के साथ यह पहली मुलाकात समाप्त हो गई।

शौकत उस्मानी के अनुसार 'स्टालिन अपनी बात का धनी था—यह बात उसकी उपर्युक्त वार्ता के बाद में घटित होने वाली घटनाओं से साबित हो जाती है। लेकिन उस समय मैं मॉस्को वापिस नहीं जाना चाहता था। मैं अपने ही देश जाने का पक्का इरादा कर चुका था।'

दूसरी मुलाकात—जून, सन् 1928 में शौकत उस्मानी की दूसरी सोवियत संघ की यात्रा में संपन्न हुई। वह पर्सिया होते हुए मॉस्को पहुँचा। वहाँ उसने महसूस किया कि स्टालिन के द्वारा उसका हमेशा स्वागत किए जाने का वायदा कोरा वायदा ही नहीं था, बल्कि उसमें निहित सच्चाई भी थी। जो सम्मान वहाँ उसे मिला उसकी उसे न तो आशा थी और न ही उसने इसकी कल्पना ही की थी। उस्मानी को कॉमिन्टर्न की कांग्रेस के अध्यक्ष मंडल में शामिल करके वहाँ बिठाया गया जहाँ एक सीट के बाद स्टालिन की खुद की सीट थी।

कॉमिन्टर्न की यह छठी कांग्रेस जिस समय हो रही थी, वह विश्व इतिहास का सबसे अधिक आलोच्यकाल था। यह कांग्रेस युद्ध के साये के अंतर्गत हो रही थी।

मंच पर स्टालिन और अन्य अध्यक्ष मंडल के सोवियत साथी तो थे ही साथ ही माननीया जर्मन कम्युनिस्ट साथी क्लारा जेट्किन और साथी एल्बर्ट, इटली के एर्कोली, अमरीकी राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार लवस्टोन आदि थे। कॉमिन्टर्न के अध्यक्ष की हैसियत से कॉ. बुखारिन ने चेयरपर्सन की कुर्सी ग्रहण की।

इस कांग्रेस में अध्यक्ष का पद हटा दिया गया था और कॉमिन्टर्न के सबसे महत्त्वपूर्ण सदस्य को महासचिव के रूप में निर्धारित किया गया। इस पद पर सुप्रसिद्ध कॉ. प्याटनिट्स्की को निर्वाचित किया गया जो छोटे कद के होते हुए दृढ़, चतुर और पूर्ण उत्साही थे और जिन्होंने कॉमिन्टर्न को मजबूत आधार प्रदान किया था।

कांग्रेस का उद्घाटन करते हुए बुखारिन ने अंतर्राष्ट्रीय स्थिति पर अपनी थीसिस का प्रारूप पेश किया और स्वीकृति हेतु पहला प्रस्ताव वर्ग युद्ध के शहीद कैदियों के बलिदानों के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने से संबंधित था। बुखारिन की थीसिस पर उसके पक्ष और विपक्ष में प्रतिनिधियों द्वारा विचार-विमर्श किया गया। बहुत से प्रतिनिधियों ने ट्रॉट्स्की के समर्थन में तीखी टिप्पणियां कीं, जो यद्यपि अप्रांसगिक थीं और जिनमें स्टालिन पर यह दोषारोपण किया गया था कि इससे ट्रॉट्स्की को यातना का शिकार होना पड़ा। अपने ऊपर की गई व्यंग्यपूर्ण उक्तियों से स्टालिन

उत्तेजित नहीं हुए जैसा कि प्रायः ट्रॉट्स्की हो जाया करता था।

उस्मानी ने निकट से स्टालिन को देखा कि वे शान्तिपूर्वक नोट लेते जा रहे थे। वे प्रत्येक आलोचक वक्ता के भाषण को अन्तिम शब्द तक धीरज के साथ सुनते रहे। उनके चेहरे पर कहीं किसी प्रकार की असहज भावमुद्रा का संकेत नहीं था जैसा कि कांग्रेस के अन्य बहुत से वक्ताओं में परिलक्षित हो रहा था।

स्टालिन ने जब बोलना शुरू किया, वे इतने सहज और शान्त थे कि कोई भी श्रोता बिना गंभीर हुए नहीं रह सका। उन्होंने अपना बायां हाथ पीछे किया हुआ था और दाहिना अपने सीने पर। उन्होंने सभा के सामने स्पष्ट किया कि मार्क्सवाद में दुस्साहसवाद का कोई स्थान नहीं है। फिर उन्होंने अपने तर्कों को घटनाओं के उदाहरण देकर प्रमाणित किया। उन्होंने प्रतिनिधियों का ध्यान सन् 1926 की ओर आकृष्ट किया जब ट्रोट्स्की ने सोवियत संघ की सशस्त्र शक्ति के द्वारा जर्मनी में दखल देने की इच्छा की।

स्टालिन ने व्यक्तिगत दोषारोपण को दरकिनार किया और अपने कामों का सही मूल्यांकन करने का आग्रह किया। उन्होंने बताया कि ट्रोट्स्की के बारे में जो भी निर्णय लिए गए वे उनके व्यक्तिगत निर्णय नहीं थे, बल्कि सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के सोलह सचिवों के सामूहिक निर्णय थे। बाद में इस छठी कांग्रेस के प्रमुख प्रतिनिधियों के सामने उन्होंने बहुत विस्तार के साथ वे स्पष्टीकरण प्रस्तुत किए जिनके आधार पर ट्रॉट्स्की के बारे में फैसले लेने पड़े थे। इस सबके बाद प्रतिनिधियों ने स्टालिन की तर्क और अभिव्यक्ति-कुशलता को तहेदिल से मान्यता प्रदान की। उन्होंने बहुत से ट्रॉट्स्की समर्थको को सोवियत संघ और मार्क्सवाद विरोधी कार्यवाहियों के कारण दोषी साबित करके उन्हें ट्रॉट्स्की विरोधियों के रूप में बदल दिया।

इस कांग्रेस के कई महीनो के बाद 7 नवम्बर, 1928 को रूसी क्रांति की ग्यारहवीं वर्षगांठ मनाई गई। बोलशोई थिएटर की सज्जा देखने लायक थी। इसमें तालियों की गड़गड़ाहट के साथ मीटिंग शुरू हुई। बुखारिन और अन्य कई नेताओं के भाषण हुए। स्टालिन चुपचाप बैठे रहे और बाद में वहाँ से बिना कहे-सुने चल दिए। वे हमेशा प्रचार और दिखावे से परहेज किया करते थे। वे घंटे तक भीड़ के बीच में बैठे उसके साथ तालियाँ बजाने में साथ देते रहे थे, मगर अंत में ज्योंही खड़े होकर जाने लगे, एकाएक लोगों का ध्यान उनकी ओर गया। जनसमूह ने एक स्वर से चिल्लाना शुरू किया—कॉमरेड स्टालिन, हम स्टालिन को सुनना चाहते है। स्टालिन ने कहा, 'नहीं, कॉमरेड, मुझे बहुत जरूरी काम है, अभी आप मुझे जाने की इजाजत दें। बुखारिन आपके पास हैं।' ऐसा कहकर वे तालियों की गूंज के बीच बाहर निकल गए।

इसी दिन की एक और घटना। सेना के जवानों और मेहनतकशों का बहुत बड़ा जुलूस, सोवियत नायकों के चित्रमय पोस्टरों के साथ नारे लगाते हुए चल रहा था। लेनिन के चित्र के पास खड़े होकर बोलते समय स्टालिन ने कहा—'हमारे कॉमरेड

लेनिन कभी इतने मोटे शरीर के नहीं थे।' माइक पर आवाज ज्यों ही दूर तक गूंजी कि सब अट्टहास करने लगे।

नवम्बर 1928 में जब शौकत उस्मानी और स्टालिन की मुलाकात के दौरान बातचीत हुई तो उन्होंने कहा था कि उसे फिलहाल भारत में गुरिल्ला लड़ाई चलाने के विचार को तिलांजलि दे देनी चाहिए, क्योंकि वह व्यावहारिक नहीं है। इसके साथ ही यह आश्वासन भी दिया कि उपयुक्त अवसर आने पर वे हरसंभव हर प्रकार की सहायता देंगे। तब तक इंतजार करना चाहिए। उनकी इस बात से यह संकेत मिलता था कि बुखारिन को हटाया जाना प्रस्तावित है। उस्मानी को इससे बडी निराशा हुई।

स्टालिन ने इसके साथ यह भी चेतावनी दी कि फिर भी यदि भारत लौटकर उसने ऐसा दु:साहसिक कदम उठाया तो उसे कम से कम दस वर्ष की जेल की सज़ा दी जा सकती है। गुरिल्ला लड़ाई छेड़ने से पहले उसे उसका प्रारंभिक ज्ञान और अनुभव तो हासिल करना ही होगा। इस काम के लिए उन्होंने एक चीनी कॉमरेड को नियुक्त करने का प्रस्ताव किया था जो इस तरह का प्रशिक्षण दे देगा।

उस्मानी जैसे ही भारत लौटे उन्हें मार्च, 1929 में फिर से गिरफ्तार कर लिया गया। इसी पुस्तिका में उस्मानी ने लिखा—"मैं ईमानदारी के साथ इस बात पर जोर देकर कहना चाहता हूँ कि मेरी विदाई तक स्टालिन मेरे प्रति बहुत सहानुभूत थे। वे हमेशा ठेठ यथार्थवादी थे और उन्होंने मेरे काल्पनिक सपनों की विशृंखलता की ओर इंगित किया था। बाद में मैंने स्वीकार किया कि मैं कल्पना की उड़ान भर रहा था, लेकिन यह सब मेरे बचपन से पड़े भावप्रधान संस्कार का प्रतिफल था। यह दुर्भाग्य की बात थी कि भारतीय समस्या के विषय में स्टालिन की जो वस्तुपरक पकड थी वह न तो मेरे में और न ही मेरे दोस्तों में थी। इतिहास ने साबित कर दिया कि स्टालिन सही थे।"

स्टालिन ऊपर से प्रभावशाली दिखाई नहीं देते थे जैसे कि नेपोलियन, मुसोलिनी और ट्रॉट्स्की आदि किन्तु, 'मेरी उनसे बातचीत के बाद मैंने महसूस किया कि वे ऊपर से अल्पभाषी और भीतर से इस्पाती थे। उनमें भाववाद का लेशमात्र भी नहीं था। ...वे कभी-कभी ही मुस्कराते थे, बल्कि हमेशा गंभीर और भावाभिव्यक्ति शून्य दिखाई देते थे। मेरा सबसे अधिक ध्यान उनके उस गहन चेहरे ने आकर्षित किया जिसमें पहले भोगे गए असह्य कष्टों की खरोंचें विद्यमान थीं।'

'स्टालिन अब इस दुनिया में नहीं हैं। वे इतिहास में समा गए और विश्व के दीर्घकालीन क्रांतिकारी इतिहास के समुज्ज्वल पृष्ठों में अंकित हो चुके। उनका नाम और साथ ही कष्टकारक रेखाओं से जर्जरित उनका चेहरा हमेशा याद किया जाता रहेगा।'

'I Met Stalin Twice' अपनी विषय-वस्तु के अनुरूप एक विवरण प्रधान है, किन्तु इसमें एक ऐसे व्यक्ति के चरित्र को उद्घाटित किया गया है जो

सर्वहारा अधिनायकत्व कायम करने वाला दुनिया के रंगमंच का अनुपम नायक था तो दूसरी ओर अल्पसंख्यक शोषक वर्ग की नजरों में काँटे की तरह खटकने वाला अवांछनीय खलनायक। स्टालिन के विषय में यह द्वन्द्वात्मक धारणा बनी रहेगी ... न केवल गैर कम्युनिस्टों के मस्तिष्क में, बल्कि कम्युनिस्टों के मस्तिष्क में भी। उस्मानी की इस रचना में भी इस द्वन्द्व की ओर इंगित किया गया है, किन्तु लेखक स्वयं निर्द्वन्द्व होकर स्टालिन के वैशिष्ट्य को आत्मसात् किए हुए उसकी महानता को पूरी स्पष्टता के साथ प्रमाणित करने को विवश हो जाता है।

शौकत उस्मानी ने इसमें स्टालिन के साथ अपनी दोनो मुलाकातों की पृष्ठभूमि में उन कारणों को अंकित किया है जिनके होने से यह सब कुछ संभव हो सका। अपनी अन्य रचनाओं की तरह इसमें भी पहले उन कष्टों का उल्लेख है जो रास्ते की विषमताओं और भीषणताओं के फलस्वरूप भोगने पड़े। इस पुनरुक्ति ने यद्यपि प्रभावोत्पादकता को आघात लगाया है, लेकिन भोगी हुई यातनाओं की स्मृति आमरण साथ रहती है।

संवादों की सहजता, निष्कपटता एवं संक्षिप्तता ने यत्र-तत्र उस्मानी के नाट्य शैली कौशल को भली प्रकार दर्शा दिया है। कम और सार्थक बात करना स्टालिन का स्वभाव था, लेकिन उसमें निहित अनुभव और अध्ययन की गहराई सामने वाले व्यक्ति पर एक अमिट प्रभाव पैदा करती थी। स्टालिन प्रायः उस नायक की भूमिका अदा करता दिखाई देता है जो प्रहारक की सारी क्षमता को चुकता कर उस पर आखिर में अपना मरणांतक आघात करता है।

उस्मानी ने स्टालिन को खूब ग़ौर से देखा, सुना और स्पष्टता के साथ बातचीत की थी। इसीलिए वे स्टालिन की वेशभूषा, कार्यालय में कार्यरत शांत और सुस्थिर शीर्ष व्यक्ति की भंगिमाओं तथा सभा-स्थल पर आलोचकों के कटाक्षों का धैर्य के साथ नोट लेते हुए की गंभीरता और फिर 'बायां हाथ पीछे किए हुए और दायां हाथ सीने पर रखे हुए' अपने पर प्रहार करने वालों की व्यंग्योक्तियों को तर्कपूर्ण प्रत्याक्रामक उदाहरणों से काटते हुए वक्ता की विविध प्रकार की मुद्राओं को अंकित करने में सफल हो सके।

उस्मानी के लिए इस निबंध को लिखना एक अनिवार्यता बन चुकी थी। उनके खुद के जीवन की घटनाएँ ही ऐसी थीं कि जिन्होंने पत्रकारों, साथियों, दोस्तों और अन्य अनेक नेताओं में एक जिज्ञासा पैदा कर दी थी 'क्या तुमने स्टालिन को देखा, क्या तुम उससे मिले, तुम्हारी स्टालिन से क्या बातचीत हुई? उस समय उस्मानी ही एकमात्र ऐसे प्रामाणिक व्यक्ति थे जो स्टालिन के विषय में अधिकारपूर्ण शब्दों में कुछ कह सकते थे। यही कारण था कि उस्मानी को इन उपर्युक्त मुलाकातों का सटीक वर्णन करके सबके प्रश्नों को उत्तरित करना पड़ा। स्टालिन जीते जी और मरने के बाद आज तक और इससे आगे पता नहीं कब तक विश्वपटल पर चर्चित होते रहे या होते रहेंगे। स्टालिन बहुत से बहुत बढ़िया मानवीय कार्य कर गए—वीरता

और बुद्धिमत्तापूर्ण और बाद के चंद वर्षों में 'पूजित' की श्रेणी में पहुँच कर 'साधारणत्व' को तिलांजलि दे गए।

उस्मानी का यह लेख पुस्तिका के शीर्षक के अनुरूप है अत: इसकी अपनी सीमाएँ हैं। इसे स्तालिन को संपूर्णता से समेट सकने वाले विश्लेषण के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए। यह अपने आप में पूर्ण और महत्त्वपूर्ण है।

Nutritive Values of Fruits, Vegetables-Nuts and Food Cures—By Shaukat Usmani, Published by Shaukat Usmani, Y.M.C.A. Wood House Road, Bombay and printed by Dhirubhai K. Desai at States' People Press, Janambhoomi Bhavan, Fort, Bombay-1/ Ist Edition 1962, Sole Distributors : Current Book House, Maruti Lane, Raghunath Dadaji Street, Bombay. (1) Pages 192, Price Rs. 6/50 in India, Abroad Sh 12/6.

Dedicated : To the Memory of Hakim Ajmal Khan, a valient fighter for freedom and well known national physician.

About this Book – (on the cover flap I)

Dr. Sampurnanand (Lucknow)–'It is my opinion that the book should prove useful.'

Jogesh Chandra Chatterjee (M.P. New Delhi)–'I hope our conutrymen will derive much benefit out of the contents of this book, therefore I want its wide circulation.'

Sri Prakasa (Governor of Maharashtra)–'It is an important subject which we in India have grossly neglected, and it would be good to get proper directive in the matter so that we might be able to eat food which will be both health giving and within our means.'

Prof. O.P. Molchanove (the Institute of Nutrition)–The Academy of Medical Sciences, Moscow:–'Your book is rather original and interesting, as it contains the detailed medicinal characteristics of different Fruits and Vegetables on the one hand, and of different diseases on the other.'

About the author (on the cover Flap II)

Shaukat Usmani was born on 21/12/1901 in Bikaner, was educated at Dungar Memorial College, Bikaner and left home for Afghanistan and the Soviet Union during 1920 Movement.

Coming back to India he was involved in political cases like the

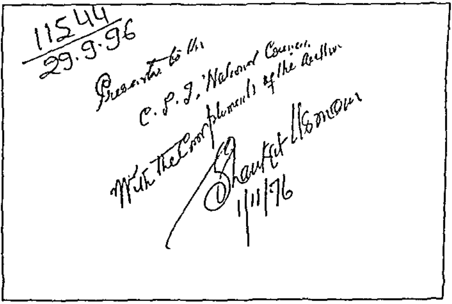
Cawnpore conspiracy case, Meerut conspiracy case and World War II detention. He was passed altogether 15 years of prison life, as (1) 9-5-1923 to 26-8-1927. (2) 20-3-1929 to 1-7-1935 and finally (3) 14-7-1940 to 8-1-1945. While the Meerut conspiracy case was in the court, he was twice selected as workers' candidate for the British Parliament; once against Sir John Simon.

Was the editor of "Payam-e-Mazdoor" and has written many books in Urdu and English, the most known are: Peshawar to Moscow, Anmole Kahanian and the Animal Conference.

Has travelled widely in Asia and Europe. Spent 6 years in U.K. carrying on various researches. As a journalist and contributes off and on.

Fought for the great October Revolution.

• • • •



शौकत उस्मानी के हस्ताक्षर

'Nutritive Values of Fruits, Vegetables & Nuts and Foods Cures'—शौकत उस्मानी की एक अप्रत्याशित रचना होते हुए भी इस अर्थ में स्वाभाविक लगती है कि वे तब तक अपनी अर्द्धशताब्दी की आयु पार कर चुके थे। इसकी एक विशेषता यह भी रही कि लेखक स्वयं ही इसके प्रकाशक भी हैं और इसका

प्रकाशन वर्ष 1962 भारत-चीन सैनिक टकराहट का सबसे उलझन भरा समय रहा है जिसमें उन्हें स्वयं भी जीना पड़ा है। उधर सी.पी.आई. के अन्तर्विरोध पार्टी-विभाजन की ओर तेज़ी से बढ़ रहे थे।

पृष्ठभूमि में उस्मानी इस चिकित्सकीय अवधारणा को दोहराते हैं कि मनुष्य में अथवा जीवन प्रणाली में बीमारी हमेशा तब पैदा होती है जब उसमें बाहरी पदार्थ इकट्ठा हो जाता है। एक उपाय तो यह होता है कि इस बाहरी पदार्थ को शरीर में घुसने और इकट्ठा होने ही न दिया जाय अथवा उसे प्रतिकूल प्रभाव पैदा करने से पूर्व ही शीघ्रतिशीघ्र बाहर निकाल दिया जाय। प्राक्कथन में प्रस्तुत रचना के प्रेरणास्रोत के विषय में बताया गया है कि लेखक को सन् 1946 में बादाम खरीदते समय किसी पुस्तक का फटा पुर्जा देखने को मिला जिसकी शीर्ष रेखा थी 'भोजन चिकित्साएँ।' दूसरे दिन उसी ठेले वाले से उसके और पन्नों के बारे में पूछा, लेकिन नहीं मिला। फिर उस पुस्तक को अनेक पुस्तकालयों में ढूंढा, किन्तु कहीं नहीं मिली। तब से लेखक इस विषय के अनुसंधान में लग गया और इसके परिणाम-स्वरूप यह रचना उस्मानी की षष्ठीपूर्ति के पश्चात् उन्हीं के द्वारा प्रकाशित की जा सकी।

एक कारण यह भी बताया गया कि 'भोजन चिकित्सा' के अधिकृत विद्वानों, जैसे यू.एस.ए. के स्व. डॉ. सी.एस.कार, एम.डी., कलकत्ता विश्वविद्यालय के फेलो स्व. प्रो. चुन्नीलाल बोस, मध्ययुग के बड़े शोधक डॉ. विलियम टी. फेर्नी, एम.डी., विलियम कोल्स और फ्लोरेंस डेनियल, द्वारा रचित भारी-भरकम ग्रंथों का अध्ययन कर सकना सर्वसाधारण की पहुँच में नहीं होता, अत: इस उपयोगी विषय को सरल भाषा में समझाकर सर्वसुलभ कराने के कर्त्तव्य का निर्वाह किया गया है।

सुविधा के अनुसार इन भोज्य पदार्थों का विभाजन फल-सब्जियाँ, मेवे, मसाले, जड़ी-बूटियाँ और इनसे बने हुए विविध रस अथवा सारतत्व आदि के रूप में किया गया है। चिकित्सा में दो प्रकार की प्रणालियाँ होती हैं जिन्हें रोधात्मक (Preventive) एवं समाघातिक (Combative) के शीर्षकों में रखना बेहतर होता है। चिकित्सा विज्ञान की अनेक दकियानूसी धाराएँ दमनात्मक विधि पर निर्भर भी करती हैं और उसे अपनाने की पूरी वकालत भी करती हैं, जबकि प्रगतिशील अवधारणा सारा ज़ोर प्रतिरोधात्मक पद्धति पर देती है। यहाँ इस प्रकार बहस में न पड़कर बीमारियों को आने से रोकने के उपायों को मुद्दा बनाया जा रहा है।

विविध फलों के स्वास्थ्यपरक मूल्यों, तत्त्वों और सही तरीके से उनके उपयोग को बताते हुए यह सिद्ध किया गया है कि वे शरीर में किन कमियों की पूर्ति करते हैं और किन रोगों को रोकने में उपयोगी हो सकते हैं। फलों में सेव, खूबानी, केला, काली अंची, किशमिश, खजूर, बड़ा बेर, अंजीर, गूजबेर, सतालू, अंगूर, चकोतरा, नींबू, आम, शहतूत, नारंगी, नाशपती, अनन्नास, आलू बुखारा, अनार, सूखा आलूचा, रसभरी और हिसालू प्रमुख हैं।

फल भूख को पैदा करने वाले तो होते ही हैं, पाचन क्रिया में सहायक भी

होते हैं। वे शरीर को रोगों से बचाते हैं, उसे स्वस्थ रखते हैं और साथ ही सुन्दरता भी बढ़ाते हैं। वे एसिडिटी को नियंत्रित करते हैं। कच्चे फल और कच्ची सब्जियाँ एन्टीसैप्टिक होते हैं।

फलों के उपयोग में लाने से पहले यह अत्यंत आवश्यक है कि उन्हें बहुत अच्छी तरह धो लिया जाय, क्योंकि उनके किसी कोने में लगी रेत अथवा चिपका हुआ अन्य कोई पदार्थ अस्वास्थ्यकर हो सकते हैं जो इनकी रोधात्मक क्षमता को कम कर सकते हैं।

सब्जियों में भी अनेक शारीरिक और स्नायविक बीमारियों को रोकने के तत्त्व होते हैं। बहुत से लोगों को मालूम नहीं कि अपच, अनिद्रा, गुर्दे की तकलीफ, निष्क्रिय यकृत, टी.बी., स्कर्वी, कैंसर, सर्दी, खांसी, स्नायविक खराबी तथा कई अन्य रोगों में वे बचावी कारण सिद्ध होती हैं। सब्जियों में सेम और मटर, चुकन्दर, *बंदगोभी, पहाड़ी मिर्च, गाजर, अजमोदा, चंसुर, लहसुन, कद्दू, करेला, मोठ, गंदना,* सलाद, पुदीना, खुमी, राई, अजमोद, खसखस, आलू, मूली, रेवतचीनी, सेज, पालक, अजवायन, टमाटर और शलजम को सम्मिलित किया गया है और इनके खाद्य तत्त्वों और गुणों को दर्शाते हुए इनकी प्रतिरोधी विशेषताओं का उल्लेख किया गया है।

काष्ठफलों की दो श्रेणियां होती हैं :–जलपूर्ण और सूखे फल जिनकी तीन उपश्रेणियां हो सकती हैं, जैसे–(a) चेस्टनट, नारियल (b) बादाम, कड़वा बादाम, ब्राज़ील काष्ठफल, पहाड़ी बादाम, पिस्ता और (c) मटर बादाम, देवदार फल आदि। ये सब प्राकृतिक चिकित्सा में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भोजन की पाचन क्रिया के लिए मसालों, चटनी या मुरब्बे आदि का संतुलित उपयोग भी बहुत फायदेमंद होता है। इनमें हींग, जयपत्र और बेरी, जीरा, इलायची, *दालचीनी, मिर्च, लौंग (सामान्य उपयोग फायदेमन्द ज़रूरत से अधिक उपयोग अनुचित),* धनिया के बीज, सफेद जीरा के बीज, जायफल, काली मिर्च, हल्दी और पीपरामूल इनमें कई एंटीसैप्टिक हैं।

इसके बाद मजेदार प्रसंग आता है जड़ी-बूटियों और अन्य अनेक प्रकार के मसालों का। मनुष्य की तरह या उससे भी ज्यादा जड़ी-बूटियों का व्यावहारिक ज्ञान जानवरों को होता है। जैसे बंदर को यदि सांप या अन्य कोई काट लेता है तो उसका छोटा बच्चा भी किसी जड़ी-बूटी का प्रयोग कर लेता है। दांत का दर्द होने पर मनुष्य किसी दवाईवाले की तरफ भागता है और उससे टिंक्चर कार्डामॉक्स खरीदता है लेकिन वह इलायची, दालचीनी, लहसुन या हींग जैसी प्राकृतिक जड़ी-बूटी की ओर तवज्जोह नहीं देता जो अधिक असरदार होती है।

इस पुस्तक का मूल उद्देश्य जड़ी-बूटियों और अन्य प्राकृतिक उत्पादों के रहस्यों का उद्घाटन करना है। इनमें सौंफ, सौंफ्सन या शण, खुरासानी अजवायन के लक्षणों और गुणों की छानबीन की गई है। अनाजों के अन्तर्गत जौ, मक्का, जई या जुई, चावल, गेहूँ, सार या अर्क के अन्तर्गत तेल, खोपरे का तेल, राई का तेल और

जैतून का तेल; विविध में चॉकलेट, कॉफी, शहद एवं मूंग तथा मसूर, दूध और दुग्ध उत्पादों में मक्खन, पनीर, मलाई, दही तथा दूध मिश्रण से बनाई जाने वाली चीजों में केसर, इमली, चाय को सम्मिलित किया गया है। सबके सदुपयोग के महत्त्वपूर्ण परिणाम बताए गए हैं और दुरुपयोग से आगाह भी किया गया है।

पुस्तक के अंतिम तीन अध्यायों में 'स्वास्थ्यरक्षण' 'कैंसर और दाह चिकित्सा' तथा 'स्वास्थ्य के लिए क्या खाया जाना चाहिए' के शीर्षकों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी गई हैं।

भारतीय कहावत है 'स्वास्थ्य ही धन है, 'दुनिया के हर कोने से आवाज आती है 'स्वास्थ्य एक महान् वरदान है' और ईरानी कहते हैं–'तन्दुरुस्ती हज़ार नियामत है।' ये सब सही हैं लेकिन हमें स्वास्थ्यरक्षण के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलुओं को भली प्रकार जान लेना चाहिए।

बाह्य विषों के प्रवेश और उनके शरीरान्तर्गत घनीभूत होने देने से बचाव के लिए (1) सकारात्मक विचार, (2) प्राकृतिक वातावरण में गहरे सांस लेने की आदत बनाना, (3) सलाद का नियमित उपयोग, (4) अति भोजन से परहेज, (5) अधिकाधिक शुद्ध हवा में रहना और (6) अत्यधिक थकान से भी बचना आदि उपायों का अपनाना जरूरी है।

कुछ बीमारियों की सूची उनसे बचाव के उपाय सहित दी गई है जिसमें अम्लरक्तता, अम्लीय अजीर्ण, आयु अवधि, शीतज्वर, रक्ताल्पता, अस्थमा, कमर का दर्द, पेट का दर्द, रक्तचाप, रक्तशोधन, आंत रोग, मस्तिष्क रोग, ब्रोंकाइटिस, कैंसर, कारबंकल, नजला, मोतिया-बिन्द, शीतशोथ, छाती के दर्द, हैजा, सर्दी, जुकाम, उदरशूल, कब्ज, क्षयरोग, ऐंठन, घट्टा, मरोड़े, कमजोरी, मधुमेह, दस्त, डिपृथीरिया, अपच, कान के दर्द, दाद, हाथीपांव, मिरगी, नेत्ररोग मूर्च्छा, स्वास्थ्य के लिए उपवास, थकान, मोटापा कम करना, भय, बुखार, बादी या उदर वायु, दुर्गन्धयुक्त सांस, चकत्ते, हृदयरोग, हिचकी, स्वरभंग, हिस्टीरिया, इंफ्लुएंजा, बच्चों का उन्माद, आंतों के रोग, [illegible], पीलिया, किडनी और पेट के रोग, मृदु विरेचक भोजन या कब्ज प्रतिरोध, [illegible], लीवर, चर्मयक्ष्मा, मलेरिया, खसरा, स्मृति, मासूस, औरतों के [illegible], [illegible], स्नायुरोग, गर्दनरोग, तंत्रिकार्ति, नाक से खून बहना, अधिक भोजन, [illegible], [illegible], गठिया, सूखारोग, साइटिका, स्कर्वी, निद्राभंग, प्राणहीनता, [illegible], तिल्ली, [illegible], टेपवर्म, दांतदर्द, पायरिया, मूत्र रोग, यौन रोग, उल्टी, [illegible], [illegible] आदि सम्मिलित हैं।

कैंसर और क्षय मशीनीयुग की [illegible] में लोगों को [illegible] विवश कर दिए जाने की वजह से तेजी से फैल रहे हैं। [illegible] वातावरण देने में असमर्थ साबित हुई है [illegible] मनोवृत्ति और व्यवस्था का है। [illegible] के लिए (1) [illegible] को कभी बढ़ने न दिया जाए, (2) [illegible]

जाय और (3) सही खाद्य पदार्थ प्राप्त करके उनका सदुपयोग किया जाय। कीटाणु मारने के लिए गाजर, नींबू, लहसुन, दालचीनी, केसर और इलाइची आदि उपयोगी होते हैं। कैंसर के रोगियों को गर्म भोजन नही करना चाहिए। ताजा सब्जियों और फलों के रस का सेवन करना चाहिए और नमक मांस अथवा मांस पर आधारित खाद्य से परहेज करना चाहिए।

अंतिम अध्याय में बताया गया है कि नाश्ते में दूध, पनीर, अंडे और चाय अथवा काफ़ी ले सकते हैं, दोपहर के भोजन में सब्जियों के शोरवे, रोटी और कुछ मिष्टान्न आदि। भोजन से पहले फलों का सेवन करें। रात के भोजन में गाजर, बंदगोभी और फूलगोभी लेना गठिया को रोकने के लिए फायदेमंद है और सलाद अवश्य लें। कभी-कभी शहद भी नाश्ते के समय लें।

शौकत उस्मानी द्वारा रचित और प्रकाशित यह कृति 'Nutritive Values' विषय और प्रकाशन दोनों दृष्टियों से लीक से हटकर है। जिस व्यक्ति ने अपने जीवन को स्वतंत्रता संघर्ष में समर्पित कर दिया हो, उसने अपने स्वास्थ्य की कब पर्वाह की। दूसरे वे स्वयं इस पुस्तक के अलावा अपनी किसी भी रचना के प्रकाशक नहीं बने। क्या आयु का बढना और मौकापरस्तों द्वारा क्रांतिकारियो को पीछे धकेल दिए जाने से उत्पन्न हताशा का होना ही उनके इस कल्याणकारी मोड को संभव बना सका? क्या आजाद देश की तत्कालीन बिगड़ी दशा पर वे और कोई व्यंग्य बाण नहीं चला सकते थे?

उस्मानी ने अपने आपको यहाँ एक 'अनुसंधानकर्त्ता' के रूप में अभिव्यक्त किया है और पुस्तक को ऐसे व्यक्ति को समर्पित किया है जो सुप्रसिद्ध चिकित्सक भी थे और एक बहादुर स्वतंत्रता सेनानी भी। इस प्रकार इस शोधकर्त्ता ने 'समर्पण' के माध्यम से अपनी मूल भावना का परिचय दे दिया।

इस शोध के लिए जो अथक परिश्रम किया गया वह विरल है। इतने विशाल विषय को अत्यंत सरल भाषा में समेट पाना उस्मानी की गहन तत्वज्ञता के बलबूते की बात थी। इसके लिए रात-दिन एक करके इस विषय के विश्वसाहित्य में डुबकी लगाना और फिर व्यवहारगत प्रयोगजन्य अनुभवों के साथ उनका समन्वय बैठा पाना किसी अटूट लगन की ओर लक्षित करता है। दशों दिशाओं के फल, सब्जियाँ, मेवे, मसाले और जड़ीबूटियों के लक्षण, गुण और उनके सदुपयोग से होने वाले विविध रोगों के बचाव को बहुत ही सटीक, अपितु सार रूप में पेश किया गया है कि सामान्य से सामान्य पाठक भी इससे प्रचुर लाभ प्राप्त कर सकता है। यहाँ तुलसीदास की इस उक्ति का स्मरण हो आता है कि 'अरथ अमित अरु आखर थोरे।'

शौकत उस्मानी की यह रचना आगे की अनेक पीढ़ियों तक के लिए उपयोगी साबित होगी, क्योंकि यह दीर्घकालजीवी है। आज पर्यावरण प्रदूषण ने आम आदमी को स्वास्थ्य प्रदूषण में धकेल कर उसे जल्दी मरने का माहौल दे दिया है, इसलिए

भी ऐसी पुस्तक की प्रासंगिकता तो सिद्ध होती ही है, अपितु इसकी अपनी आवश्यकता को भी विस्तार प्राप्त होता है।

यह एक क्रांतिकारी की उस आंकाक्षा का प्रतीक है जो चाहता है कि राजनीतिक और सामाजिक बुराइयों और मूलतः शोषण उत्पीड़न की व्यवस्था के फलस्वरूप उत्पन्न विकृतियों, विषमताओं और विनाशकर्त्ताओ के विरुद्ध अनवरत संघर्षशील इंसान तन और मन से स्वस्थ रहें ताकि अंततः वे इसमें अपनी कामयाबी की मंजिल पा सकें। इसे हम क्रांतिकारी की सौगात भी कह सकते हैं और आशीर्वाद भी।

लोकोक्तियो और मुहावरों से जुड़ी हुई भाषा की सुघड़ता जगह-जगह विषय को रोचकता प्रदान करती जाती है। इधर इसे संदर्भ ग्रंथ के रूप में भी आसानी से उपयोग में लाया जा सकता है। वर्णक्रमानुसार सूची-बद्धता पुस्तक की तर्क-संगति को प्रमाणित कर देती है। यह उस्मानी के वैज्ञानिक दृष्टिकोण की परिणति भी है।

अपनी अन्तर्वस्तु की यह बहुमूल्य धरोहर है।

· Historic Trips of a Revolutionary: (Sojourn in the Soviet Union Shaukat Usmani, Published by S.K. Ghai, Managing Director Sterling Publishers Private Limited, AB/9, Safdarjang Enclave, New Delhi-110016, Printed at Sterling Printers, L-II Green Park Extn;, New Delhi, 110016, Page-148, Price Rs.10/= Cover Back-Introduction of the book and the author.

प्राक्कथन (नई दिल्ली-1 दिसम्बर, 1976 ई.)—सन् 1917 की महान् अक्टूबर क्रांति का गहरा प्रभाव दुनिया के लगभग सभी पराधीन उपनिवेशों के स्वंतत्रता संग्रामों और उनकी नियति पर पड़ा। मजदूर किसानों की सेना की शानदार ऐतिहासिक विजयों से रोमांचित होकर शौकत उस्मानी ने मई 1920 में घर छोड़ा और सोवियत भूमि में प्रवेश किया। वहाँ लालसेना में सम्मिलित होकर तुर्कमेनिया में केरकी के अमूदरिया मोर्चे पर प्रतिक्रांतिकारियों के विरुद्ध क्रांति की रक्षा में भाग लिया। सोवियत संघ में ही मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शिक्षा ग्रहण की। तब से सोवियत संघ उस्मानी का प्रेरणास्रोत रहा। इसी वजह से विभिन्न कालावधि में (1) पेशावर से मॉस्को, (2) कराची से मॉस्को और फिर (3) देहली से मॉस्को की तीन यात्राएँ कीं। प्रस्तुत पुस्तक में इन तीनों ऐतिहासिक यात्राओं के वर्णन को समेकित किया गया है।

पेशावर से मॉस्को-(पहली यात्रा) भारत में सन् 1920 की हिजरत-लहर ने पंजाब के असंतुष्ट भूमिहीन किसानों और छोटे दुकानदारों को तो देश की आज़ादी के लिए सुदूर विदेश जाने को प्रेरित किया ही, साथ ही बुद्धिजीवियों को भी उपनिवेशवादी गुलामी से मुक्त होने के लिए संकल्पबद्धता के साथ लंबी यात्रा के लिए तैयार कर दिया। राष्ट्रीय आन्दोलन के मध्यमवर्ग में बहुत से व्यक्ति वामपक्षी विचारधारा के थे जिन्हें संघर्ष का अहिंसात्मक स्वरूप मान्य नहीं था और वे हथियार और हथियारों का प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहते थे। 'हिजरत' ने उन्हें प्रवास करने का

कर दिया और इधर ख़िलाफत आन्दोलन के दोहरे (धार्मिक/राष्ट्रीय) चरित्र ने भी एक नया मोड़ ले लिया था। इस प्रकार 36000 से अधिक लोग अफगानिस्तान की ओर उमड़ पड़े। पहले काफिलों में 20 से 30 प्रति काफिला गए तो बाद में काफिले की संख्या बढ गई। इन काफिलों के वामपंथी रुझानवालों का इरादा था कि सोवियत संघ से हथियार प्राप्त किए जाएँ और उन्हें लेकर और वहाँ से और अफ़गानिस्तान से भी सैन्य सहयोग लेकर भारत के स्वतंत्रता संग्राम को सशस्त्रक्रांति का रूप दे दिया जाय। ऐसे ही साहसी क्रांतिकारी नौजवानों में शौकत उस्मानी अग्रिम पंक्ति में थे।

तोर खान पर भारतीय सीमा पार करने पर अफ़गान सिपाहियों ने काफिले का स्वागत किया। पेशावर से सीमा पार का पहला महत्वपूर्ण शहर जलालाबाद था। वहाँ से टर्की पासपोर्ट के लिए जबल-उस-सिराज के लिए रवाना हुए और 40 मील की पैदल यात्रा करके चौथे दिन-वहाँ पहुँचे। कुछ क्षेत्र में बसा हुआ यह पाँच सौ परिवारों का छोटा गाँव है। इसे तीन तरफ से पहाड़ियों ने घेर रखा है और चौथी तरफ फैला हुआ प्राकृतिक हरा-भरा विशाल मैदान है। जलवायु बहुत स्वास्थ्यप्रद है।

यहाँ काफ़िले ने प्रवासी समिति का गठन किया और उसकी कार्यकारिणी के पदाधिकारियों और एक अध्यक्ष का चुनाव किया। मौहम्मद अकबर खां कुरेशी को अध्यक्ष बनाया गया। काफिले में कुछ सैनिक भी थे जिनसे सैनिक प्रशिक्षण चालू किया। बजाय पासपार्ट देने के वहाँ से काफिले को आदेश देकर निर्वासित कर दिया गया क्योंकि अफगान सरकार और ब्रिटेन में संधिवार्ता चल रही थी।

काफिले के हरेक व्यक्ति ने प्रवासी समिति को 5 अफगानी रुपए जमा कराए और कंधे पर नकली राइफलें लेकर सब लोग चल पड़े। कुछ घंटों की यात्रा करके काफिले गुलबहार नामक गाँव पहुँचे।

ऊबड़-खाबड़, पहाड़ियाँ, विस्तृत घाटियाँ, तेज प्रवाह वाली बर्फ-सी ठंडी नदियाँ और कष्टप्रद रेगिस्तान के दुर्गम अफगानी हिस्से, मुँह बाये सांपों के समान दर्रे और गुफाएँ और ढलान में जाने वाले तंग पहाड़ी मार्ग, किसी का एकाकी गुजरना असंभव हो—आदि का सामना करना था।

12 मीलों की पहाड़ी चढ़ाई के बाद काफिला नीचे उतरा और बर्फ के समान ठंडे पानी की पंजशीर नदी के किनारे पहुँचे। इस नदी के दोनों तरफ बड़े-बड़े पहाड़ थे जैसे दो झुके हुए दैत्य हाथ मिला रहे हों। इस विकट नदी को पार करना मौत का ख़तरा मोल लेना था। गाइडों ने आगे चलने से मना कर दिया। लेकिन काफिले ने निश्चय किया कि अब पीछे हटना कायरता होगी।

काफिले के अनेक लोगों के सिर पर पगड़ी थी उन्होंने पगड़ियों को उतारा और खोलकर एक दूसरे की कमर में बाँधकर एक लंबी जीवनपंक्ति बना दी। बड़ा कठिन संघर्ष था। अत्यंत ठंडा पानी और बहाव इतना तेज कि टिक पाना मुश्किल।

प्राय: ऐसा लगा कि नदी अपने साथ बहा ले जायगी। किन्तु बड़ी सावधानी और मशक्कत के बाद वे नदी पार करने में सफल हुए और सूखे में पहुँच कर अपने कपड़े सुखाए।

दूसरे दिन कारवां सराय से रवाना होकर कई मीलों तक चलने के बाद काफिला गंजू पहुँचा। यह बहुत सुंदर स्थान था। सफेद पहाड़ियों से बहते हुए झरने का कलकल संगीत सुनाई देता था। रात को लोग वहाँ सोए ही थे कि आधी रात होने से पहले ही काफिले के पहरेदारों ने सीटी बजाकर खतरे की चेतावनी दे डाली। अब एक ओर सुंदरता थी तो दूसरी ओर आतंकपूर्ण भयानकता। सारे लोग खडे हो गए और अपने नकली हथियार साधे आशंकित हमले का इंतजार करने लगे। वे एक साथ चिल्लाए कि वे हथियारबंद हैं किन्तु हमला करने की पहल इसलिए नहीं करेंगे कि वे यहाँ अफगानियों के मेहमान हैं। यह चालाकी सफल हो गई और खतरा टल गया।

काफिला बाबरी गुंबज को पहुँचा और रात भर वहीं विश्राम किया। अगले दिन फिर कष्टप्रद यात्रा शुरू हुई। देहसालान, हैबाक और घोर और अन्य स्थानों से गुजरते हुए सहारा के विस्तृत रेगिस्तान में प्रवेश किया। यहाँ से गुजरते हुए लोग थकान के मारे चूर-चूर हो गए। फिर मजार-ए-शरीफ होते हुए, भीषण गर्मी झेलते हुए रातों को चलने का क्रम जारी रहा, बाल्ख के खंडहरों को पार करके वे पाटकेसर पहुँचे जो अमूदरिया के किनारे बसा है।

सोवियत संघ के तिर्मिज़ में पहुँचने पर काफिले का अभूतपूर्व स्वागत किया गया। 'भारतीय क्रांति जिन्दाबाद' और 'विश्वक्रांति जिन्दाबाद' के गगनभेदी नारे गूंजने लगे। मानवता का विशाल सागर उमड़ पड़ा। रूसी, तुर्कमानी, उज़बेक और ताज़िकों ने रास्ते को पंक्तिबद्ध कर दिया था। सैनिक बैंड 'इंटरनेशनल' बजा रहा था और चारों तरफ लालझंडे दिखाई दे रहे थे। मुहाजिरीनों की शोभायात्रा देखते ही बनती थी। यह कंबलवाले फ़कीरों का जुलूस लग रहा था। जिंदगी में पहली बार ये उस प्रदेश को देख रहे थे जिसमें एशिया और यूरोप के लोग इतने घुल-मिल कर रह रहे थे। कम्युनिस्ट कमीटी के नेता और साधारण सदस्यों में कोई अंतर नहीं था। हरेक हर प्रकार का काम कर रहा था, हर प्रकार का कष्ट उठा रहा था। उन्हें क्रांति की रक्षा और देश का निर्माण दोनों एक साथ करना था।

किंतु इस काफिले के अन्य लोगों के एक समूह ने तिर्मिज़ से आगे बढ़ने की जल्दबाजी की और नावें किनारे करके ज्यों ही आगे चले, प्रतिक्रांतिकारियों के जाल में फंस गये। नाव में बोखारा के अमीर के दलाल घुस गए और उनके इशारे पर नावों को गलत दिशा में मोड़ दिया गया।

नावें उतार कर काफिले को कतार में खड़ा कर दिया गया और कुन्दों पीटने लगे। क्रूरता से पीट लेने के बाद इन लोगों को गुलामों की तरह ... दौड़ाया गया। इन्हें बाँध दिया गया और घुड़सवार इन्हें घसीटके ... दौड़ाए

रहे थे। न पीने को पानी और न कोई सहारा। कई बेहोश हो गए थे और कई अधमरे। ये दूसरे जिन्दा साथियों के लिए भी बोझ बन गए। कोड़ों की मार से लोगों को हांका जा रहा था। कंधों पर बेहोश साथी थे। दो साथी एक को आगे-पीछे उठाए चल रहे थे। घोड़ों और गधों के खुरों की धूल मुँह, आँख और नाक में घुस रही थी। उनके लिए एक दूसरे को पहचान सकना मुश्किल हो गया था। रेत फेफड़ों में भर चुकी थी। पता नहीं कितने मील घिसटने की यह दर्दनाक यात्रा थी। आखिर कारवां सराय में जाकर रुके। भूख और प्यासा से टूटे हुए सोते समय जंजीर बांधे पांव को हिलाया नहीं जा सकता था। कारवां सराय में 'काफ़िर' कह कर बच्चों ने पत्थर मारने शुरू किए। इन्हें पशुशाला में बंद कर दिया गया। फिर एक हल्ला हुआ तो उन्हें पास के 'कस्टम्स हाउस' में बंद कर दिया गया जो कलकत्ते की 'ब्लैकहोल' की कल्पना से भी अधिक भयावह था। एक छोटा सा कमरा था। उसमें फंसा कर ताला बंद कर दिया गया था। हवा आने की कोई गुंजाइश नहीं थी। न कहीं पानी था। कैदियों के चेहरे पीले पड गए और शरीर शक्तिहीन हो गये थे। मुस्लिम नमाज के समय उन्हें ऐसे स्थान पर लाया गया जहाँ पशुओं और मनुष्यों की हड्डियाँ बिखरी पड़ी थीं। उन्हें लगा कि अब उन्हें वहीं पर कत्ल कर दिया जायगा।

कत्ल करने के लिए तीन बार आदेश को दोहराने का रिवाज था। सब मौत का इंतजार करने लगे थे। बुजुर्गों ने पहला आदेश दिया। सबके पीछे बंदूकधारी खड़े थे। हिलने-डुलने का सवाल ही नहीं था। कुछ मिनटों के बाद दूसरा हुकम हुआ जिसने पहले की पुष्टि की। कैदियों के सिर झुके हुए थे। अब आखिरी हुकम आने ही वाला था और वे श्मशान घाट पहुँचने ही वाले थे। उन्हें और कोई आशा नहीं थी सिवा इस एहसास के कि वे आजादी की तलाश में कुर्बान होने को है।

आखिरी हुकुम से कुछ क्षण पहले एकाएक धमाका हुआ। क्रांतिकारियों के हमले की आंशका से मौत का हुकुम 'गुलाम बनाकर' रखने में बदल गया और गुलामों का बंटवारा होने लगा और मालिक उन्हें जंजीरों में बांध-बांध कर अपने घर ले गए। वहाँ रात-दिन उनसे काम लिया जाने लगा, अधभूखा-अधप्यासा रखकर जीते रहने को मजबूर किया जाने लगा।

दो सप्ताहों तक जानलेवा गुलामी भोगी कि एक रात को आग उगलते बम आ गिरे और सुबह होते ही मुल्ला आया और 'आजाद!' कहकर जंजीरें खोल दीं और बाहर निकाल दिया। इसी तरह दूसरे साथी भी छूटकर आ गए। यह इसलिए हुआ कि मुल्लाओं को सपरिवार भागने की जल्दी थी और गुलामों पर भी उनका भरोसा नहीं था या उनसे खिलाने का बोझ नहीं उठा पा रहे थे। जो भी हो क्रांतिकारियों के आक्रमण ने हमारी जान बचा दी।

सतावन साथियों का काफ़िला चला और शीघ्र ही केरकी पहुँचा जहाँ उनका संपर्क रूसी क्रांतिकारियों के साथ हुआ। इनको उन्होंने अच्छा खिलाया-पिलाया और भूमिगत मार्ग पर प्रवेश करा दिया। लेकिन इसी दौरान काफ़िले के दो दलों

में आगे बढ़ने या पीछे लौटने को लेकर दरार पड़ गई।

जब केरकी को प्रतिक्रांतिकारियों ने घेर लिया, तो मुहाजिरिनों के काफ़िले के 36 साथियों ने उनके खिलाफ हथियार उठाने का निर्णय लिया। क्रांतिकारी कमेटी ने इसकी स्वीकृति दे दी। उन्हें नदी का मोर्चा सौंपा गया। उन्हें राइफलें और रिवॉल्वर दिए गए। उन्होंने 18-18 के दो दल बनाए। इन्होंने रात-दिन एक करके केरकी की सुरक्षा की और गोलियों के आदान-प्रदान के दौरान अनेक प्रतिक्रांतिकारियों को पकड़ लिया और उनसे बहुमूल्य जानकारी के दस्तावेज बरामद करके अधिकारियों के हवाले किए। इस पर उनके लिए 'केरकी के रखवाले जिन्दाबाद' और 'भारतीय क्रांतिकारी जिन्दाबाद' के नारे लगाए गए और उनका अभिनंदन किया गया। इस सारे अभियान में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका शौकत उस्मानी की थी जो अपनी जान की परवाह किए बिना एक भयंकर प्रतिक्रांतिकारी जासूस की घातक साजिश को पकड़ने में कामयाब हुए।

इधर से क्रांतिकारियों की लाल फौज ने दक्षिणी तुर्किस्तान पर जोरदार आक्रमण कर दिया। दोनों ओर के आक्रमण से प्रतिक्रांतिकारियों की हिम्मत टूट गई और उनकी तीन हज़ार की टुकड़ी ने हथियार डाल कर आत्मसमर्पण कर दिया। इसका एक मुख्य कारण यह भी था कि आम सैनिक सामंती जकड़न से मुक्त होना चाहता था।

एक माह तक फ्रंट पर रहने के बाद केरकी के रक्षक इन भारतीय क्रांतिकारियों का दल बोखारा पहुँचा। बोखारा काफी बदलने लगा था। शौकत उस्मानी के अनुसार पहले 'बोखारा जारशाही का उसी तरह सैटेलाइट था जैसे कि बीकानेर या जोधपुर, जयपुर या रामपुर, ग्वालियर या उदयपुर ब्रिटिश साम्राज्यशाही के सैटेलाइट थे।'

ताशकंद में आकर उन्हें इन्डिस्की दोम (इंडियन हाउस) में ठहराया गया। यहीं बोखारा हाउस में एम.एन. राय, अबनी मुखर्जी, शफीक और मौहम्मद अली और कुछ सोवियत कामरेड रह रहे थे। मौलाना अब्दुल रब, एम.पी.टी. आचार्य, अमीन सिद्दीकी और कोई फारुकी इंडियन हाउस में ही थे। यहीं पर शौकत उस्मानी और साथी आपस में इनके साथ मीटिंगें करके भारत की आजादी के विषय में विचार विमर्श करते थे। यही पर सर्वप्रथम 7 नवम्बर, 1920 को प्रवासी भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की गई थी। मौहम्मद शफ़ीक को इसका जनरल सैक्रेटरी चुना गया। शौकत उस्मानी ने लगभग छः माह तक इस पार्टी को ग्रहण नहीं किया। क्योंकि उस समय तक उन्हें मार्क्सवाद का ज्ञान नहीं था, और वे केवल भारत की आजादी के सैनिक के रूप में ही अपना लक्ष्य निर्धारित किए हुए थे। एम.एन. राय की राय मानकर उस्मानी ने पर्शियन और अंग्रेजी की किताबें क्रांतिकारी कमेटी के कार्यालय से लीं और उन्हें पढ़ा। रात-दिन गंभीर अध्ययन के बाद मार्क्सवाद समझने पर वे उसके कुशल प्रचारक बन गए। इसी दौरान पार्टी नेतृत्व में मतभेद उभरने अनेक मुद्दों पर बहस होती रहती थी।

अंदीजान पहुँचने पर उस्मानी एम.पी.टी. आचार्य से मिले जो एक अच्छे स्वभाव के क्रांतिकारी थे। उन्हें हथियारों का चार्ज सौंपा गया जिनमें हथगोले भी थे। लेकिन अंदीजान में और कुछ नहीं किया जा सका। वहाँ से उस्मानी ताशकंद चले आए। वहाँ सैनिक स्कूल में प्रशिक्षण लिया।

ताशकंद से उस्मानी मॉस्को पहुँचे। वहाँ उन्हें होटल डेल्वोई डोवर में ठहराया गया और भोजन व्यवस्था होटल डीलक्स में थी जहाँ देश-विदेश के बड़े-बड़े कम्युनिस्ट नेताओं से संपर्क हुआ। यहीं पर उनका अध्ययन स्थल था। मजदूर संगठन का प्रशिक्षण भी यहीं हुआ। यहीं पर अर्थशास्त्र और राजनीति का भी ज्ञान करवाया गया।

जब प्रिंस क्रोपाटकिन का निधन हुआ तो अनेक नेता श्रद्धांजलि अर्पित करने इकट्ठे हुए। वहाँ और बाद मे उस्मानी एक बार और लेनिन से मिले, यद्यपि उनसे बात करने का मौका नहीं मिला। हाथ मिलाकर लेनिन ने प्रतिनिधियों के बीच उस्मानी का अभिवादन किया। लेनिन की सादगी और शीर्ष आत्मीयता का उस्मानी पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।

भारतीय क्रांतिकारियों की शीर्ष बैठक में आपसी मतभेदों ने प्रखर रूप धारण कर लिया। इसका असर संगठन पर व्यापक तौर पर परिलक्षित हुआ। कॉमिन्टर्न के तीसरे महासम्मेलन के समय भारतीय तीन दलों में विभाजित हो चुके थे–राय ग्रुप, आचार्य-रब ग्रुप और दास पिल्लई ग्रुप। तत्कालीन भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के विकसित न हो सकने का यह प्रमुख कारण था। कॉमिन्टर्न में राय की असफलता ने इस खाई को और चौड़ा कर दिया। राय की सबसे बड़ी गलती नलिनी कुमार दास गुप्ता को भारत भेजना था। उस्मानी और साथियों ने राय के खिलाफ बगावत कर दी। मॉस्को विश्वविद्यालय में उस्मानी सहित सत्रह मुहाजिरीनों ने शिक्षण-प्रशिक्षण प्राप्त किया।

शौकत उस्मानी तीसरे कॉमिन्टर्न अधिवेशन के फैसले को जानने के बाद स्टालिन से मिले और वहाँ से ईरानी वेश में 22 जनवरी, 1922 को भारत लौट आए। (स्टालिन से मुलाकात का विवरण 'I Met Stalin Twice' में दिया जा चुका है।)

'पेशावर से मॉस्को' शौकत उस्मानी की प्रथम और अपने समय की सर्वाधिक चर्चित रचना रही है। इसका प्रकाशन सन् 1927 में हुआ था। पत्र-पत्रिकाओं में इस पर काफी कुछ लिखा गया। ब्रिटिश सरकार ने इसका प्रतिकूल दिशा में इस्तेमाल किया। भारत की विभिन्न धाराओं के स्वतंत्रता सेनानियों ने इस पुस्तिका से उत्साहजनक प्रेरणा ग्रहण की। काफी लोग इसकी मांग करने लगे।

क्रांतिकारी के इस यात्रा विवरण में असह्य कठिनाइयों, अवरोधों और उत्पीड़न के विरुद्ध साहस भरे संघर्ष का यथार्थ अथ च विश्वसनीय चित्रण है। यह भोगी हुई जिन्दगी की एक ऐतिहासिक दास्तान है जो काल्पनिक कहानियों की उड़ान को भी फीका साबित कर देती है। इसमें आजादी के लिए मर मिटने का संकल्प है। एक उन्नतम बलिदान की तमन्ना है। क्रांति की सुरक्षा के लिए समर्पण की ललक

है। बहादुरी की मिसाल भी है तो कौशल का उपयोग भी। हजारों भाड़े के प्रतिक्रांतिकारियों को चंद मुहाजिरीनों द्वारा भगा दिए जाने का एक अद्भुत करिश्मा है।

दूसरी ओर गहन अध्ययन की प्रक्रिया है। दुनियाभर के क्रांतिकारियों के बीच गौरव के साथ खड़े होने की क्षमता है तो गुत्थियों में से रास्ता तलाशने की जिज्ञासा भी। उस्मानी की यह पुस्तिका अपने ढंग की पहली रचना तो है ही इसका राजनैतिक विश्लेषण भी बेजोड़ है। इस संस्करण में मूल पुस्तिका का संशोधित स्वरूप प्रस्तुत किया गया है और इसके साथ दो आगे की मॉस्को यात्राओं के विवरण संयुक्त कर लेखक ने एक नई रचना का लोकापर्ण किया है।

उस्मानी ने इसमें लेनिन, स्टालिन और बहुत से देशों के प्रमुख कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों और भारत के एम.एन. राय सहित अनेक प्रवासी भारतीय कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों का जो चरित्र चित्रांकन और अपना आकलन प्रस्तुत किया है वह तत्कालीन राजनीतिक घटनाक्रमों और परिस्थितियों को सही परिप्रेक्ष्य में समझने में अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होता है। प्रकृति चित्रण में लेखक की शाब्दिक फोटोग्राफी देखते ही बनती है।

यह अवश्य है कहीं-कहीं सिलसिला आगे का पीछे और पीछे का आगे हो गया है और कहीं-कहीं अनावश्यक जोड़ भी दिखाई दे जाते हैं। किन्तु इनसे कृति की विषयवस्तु के मूल प्रवाह में विशेष अंतर नहीं आया है। यह उस्मानी की जिंदगी के पहले अहम कदम का इंकलाबी दस्तावेज है। वह भी ऐसा जिसके मुकाबले में दूसरा कोई टिक नहीं सकता।

'पेशावर से मॉस्को' शौकत उस्मानी का पर्याय और इसे विपर्यय करके भी कहा जा सकता है, यह बात इसके अंतर्य्य में भी, इसकी संरचना में भी तलाशी जा सकती है। इसे क्रांतिकारियों के इतिहास की भूमिका के रूप में ही अंकित किया जायगा।

कराची से मॉस्को (दूसरी यात्रा)—सन् 1928 के नवम्बर के तीसरे सप्ताह में ताशकंद में प्रवासी 'भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी' की स्थापना की खबर ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद को ऊक-चूक कर दिया। यूरोप और अमरीका तो अक्टूबर क्रांति की घटना होते ही आतंकित हो गए थे। अब अपने उपनिवेशों में उन्हें 'बोल्शेविज्म' का खतरा महसूस होने लगा। यही वजह थी कि ब्रिटिश सरकार ने भारत की आजादी के आंदोलन को दबाने के लिए 'बोल्शेविक षड्यंत्र केस' के नाम पर दमनचक्र चलाया। पहले 'मॉस्को-ताशकंद षड्यंत्र केस' में अकबर खां कुरेशी (10 साल कठोर कारावास), गौहर रहमान (2 साल कठोर कारावास), मियां अकबर शाह खट्टक (2 साल कठोर कारावास) और अब्दुल मजीद, रफीक अहमद, सुल्तान खां, फ़िरोज़ीदीन मंसूर और हबीब अहमद (कसीम) (सभी को 1 साल के कठोर कारावास) की सजाएं दी गईं। बाद में दो नाम और जोड़ दिए गए—मौहम्मद शफ़ीक (3 साल का कठोर कारावास) और फज़ल इलाही कुरबान (5 साल का कठोर कारावास)। सन् 1923-24 में भारत

में 'बोल्शेविक दलाल' करार देकर 'कानपुर बोल्शेविक षड्यंत्र केस' का सनसनीखेज मुकदमा दायर किया गया। जिसके चार प्रमुख अभियुक्त थे–एस.ए.डांगे, नलिनी भूषन दास गुप्ता, शौकत उस्मानी और मुज़फ्फर अहमद। सभी को चार साल के कठोर कारावास की सज़ा सुनाई गई थीं, लेकिन इनमें नलिनी भूषण दास गुप्ता और मुज़फ्फर अहमद को एक साल बाद छोड़ दिया गया जबकि डांगे और उस्मानी को क्रमश: मई और अगस्त 1927 में पूरी सज़ा भुगतने के बाद छोड़ा गया।

इस दूसरी मॉस्को यात्रा के पीछे दो प्रमुख कारण थे। एक तो उस्मानी की इच्छा थी कि वे अपनी सैद्धांतिक विचारधारा को और अधिक सुदृढ़ करें और दूसरे बहुत से प्रमुख वामपंथियों का दबाव था कि वे भारत की आजादी के संघर्ष में सोवियत संघ और कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल से सहयोग प्राप्त करें। उस्मानी ने दिसम्बर 1927 में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मद्रास अधिवेशन में खान अब्दुल ग़फ्फार खां से संपर्क किया। उनके साथ जोगलेकर, निंबकर, सोहनसिंह जोश, मुज़फ्फर अहमद और अन्य नेता भी थे। बादशाह खान ने चार सद्दा से निकाल सकने में मदद करने की हामी भरी। इसी दौरान उस्मानी का संपर्क विजय कुमार सिन्हा, सरदार भगतसिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद, बटुकेश्वरदत्त आदि क्रांतिकारियों के साथ हुआ और इससे पहले कैद से छूटते ही गणेश शंकर विद्यार्थी ने उनको कानपुर में रहने का प्रबंध कर दिया था। किन्तु कुछ समय बाद उन्हें दिल्ली में रहना पड़ा। उपर्युक्त सभी का दबाव था उस्मानी को प्रतिनिधित्व करने हेतु मॉस्को भेजने का, जहाँ कॉमिन्टर्न की छठी कांग्रेस होने को थी।

जून 1928 में कराची से मालवाही स्टीमर द्वारा ईरान के रास्ते से उस्मानी मॉस्को पहुँचे। वहाँ उनका स्वागत-सत्कार हुआ और उन्हें कॉमिन्टर्न की छठी कांग्रेस के अध्यक्ष मंडल में शामिल कर लिया गया जहाँ उन्होंने 'सिकन्दर सूर' छद्म नाम से प्रतिनिधित्व किया। इस प्रकार नाम बदलने की रणनीति अपनाना क्रांतिकारियों की परंपरा रही है ताकि जहाँ तक हो सके अपने और दूसरे साथियों के लिए अनावश्यक मुसीबत से बचा जा सके, यद्यपि बच तो वे फिर भी नहीं सके थे। उस्मानी की तरह प्रतिनिधित्व करने वालों में सौम्येन्द्रनाथ टैगोर का छद्म नाम 'नारायण' शफीक का 'रेज़ा' और सैय्यद हबीब अहमद नसीम का 'महमूद गुलाम अंपिका खान लुहानी' था।

इस यात्रा का अधिकांश विवरण शौकत उस्मानी की पुस्तक 'I Met Stalin Twice' में दिया जा चुका है। छठी कांग्रेस के सामने और कॉमिन्टर्न के नेताओं से व्यक्तिश: मिलकर शौकत उस्मानी ने भारतीय क्रांतिकारियों की इस आकांक्षा को प्रस्तुत कर दिया कि उनके पास सोवियत संघ से हथियार पहुँचाए जाएं ताकि इस आज़ादी की लड़ाई को जुझारू रुप दिया जा सके, लेकिन कॉमिन्टर्न ने व्यक्तिगत हथियारबंदी की योजना को मंजूर नहीं किया। उस्मानी ने विजयबाबू और गणेश शंकर विद्यार्थी को कोडभाषा में दो पत्र दिए जो बीच में ही गायब कर दिए गए।

सोवियत यूनियन की प्रथम पंचवर्षीय योजना ने सबमें एक अभूतपूर्व उत्साह पैदा कर दिया था। नई आर्थिक नीति ने देश में चहुंमुखी विकास के रास्ते खोल दिए थे। सबको रोजगार और शिक्षा दी जा रही थी। सब जगह बिजली पहुँचा दी गई थी और कृषि और उद्योगों का तीव्रता से विकास हो रहा था। रवीन्द्रनाथ ठाकुर और नेहरू ने मुक्तकंठ से इन परिवर्तनों की प्रशंसा की। कुछ महीनों के बाद कॉमिन्टर्न कांग्रेस ने महान् अक्टूबर क्रांति की ग्यारहवीं वर्षगांठ बड़े धूमधाम से समारोहित की। इन सब बातों का भारत में स्वागत किया गया और यहाँ ट्रेड यूनियन आन्दोलन में एक जबरदस्त उभार पैदा हो गया।

12 दिसम्बर, 1928 को भारत आने पर उस्मानी ने मजदूरों में काम चालू किया और 'पयाम-ए-मजदूर' पत्र का संपादन किया। उधर बंबई से डांगे और अधिकारी 'क्रांति' निकाल ही रहे थे। 87 दिन तक खुली जिन्दगी बिताने के बाद 20 मार्च, 1929 को 'मेरठ षड्यंत्र केस' चला और शौकत उस्मानी एवं अन्य गिरफ्तार कर लिए गए। दूसरी तरफ एक ब्रिटिश पुलिस अधिकारी के कत्ल के परिणामस्वरूप एच.एस.आर.ए. के क्रांतिकारियों पर 'लाहौर षड्यंत्र केस' चला। काकोरी और लाहौर षड्यंत्र संबंधी मुकदमों में मार्क्सवादी साहित्य की बोरियाँ भरी हुई पकड़ी गईं।

प्रस्तुत यात्रा का वर्णन शौकत उस्मानी की खुद की अनेक रचनाओं और दूसरे लेखकों की कृतियों और पत्र-पत्रिकाओं में छपे लेखों और टिप्पणियों में प्रकाशित हो चुका है, किन्तु इसमें कई बिन्दुओं का तर्कसंगत स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया गया है। कॉमिन्टर्न की छठी कांग्रेस, कानपुर-मेरठ-लाहौर 'काकोरी' के 'षड्यंत्र केस', सोवियत संघ की पंचवर्षीय योजना की पृष्ठभूमि में मार्क्सवाद और मार्क्सवाद-विरोध के द्वन्द्व को उजागर किया गया है। इसके साथ ही यह दिखाने की कोशिश भी की गई है कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की इन घटनाओं का क्या महत्त्व था। उस्मानी की विशेषता यह है कि वे अपने खुद के व्यक्तित्व को प्रधानता न देकर उन मूल्यों को प्रमुख स्थान देते हैं जिनके लिए यह सब होता रहा।

शौकत उस्मानी की इस यात्रा में वह तीक्ष्णता नहीं है जो 'पेशावर से मॉस्को तक' की प्रथम यात्रा के अनुभवों में रही है। इसका विश्लेषण संवेदना को स्पर्श करने की बजाय मस्तिष्क पर अधिक असर पैदा करता है। यहाँ भी क्रम का आगे-पीछे होते रहने का सिलसिला चलता रहता है।

क्रांतिकारी भावना के ज्वलंत प्रतीक शौकत उस्मानी लौह पुरुष जोसेफ स्टालिन के समक्ष अपने गरिमापूर्ण व्यक्तित्व का उदाहरण स्थापित कर सके—यह अपने आप में एक महान उपलब्धि थी। उनकी प्रत्येक यात्रा उस इतिहास की घटनाओं का साक्षात्कार करती है जो किसी भी युग में भुलाई नहीं जा सकती। इस वर्तमान यात्रा में भी उस्मानी को जो अमूल्य अनुभव प्राप्त हुए उनको अपनी सहज सरल भाषा में व्यक्त करके हमें एक ऐसा दस्तावेज प्रदान किया है जो अनेक शोधकर्त्ताओं के लिए स्रोत का काम करता रहेगा। निस्संदेह पहली यात्रा की तुलना में इस यात्रा के दौरान उस्मानी

में 'बोल्शेविक दलाल' करार देकर 'कानपुर बोल्शेविक षड्यंत्र केस' का सनसनीखेज मुकदमा दायर किया गया। जिसके चार प्रमुख अभियुक्त थे–एस.ए.डांगे, नलिनी भूषन दास गुप्ता, शौकत उस्मानी और मुज़फ्फर अहमद। सभी को चार साल के कठोर कारावास की सज़ा सुनाई गई थीं, लेकिन इनमें नलिनी भूषण दास गुप्ता और मुज़फ्फर अहमद को एक साल बाद छोड़ दिया गया जबकि डांगे और उस्मानी को क्रमशः मई और अगस्त 1927 में पूरी सज़ा भुगतने के बाद छोड़ा गया।

इस दूसरी मॉस्को यात्रा के पीछे दो प्रमुख कारण थे। एक तो उस्मानी की इच्छा थी कि वे अपनी सैद्धांतिक विचारधारा को और अधिक सुदृढ करें और दूसरे बहुत से प्रमुख वामपंथियों का दबाव था कि वे भारत की आजादी के संघर्ष में सोवियत संघ और कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल से सहयोग प्राप्त करें। उस्मानी ने दिसम्बर 1927 में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मद्रास अधिवेशन में खान अब्दुल ग़फ्फार खां से संपर्क किया। उनके साथ जोगलेकर, निंबकर, सोहनसिंह जोश, मुज़फ्फर अहमद और अन्य नेता भी थे। बादशाह खान ने चार सद्दा से निकाल सकने में मदद करने की हामी भरी। इसी दौरान उस्मानी का संपर्क विजय कुमार सिन्हा, सरदार भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद, बटुकेश्वरदत्त आदि क्रांतिकारियों के साथ हुआ और इससे पहले कैद से छूटते ही गणेश शंकर विद्यार्थी ने उनको कानपुर में रहने का प्रबंध कर दिया था। किन्तु कुछ समय बाद उन्हें दिल्ली में रहना पडा। उपर्युक्त सभी का दबाव था उस्मानी को प्रतिनिधित्व करने हेतु मॉस्को भेजने का, जहाँ कॉमिन्टर्न की छठी कांग्रेस होने को थी।

जून 1928 में कराची से मालवाही स्टीमर द्वारा ईरान के रास्ते से उस्मानी मॉस्को पहुँचे। वहाँ उनका स्वागत-सत्कार हुआ और उन्हें कॉमिन्टर्न की छठी कांग्रेस के अध्यक्ष मंडल में शामिल कर लिया गया जहाँ उन्होंने 'सिकन्दर सूर' छद्म नाम से प्रतिनिधित्व किया। इस प्रकार नाम बदलने की रणनीति अपनाना क्रांतिकारियों की परपरा रही है ताकि जहाँ तक हो सके अपने और दूसरे साथियों के लिए अनावश्यक मुसीबत से बचा जा सके, यद्यपि बच तो वे फिर भी नहीं सके थे। उस्मानी की तरह प्रतिनिधित्व करने वालों में सौम्येन्द्रनाथ टैगोर का छद्म नाम 'नारायण' शफ़ीक का 'रेज़ा' और सैय्यद हबीब अहमद नसीम का 'महमूद गुलाम अपिका खान लुहानी' था।

इस यात्रा का अधिकांश विवरण शौकत उस्मानी की पुस्तक 'I Met Stalin Twice' में दिया जा चुका है। छठी कांग्रेस के सामने और कॉमिन्टर्न के नेताओं से व्यक्तिशः मिलकर शौकत उस्मानी ने भारतीय क्रांतिकारियों की इस आकांक्षा को प्रस्तुत कर दिया कि उनके पास सोवियत संघ से हथियार पहुँचाए जाएं ताकि इस आज़ादी की लड़ाई को जुझारू रूप दिया जा सके, लेकिन कॉमिन्टर्न ने व्यक्तिगत हथियारबंदी की योजना को मंजूर नहीं किया। उस्मानी ने विजयबाबू और गणेश शंकर विद्यार्थी को कोडभाषा में दो पत्र दिए जो बीच में ही गायब कर दिए गए।

सोवियत यूनियन की प्रथम पंचवर्षीय योजना ने सबमें एक अभूतपूर्व उत्साह पैदा कर दिया था। नई आर्थिक नीति ने देश में चहुंमुखी विकास के रास्ते खोल दिए थे। सबको रोजगार और शिक्षा दी जा रही थी। सब जगह बिजली पहुँचा दी गई थी और कृषि और उद्योगों का तीव्रता से विकास हो रहा था। रवीन्द्रनाथ ठाकुर और नेहरू ने मुक्तकंठ से इन परिवर्तनों की प्रशंसा की। कुछ महीनों के बाद कॉमिन्टर्न कांग्रेस ने महान् अक्टूबर क्रांति की ग्यारहवीं वर्षगांठ बड़े धूमधाम से समारोहित की। इन सब बातों का भारत में स्वागत किया गया और यहाँ ट्रेड यूनियन आन्दोलन में एक जबरदस्त उभार पैदा हो गया।

12 दिसम्बर, 1928 को भारत आने पर उस्मानी ने मजदूरों में काम चालू किया और 'पयाम-ए-मजदूर' पत्र का संपादन किया। उधर बंबई से डांगे और अधिकारी 'क्रांति' निकाल ही रहे थे। 87 दिन तक खुली जिन्दगी बिताने के बाद 20 मार्च, 1929 को 'मेरठ षड्यंत्र केस' चला और शौकत उस्मानी एवं अन्य गिरफ्तार कर लिए गए। दूसरी तरफ एक ब्रिटिश पुलिस अधिकारी के कत्ल के परिणामस्वरूप एच.एस.आर.ए. के क्रांतिकारियों पर 'लाहौर षड्यंत्र केस' चला। काकोरी और लाहौर षड्यंत्र संबंधी मुकदमों में मार्क्सवादी साहित्य की बोरियाँ भरी हुई पकड़ी गईं।

प्रस्तुत यात्रा का वर्णन शौकत उस्मानी की खुद की अनेक रचनाओं और दूसरे लेखकों की कृतियों और पत्र-पत्रिकाओं में छपे लेखों और टिप्पणियों में प्रकाशित हो चुका है, किन्तु इसमें कई बिन्दुओं का तर्कसंगत स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया गया है। कॉमिन्टर्न की छठी कांग्रेस, कानपुर-मेरठ-लाहौर 'काकोरी' के 'षड्यंत्र केस', सोवियत संघ की पंचवर्षीय योजना की पृष्ठभूमि में मार्क्सवाद और मार्क्सवाद-विरोध के द्वन्द्व को उजागर किया गया है। इसके साथ ही यह दिखाने की कोशिश भी की गई है कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की इन घटनाओं का क्या महत्त्व था। उस्मानी की विशेषता यह है कि वे अपने खुद के व्यक्तित्व को प्रधानता न देकर उन मूल्यों को प्रमुख स्थान देते हैं जिनके लिए यह सब होता रहा।

शौकत उस्मानी की इस यात्रा में वह तीक्ष्णता नहीं है जो 'पेशावर से मॉस्को तक' की प्रथम यात्रा के अनुभवों में रही है। इसका विश्लेषण संवेदना को स्पर्श करने की बजाय मस्तिष्क पर अधिक असर पैदा करता है। यहाँ भी क्रम का आगे-पीछे होते रहने का सिलसिला चलता रहता है।

क्रांतिकारी भावना के ज्वलंत प्रतीक शौकत उस्मानी लौह पुरुष जोसेफ स्टालिन के समक्ष अपने गरिमापूर्ण व्यक्तित्व का उदाहरण स्थापित कर सके–यह अपने आप में एक महान उपलब्धि थी। उनकी प्रत्येक यात्रा उस इतिहास की घटनाओं का साक्षात्कार कराती है जो किसी भी युग में भुलाई नहीं जा सकती। इस वर्तमान यात्रा में भी उस्मानी को जो अमूल्य अनुभव प्राप्त हुए उनको अपनी सहज सरल भाषा में व्यक्त करके हमें एक ऐसा दस्तावेज प्रदान किया है जो अनेक शोधकर्त्ताओं के लिए स्रोत का काम करता रहेगा। निस्संदेह पहली यात्रा की तुलना में इस यात्रा के दौरान उस्मानी

की राजनीतिक समझ का अधिक विकसित रूप सामने आया है। इसमें केवल दो छोटे से परिच्छेदों में ही इतने विशाल कलेवर को समेट कर पाठक को बहुत कुछ सोचने को प्रेरित कर दिया गया है। जगह-जगह मुहावरे, लोकोक्तियां, उद्धरण और प्रभाव प्रस्तुतीकरण ने उस्मानी के लेखक, पत्रकार और समीक्षक तीनों रूपों का एक भव्य परिचय प्रस्तुत किया है।

जीवन के अंतिम पड़ाव के संकलन की यह कड़ी सबके लिए मनन करने योग्य है।

दिल्ली से मॉस्को (तीसरी यात्रा)—नवम्बर 1964 से अक्टूबर 1974 तक शौकत उस्मानी मिस्र में रहे, जहाँ उन्होंने पी.एल.ओ. की क्रांतिकारी इकाई 'अलफतह' के साथ काम किया और 'इजिपशियन गजट' के संपादक मंडल में पत्रकारिता की। वहाँ 'एफ्रो-एशियन पीपुल्स सोलिडैरिटी ऑर्गेनाइजेशन' तथा 'एफ्रो-एशियन लेखक ब्यूरो' के संगठनात्मक कार्य और चतुर्मासिक 'लोटस' को निकालने में भी सहभागी रहे। जब भारत वापिस आए तो उनकी प्रबल इच्छा थी कि मरने से पहले एक बार सोवियत यूनियन की यात्रा और की जाय। कुछ दोस्तों की कोशिशों के परिणामस्वरूप APN (Novosty Press Agencies) से निमंत्रण प्राप्त हुआ कि सन् 1975 की पतझड़ के मध्य में मॉस्को आएं।

8 नवम्बर, 1975 को एयरोफ्लोट वायुयान से रवाना होकर उस्मानी थोड़ी देर ताशकंद में रुके और फिर मॉस्को पहुँच गए।

मॉस्को प्रवास में उस्मानी ने लेनिन का कब्रस्थल क्रेमलिन, कॉ. लेनिन का फ्लैट और क्रेमलिन पुस्तकालय तथा अन्य अनेक रुचिपूर्ण स्थान देखे। उनकी इच्छा थी कि यात्रा को मॉस्को से आरंभ करके फिर लेनिनग्राद, अजरबेजान, तुर्कमानिया, ताजिकिस्तान और उजबेकिस्तान जाया जाय और फिर वहाँ से वापिस आकर यात्रा मॉस्को पर ही समाप्त करके वापिस भारत लौटा जाय।

मॉस्को के बदले हुए स्वरूप को देखकर उन्हें साश्चर्य प्रसन्नता प्राप्त हुई। स्वच्छ चौड़ी सड़कें, आधुनिक शिल्प प्रणाली से बनी बहुमंजिली इमारतें, भव्य सिनेमाघर और ओपेराहाउस, रेस्तरां और सुप्रसिद्ध मैट्रो तो विश्व के पूंजीवादी देशों के टक्कर के थे अथवा कुछेक तो उनसे भी अधिक बढ़िया थे। सबका जीवन-स्तर ऊपर उठ रहा था। दूकानों पर बहुत से लोग टी.वी., कैमरे, पोशाकें, बूट और अन्य वस्तुएं खरीद रहे थे। उन्होंने देखा कि पूंजीवादी बाजारों में वसूल की जाने वाली कीमतों से कहीं सस्ती चीजें उपलब्ध हो रही हैं। हर प्रकार की व्यवस्था में सुघड़ता भी है और तत्परता भी।

12 नवम्बर, 1975 को उस्मानी लेनिनग्राद पहुँचे जहाँ APN के कॉ. एलोइज ए. फिलिपेन्को ने उनकी अगवानी की। वहाँ सबसे पहले उन्होंने अरोरा को देखा जिसके नाविक सैनिकों ने सदा क्रांतिकारियों की भूमिका अदा की थी। यहीं से लेनिन ने रूस की जनता के नाम घोषणा प्रसारित की थी कि 'अस्थायी सरकार को पदच्युत

कर दिया गया है' और अरोरा की महत्त्वपूर्ण भूमिका के कारण सोवियत यूनियन की केन्द्रीय कार्यकारिणी ने इसे लाल झंडे से सम्मानित किया था। द्वितीय विश्वयुद्ध में भी लेनिनग्राद की रक्षा में इसकी अहम भूमिका रही थी। सन् 1948 में अरोरा को स्थायी रूप से संग्रहालय की ऐतिहासिक वस्तु का रूप प्रदान कर दिया गया।

इसके ठीक दूसरी तरफ सामने लेनिन होटल है जिसकी इमारत दस-मंजिला है।

द्वितीय विश्वयुद्ध में लेनिनग्राद की रक्षा के लिए 2,504,400 जनसंख्या में से 6,32,000 लोग शहीद हो गए थे। असह्य कष्टों को सहन करते हुए लेनिनग्राद की जनता ने उसे दुश्मनों के हाथों नहीं जाने दिया। 'अवशेषीय संग्रहालय' में उस्मानी को तानिया नाम की लड़की की वह डायरी दिखाई गई जिसमें अन्य बातों के साथ उसके माता-पिता और रिश्तेदारों की नाज़ी बमबारी में मौत का उल्लेख था और *एक मौत जिसको वह दर्ज नहीं कर सकी थी वह उसकी खुद की थी।* इसके पास ही वह सदैव प्रज्वलित ज्वाला लिए शहीद स्मारक था जिसे दूर-दूर देशों के यात्री आकर श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। संग्रहालय के दाहिनी तरफ कुछ कदम चलने के बाद शहीदों का दफ़नगाह है। अंतिम दिन 14 नवम्बर को उस्मानी को लेनिन का फ्लैट दिखाया गया। द्वारपाल ने जब इस विशाल इमारत के एक कमरे को खोल कर कहा–'यह कभी किसी स्कूल के अध्यापक का कमरा था, जिसे कॉमरेड लेनिन ने अपने रहने का स्थान चुना था।' द्वारपाल ने लेनिन का पुस्तकालय और वे कमरे भी दिखाए जहाँ पार्टी मीटिंगें हुआ करती थीं।

लेनिनग्राड से 15 नवम्बर, 1975 को रवाना होकर शौकत उस्मानी बाकू हवाई अड्डे पर उतरे जहाँ से उन्हें होटल अज़रबेजान लाया गया। बाकू काफी बदल गया था। अब बाकू आधुनिक तेल उद्योग वाला स्थान था। बड़ी-बड़ी इमारतें खड़ी हो चुकी थीं। इस समय अज़रबेजान की कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्य संख्या तीन लाख हो चुकी थी। उस्मानी के सम्मान में वहाँ अक्टूबर क्रांति के बुजुर्ग और समादरणीय क्रांतिकारियों की एक बैठक रखी गई। इसमें अनेक विषयों पर विचार विमर्श किया गया। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि ये सभी बुजुर्ग साथी युवा पीढ़ी के संगठन कोम्सोमोल के नए कॉमरेड्स के सैद्धांतिक उन्नयन हेतु सतत क्रियाशील थे। ग्यारह व्यक्तियों की एक समिति शैक्षिक गतिविधियों का संचालन कर रही थी। बैठक के उपसंहार के रूप में उस्मानी से भारत के संबंध में अनेक समस्याओं और उनके सोवियत संघ के प्रवासकाल के पुराने अनुभवों के संबंध में प्रश्न किए गए जिनके उत्तर उन्होंने विस्तार के साथ दिए। फिर कोम्सोमोल के युवा साथियों के साथ इसी प्रकार की बैठक हुई। एलाबास्कुलीवा नामकी पत्रकार ने भारत में महिलाओं की स्थिति के विषय में अनेक प्रश्न पूछे। अज़रबेज़ान की चहुँमुखी तरक्की की जानकारी हासिल कर उस्मानी को बहुत प्रसन्नता हुई।

अज़रबेज़ान से वे ताजिकिस्तान पहुँचे। दुशाम्बे ताजिकिस्तान की राजधानी

है, जिसके मनोरम दृश्यों ने उन्हें आह्लादित कर दिया। नए डिज़ाइन से बना शहर था यह। यहाँ विज्ञान अकादमी, विश्वविद्यालय और पांच प्रमुख संस्थाओं का निरीक्षण किया। यह भी एक महत्त्वपूर्ण औद्योगिक केन्द्र है और यहाँ की यातायात प्रणाली विकसित प्रणालियों में से है। दुशाम्बे से बीस किलोमीटर की दूरी पर सुप्रसिद्ध प्रकाश नगर न्यूरेक है। यहाँ 300 मीटर ऊँचे न्यूरेक बांध के पीछे एक खूबसूरत कृतिम झील है।

यहाँ से उस्मानी तुर्कमेनिया पहुँचे जो पिछले पचास साल में हर दृष्टि से एकदम बदल चुका था। इस समय 4300 वैज्ञानिकों में से 1605 विज्ञान में डॉक्टरेट उपाधिधारी थे। 1185 पुस्तकालय, 785 क्लब, 6 थियेटर और 620 फिल्म उत्पादक इकाइयां थीं। इसमें 35 पत्रिकाओं के 425,000 और 27 समाचार पत्रों के 721,000 ग्राहक थे। यहाँ के पार्टी सैक्रेटरी ने उस घटना का हवाला दिया जब केरकी की रक्षा में उस्मानी और उनके साथी लड़े थे। उस्मानी के लिए यह प्रसन्नता का विषय था, उन्होंने सैक्रेटरी का आभार व्यक्त किया।

केरकी की सुन्दर हवाईपट्टी पर उतरने पर वहाँ के कोम्सोमोल और पायोनियर्स साथियों ने उस्मानी का अभिनंदन किया। वहाँ फूलों और गुलदस्तों से स्वागत समारोह हुआ और केरकी के पार्टी सचिव के पास एक जुलूस की शक्ल में उन्हें ले जाया गया। आम जनता उमड पड़ी। उस्मानी उस प्रेम को अनिवर्चनीय मानते हैं। वहाँ उन्हें एक खास बंगले में ठहराया गया। वहाँ कॉ. अना-एफ.अल्लाह वर्दी ने उन्हे पहचानते हुए कहा–'हाँ, ये उनमें से है जिनको प्रतिक्रांतिकारियों ने किलिफ और केरकी के बीच गिरफ्तार कर लिया था।'

केरकी से अरखाबाद आए, वहाँ से वापिस ताशकंद। ताशकंद में उन्होंने उस मिलिटरी स्कूल को देखने की उत्सुकता बताई जहाँ पहले प्रशिक्षण प्राप्त किया था। किन्तु अब वहाँ कुछ और ही था क्योंकि उस इमारत को भूकंप ने नष्ट कर दिया था। वहाँ की खेती, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं, धार्मिक सहिष्णुता आदि के विषय में बहुत कुछ ज्ञात कर उन्हें अत्यधिक संतोष प्राप्त हुआ।

वहाँ से वे वापिस मॉस्को आए जहाँ पार्टी की 25वीं कांग्रेस की तैयारी चल रही थी। मॉस्को के अनेक स्थानों और पार्टी के वरिष्ठ साथियों से मिलने के बाद नवम्बर 1975 के अंत में शौकत उस्मानी वापिस भारत आए।

प्रत्येक क्रांतिकारी में मुख्य रूप से उच्च चारित्रिकता, गहन चिंतन प्रतिभा, संकल्प समन्वित भाव-प्रधानता और आमरण सक्रियता का समावेश हुआ करता है। शौकत उस्मानी में ये सब विशेषताएं जीवन के उषाकाल से ही विकसित होती रहीं हैं। 'दिल्ली से मॉस्को' की यात्रा को भावप्रधान कहा जाय तो अनुपयुक्त न होगा। 'मरने से पहले एक बार फिर समाजवाद' के विकसित स्वरूप को देखने और जिस क्रांति की रक्षा के लिए उन्होंने अपनी जान की बाजी लगा दी थी और उसमें सफल हुए थे–अर्द्ध शताब्दी बाद के उस समाजोद्यान का सौंदर्य अपनी आंखों के माध्यम

से अन्तर्पटल पर अंकित कर फिर सब कुछ को निश्शेष कर देने की आकांक्षा लिए प्रस्तुत यात्रा का आयोजन था। इस महत्त्वपूर्ण अवसर की प्राप्ति के फलस्वरूप उन्होंने जिस आंखों देखे बदलाव का यथातथ्य विवरण प्रस्तुत किया है वह विश्व इतिहास के लिए एक प्रामाणिक दस्तावेज है।

प्रस्तुतीकरण ने रचना का एक ऐसा स्वरूप धारण कर लिया है जिसमें उस कालावधि के पचास सालों के विश्व इतिहास की झलक, उसके स्मृतिचित्र, तथ्यात्मक विश्लेषण तथा विवेचन, काव्यात्मक भावमयता तथा दो व्यवस्थाओं की तुलनात्मक समीक्षा का सुगठित समन्वय है। यह 'कागद की लेखी' नहीं, बल्कि 'आंखिन देखी' हक़ीकत और भोगा हुआ सत्य है। ऐसा संयोग अन्यत्र उपलब्ध नहीं। चौहत्तर साल की उम्र के शौकत उस्मानी जब ईरान के कवि हाफिज की कविता का निम्नांकित अंश न्यूर्क में छोटी सी सिलाई शिक्षण संस्था की प्रशिक्षार्थी लड़कियों के सामने गा कर सुनाते हैं—

Dukhtara Tajik boodie, Khana dar Kabul boode,
ba mullah Mohammed Jan

अर्थात् 'तुम ताजिक पुत्रियां थीं, तुम्हारा घर कावुल में था और तुम मुल्लाह मौहम्मद जान के साथ थी।' तो लड़कियां खुशी से झूमती हुई दोहराने लगती हैं। जब तुर्कमेनिया की कम्युनिस्ट पार्टी के सचिव 50वीं वर्षगांठ के उपलक्ष में उस्मानी को दो एलबम, एक Medallion और एक सोने का तमगा भेंट करते हुए उस्मानी को केरकी की रक्षापंक्ति के योद्धा के रूप में प्रस्तुत करते हैं तो वे भावविह्वल हो उठते हैं।

यात्रा के निष्कर्ष के रूप में शौकत उस्मानी कहते है कि–'मैं सिर्फ यही कह सकता हूँ कि आज सोवियत संघ में मानवीय उपलब्धियों की जो भी आश्चर्यचकित अभिव्यक्ति है वह लेनिन की पार्टी 'सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी' के द्वारा प्रेरित और निदेशित जनसाधारण के संकल्पित-समर्पित सामूहिक अथक परिश्रम की बदौलत है।'

छोटे-छोटे चार अध्यायों में सब कुछ समेट लिया गया है। भाषा में शास्त्रीयता से बचने की उनकी अपनी आदत है। लोकायतिकता उनका शैली वैशिष्ट्य है। मार्मिक स्थलों को छूने का अच्छा अभ्यास है। प्रवाह की सहजता में व्याघात न हो इसका सर्वत्र ध्यान रखा गया है। यह यहाँ भी है कि आज की बात कहते-कहते वे पीछे देख सकने की विवशता से छूट नहीं पाते और इसी प्रकार एक जगह कही बात दुबारा आ जाती है।

तीनों यात्राओं में आवेग का उतार संस्मरणों के रूप में निखर कर सामने आया है। यह शौकत उस्मानी के चरम विकास का एक छोर था और भौतिक जीवन की आखिरी मंजिल पर पहुँच कर यह सब कुछ का उपसंहार था। शारीरिक और मानसिक रूप से एक परिपूर्ण जीवन जीने वाले इस क्रांतिकारी के व्यक्तित्व और कृतित्व का

वस्तुपरक मूल्यांकन अभी भी अपेक्षित है।

Autobiography (आत्मकथा)—शौकत उस्मानी, (अप्रकाशित) अंग्रेजी लिखी गई इस आत्मकथा की टाइपशुदा पांडुलिपि में फुलस्केप के 464 पृष्ठ हैं। ए जगह अपनी किसी दूसरी रचना में उस्मानी ने लिखा है कि 'आत्मकथा' की ए प्रति किसी पूर्व समाजवादी देश में किसी शोध संस्था को भेजी गई है जो तथ प्रमाणीकरण की प्रक्रिया करके उसकी प्रकाश्य व्यवस्था करेगी।

'आत्मकथा' सोलह भागों में लिखी गई है जिसमें बचपन से लेकर रचनाकार तक की खुद की जिन्दगी की प्रमुख घटनाएं, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक-राजनैति गतिविधियां और विशेष रूप से क्रान्तिकारियों और क्रान्तिकारी दलों या समुदाय द्वारा भूमिगत या खुले रूप से किये गये जुझारू क्रिया-कलापों का विश्लेषण है।

प्रथम भाग के पहले 6 अध्यायों में बचपन, परिवार, प्रारंभिक प्रभाव, मकतब और मकतब छोड़कर जैन उपासरे में स्थानांतरण, उपासरे के स्कूल की पढ़ाई के बाद 'अंग्रेजी की स्कूल' में पढ़ना और वहाँ से 'डूंगर मैमोरियल कॉलेज' में शिक्षा ग्रहण करके मैट्रिक में पहुँचना और वैयक्तिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर घटनाओं के प्रभावों के फलस्वरूप विचारों और भावनाओं में उथल-पुथल पैदा होना आदि दर्शाया गया है।

छः माह की आयु में पिता चल बसे और एक साल की उम्र में माँ। यह एक साल का शौकत उस्मानी दादी और चाचियों के शब्दों में 'एक हृट-पुष्ट, स्वस्थ, सानुपातिक तन और सुन्दर बच्चा' था। उसने पिता को पूरी तरह नहीं पहचाना और माँ को भी। दादी को 'माँ' माना और वह भी सालों तक। जब दादी को 'माँ' से अलग करके दादी बताया गया तो बच्चे का पहली बार मोह भंग हुआ। फिर भी दादी ही 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम की कहानी कहने वाली प्रथम प्रेरणास्रोत थी। उसका वंश वृक्ष उससे कहता है कि तू मिश्रित शाखा से आने के कारण सांप्रदायिक कट्टरता के जहर से मुक्त है। परिवार कला के 'उस्ताद' से 'उस्ता' या 'उस्मानी' बना।

शुरू से गणित और उर्दू में हर साल अव्वल पुरस्कार पाने वाला बालक किशोरावस्था में 'देश से फिरंगी' को भगा देने की क्रांतिकारी भावना को पालता जाता है। आगे की कक्षाओं में तिवारीजी के बाद आने वाले प्रधानाध्यापक डॉ. संपूर्णानन्द प्रेरित करते हैं। सज्जनालय पुस्तकालय (बीकानेर) में अंग्रेजी के अखबार 'बोम्बे क्रानिकल' और बाद में मोतीलाल नेहरू द्वारा संचालित 'इन्डिपेन्डेंट' के माध्यम से सन् 1917 की अक्टूबर क्रान्ति और भारत में अंग्रेजी शासन की भयंकर दमनकारी घटनाओं से 'आजादी के लिए जूझ पड़ने' का भावावेग जोर पकड़ने लगता है।

बीकानेर में सांप्रदायिकता का प्रवेश उस समय दिखाई देता है जब नागरी भंडार वाचनालय मे (जिसका उद्घाटन पंडित मदन मोहन मालवीय ने किया था) गैर हिन्दू छात्रों को अखबार पढ़ने की रोक लगा दी जाती है। उस्मानी के साथ

छात्र अपना विरोध जताते हैं। इसी प्रकार के अनेक विरोध अवसर छात्र जीवन मे ही प्राप्त होते रहे। फिर प्लेग आई, भगदड़ हुई।

दादी की मौत ने शौकत को वीरान-सा कर दिया। पर वह अपने लक्ष्य को तय करने में लगा रहा। जलियांवाला बाग की खबरों ने आग में घी डालने का काम किया। 1919 की घटनाओं ने उसमें बेहद खलबली मचा दी।

अजमेर में हुए पहले राजनीतिक सम्मेलन में उस्मानी ने भाग लिया जो राजनीति में प्रवेश द्वार सिद्ध हुआ। वैसे उस्मानी मैट्रिक परीक्षा देने ही अजमेर गया था लेकिन संयोगवश उसी समय यह सम्मेलन हुआ। इसमें तिलक ने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर भाषण दिया। इसी में अर्जुनलाल सेठी भी उपस्थित थे जो राजस्थान के लिए प्रेरणास्रोत थे। 1919 की घटनाओं से उत्पन्न क्रांतिकारी लहर का विशेष उल्लेख इस 'आत्मकथा' में किया गया है। भगतसिंह, आज़ाद, अश्फ़ाकुल्ला, लाहिरी, राजगुरु और अन्य अपनी कार्यवाहियां कर रहे थे और दूसरी ओर कांग्रेस के नेता अहिंसक आन्दोलन।

दूसरे भाग में चार अध्याय हैं जिनको 'पेशावर से मॉस्को 1920' के अन्तर्गत सन्निहित किया गया है। यात्रा के लिए बीकानेर से वेश बदल कर रवाना होना, लाहौर जाना, जाबलअससिराज़ (प्रकाशगिरि) और 'सामान्य टिप्पणियां' जैसे उपविभागों में विभाजित है।

'आत्मकथा' में 1920 को सर्वतोमुखी आवेगात्मक वर्ष कहा गया है। कांग्रेस के नेतृत्व में संचालित राष्ट्रव्यापी आंदोलन से खिलाफत आन्दोलन जुड़ चुका था। हिज़रत की लहर भी जोरों पर थी। इसी हलचल भरे वातावरण ने शौकत उस्मानी को अनिश्चित काल के लिए घर छोड़ने को विवश किया। घर में एक चिट लिख छोड़ा कि 'एक सम्मेलन में' भाग लेने दिल्ली जा रहा हूँ' और 9 मई, 1920 को वेश बदलकर रवाना—यह पहला परिस्थितिजन्य 'असत्य' था। इसके बाद एक और बहाना ढूंढना पड़ा उस समय जब लाहौर का टिकट लेने के लिए यह कहना पड़ा कि 'पिताजी सख़्त बीमार हैं, वहाँ पहुँचना जरूरी है जबकि उनके पिता का निधन 18 वर्ष पहले ही हो चुका था।'

लाहौर से पेशावर पहुँचे। पेशावर से मॉस्को तक की यात्रा के वर्णन में काफी कुछ वही बातें हैं जो उनकी रचना 'पेशावर से मॉस्को' में कही जा चुकी हैं। इसके अलावा यहाँ कई अन्य प्रसंगों को भी जोड़ दिया गया है। फिर भी मूल रूप से विषय-वस्तु वही है। यही नहीं 'पेशावर से मॉस्को तक की यात्रा के अत्यन्त कष्टप्रद और कटु अनुभवों' का यही वर्णन उस्मानी की अन्य रचनाओं में भी विविध रूपों में मुखरित हुआ है। इस 'आत्मकथा' में भी उस्मानी ने स्वीकार किया है कि 'अफ़गानिस्तान' और सोवियत संघ की यात्रा का समस्त विवरण सन् 1927 में प्रकाशित मेरी पुस्तकें 'पेशावर से मॉस्को' और 'लाहौर के मेहनतकश' तथा सन् 195[illegible] 'मैं स्टालिन से दो बार मिला' में दर्ज किया जा चुका है। अतः [illegible] कृति का विश्लेषण और विवेचन इस कृति में विशेष रूप से अंकित है।

वस्तुपरक मूल्यांकन अभी भी अपेक्षित है।

Autobiography (आत्मकथा)—शौकत उस्मानी, (अप्रकाशित) अंग्रेजी में लिखी गई इस आत्मकथा की टाइपशुदा पांडुलिपि में फुलस्केप के 464 पृष्ठ हैं। एक जगह अपनी किसी दूसरी रचना में उस्मानी ने लिखा है कि 'आत्मकथा' की एक प्रति किसी पूर्व समाजवादी देश में किसी शोध संस्था को भेजी गई है जो तथ्य प्रमाणीकरण की प्रक्रिया करके उसकी प्रकाश्य व्यवस्था करेगी।

'आत्मकथा' सोलह भागों में लिखी गई है जिसमें बचपन से लेकर रचनाकाल तक की खुद की जिन्दगी की प्रमुख घटनाएं, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक-राजनैतिक गतिविधियां और विशेष रूप से क्रान्तिकारियों और क्रान्तिकारी दलों या समुदायों द्वारा भूमिगत या खुले रूप से किये गये जुझारू क्रिया-कलापों का विश्लेषण है।

प्रथम भाग के पहले 6 अध्यायों में बचपन, परिवार, प्रारंभिक प्रभाव, मक़तब और मकतब छोड़कर जैन उपासरे में स्थानांतरण, उपासरे के स्कूल की पढ़ाई के बाद 'अंग्रेजी की स्कूल' में पढ़ना और वहाँ से 'डूंगर मैमोरियल कॉलेज' में शिक्षा ग्रहण करके मैट्रिक में पहुँचना और वैयक्तिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर घटनाओं के प्रभावों के फलस्वरूप विचारों और भावनाओं में उथल-पुथल पैदा होना आदि दर्शाया गया है।

छः माह की आयु में पिता चल बसे और एक साल की उम्र में माँ। यह एक साल का शौकत उस्मानी दादी और चाचियों के शब्दों में 'एक हृट-पुष्ट, स्वस्थ, सानुपातिक तन और सुन्दर बच्चा' था। उसने पिता को पूरी तरह नहीं पहचाना और माँ को भी। दादी को 'माँ' माना और वह भी सालों तक। जब दादी को 'माँ' से अलग करके दादी बताया गया तो बच्चे का पहली बार मोह भंग हुआ। फिर भी दादी ही 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम की कहानी कहने वाली प्रथम प्रेरणास्रोत थी। उसका वंश वृक्ष उससे कहता है कि तू मिश्रित शाखा से आने के कारण सांप्रदायिक कट्टरता के जहर से मुक्त है। परिवार कला के 'उस्ताद' से 'उस्ता' या 'उस्मानी' बना।

शुरू से गणित और उर्दू में हर साल अव्वल पुरस्कार पाने वाला बालक किशोरावस्था में 'देश से फिरंगी' को भगा देने की क्रांतिकारी भावना को पालता जाता है। आगे की कक्षाओं में तिवारीजी के बाद आने वाले प्रधानाध्यापक डॉ. संपूर्णानन्द प्रेरित करते हैं। सज्जनालय पुस्तकालय (बीकानेर) मे अंग्रेजी के अखबार 'बोम्बे क्रानिकल' और बाद में मोतीलाल नेहरू द्वारा संचालित 'इन्डिपेन्डेंट' के माध्यम से सन् 1917 की अक्टूबर क्रान्ति और भारत में अंग्रेजी शासन की भयंकर दमनकारी घटनाओं से 'आज़ादी के लिए जूझ पड़ने' का भावावेग जोर पकड़ने लगता है।

बीकानेर में सांप्रदायिकता का प्रवेश उस समय दिखाई देता है जब नागरी भंडार वाचनालय में (जिसका उद्घाटन पंडित मदन मोहन मालवीय ने किया था) गैर हिन्दू छात्रों को अखबार पढ़ने की रोक लगा दी जाती है। उस्मानी के साथ

छात्र अपना विरोध जताते हैं। इसी प्रकार के अनेक विरोध अवसर छात्र जीवन में ही प्राप्त होते रहे। फिर प्लेग आई, भगदड हुई।

दादी की मौत ने शौकत को वीरान-सा कर दिया। पर वह अपने लक्ष्य को तय करने में लगा रहा। जलियांवाला बाग की खबरों ने आग में घी डालने का काम किया। 1919 की घटनाओं ने उसमें बेहद खलबली मचा दी।

अजमेर में हुए पहले राजनीतिक सम्मेलन में उस्मानी ने भाग लिया जो राजनीति में प्रवेश द्वार सिद्ध हुआ। वैसे उस्मानी मैट्रिक परीक्षा देने ही अजमेर गया था लेकिन संयोगवश उसी समय यह सम्मेलन हुआ। इसमें तिलक ने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर भाषण दिया। इसी में अर्जुनलाल सेठी भी उपस्थित थे जो राजस्थान के लिए प्रेरणास्रोत थे। 1919 की घटनाओं से उत्पन्न क्रांतिकारी लहर का विशेष उल्लेख इस 'आत्मकथा' में किया गया है। भगतसिह, आज़ाद, अश्फाकुल्ला, लाहिरी, राजगुरु और अन्य अपनी कार्यवाहियां कर रहे थे और दूसरी ओर कांग्रेस के नेता अहिंसक आन्दोलन।

दूसरे भाग में चार अध्याय हैं जिनको 'पेशावर से मॉस्को 1920' के अन्तर्गत सन्निहित किया गया है। यात्रा के लिए बीकानेर से वेश बदल कर रवाना होना, लाहौर जाना, जाबलअससिराज़ (प्रकाशगिरि) और 'सामान्य टिप्पणियां' जैसे उपविभागों में विभाजित है।

'आत्मकथा' में 1920 को सर्वतोमुखी आवेगात्मक वर्ष कहा गया है। कांग्रेस के नेतृत्व में संचालित राष्ट्रव्यापी आंदोलन से खिलाफत आन्दोलन जुड़ चुका था। हिज़रत की लहर भी जोरों पर थी। इसी हलचल भरे वातावरण ने शौकत उस्मानी को अनिश्चित काल के लिए घर छोड़ने को विवश किया। घर मे एक चिट लिख छोड़ा कि 'एक सम्मेलन में' भाग लेने दिल्ली जा रहा हूँ' और 9 मई, 1920 को वेश बदलकर रवाना—यह पहला परिस्थितिजन्य 'असत्य' था। इसके बाद एक और बहाना ढूंढ़ना पड़ा उस समय जब लाहौर का टिकट लेने के लिए यह कहना पड़ा कि 'पिताजी सख्त बीमार हैं, वहाँ पहुँचना जरूरी है जबकि उनके पिता का निधन 18 वर्ष पहले ही हो चुका था।'

लाहौर से पेशावर पहुँचे। पेशावर से मॉस्को तक की यात्रा के वर्णन में काफी कुछ वही बातें हैं जो उनकी रचना 'पेशावर से मॉस्को' में कही जा चुकी है। इसके अलावा यहाँ कई अन्य प्रसंगों को भी जोड़ दिया गया है। फिर भी मूल रूप से विषय-वस्तु वही है। यही नहीं 'पेशावर से मॉस्को तक की यात्रा के अत्यन्त कष्टप्रद और कटु अनुभवों' का यही वर्णन उस्मानी की अन्य रचनाओं में भी विविध रूपों में मुखरित हुआ है। इस 'आत्मकथा' में भी उस्मानी ने स्वीकार किया है कि 'अफगानिस्तान' और सोवियत संघ की यात्रा का समस्त विवरण सन् 1927 में प्रकाशित मेरी पुस्तकें 'पेशावर से मॉस्को' और 'लाहौर के मेहनतकश' तथा सन् 1953 में प्रकाशित 'मैं स्तालिन से दो बार मिला' में दर्ज किया जा चुका है। अलबत्ता कतिपय घटनाओं का विश्लेषण और विवेचन इस कृति में विशेष रूप से अंकित है।

सामान्य टिप्पणियों में से एक महत्त्वपूर्ण यह भी है कि कुलक वर्ग का संबंध शासक वर्ग से और सामंतवाद का अंततः ब्रिटिश साम्राज्यवाद से घनिष्ठता के साथ संलग्न था।

मज़ार-इ-शरीफ के बाद उस्मानी वाला काफ़िला सोवियत प्रशासन की अनुमति लेकर सोवियत संघ की सीमा में प्रवेश कर गया। वहाँ उनकी अगवानी की गई और उनका आगे का कार्यक्रम तय किया गया।

तीसरे भाग के दो अध्याय–'सोवियत तुर्किस्तान' और 'गुलामी से आज़ाद किये गये' सोवियत यूनियन में प्रवेश के बाद के उस क्रम में हैं जो 'पेशावर से मॉस्को' में शुरू हुआ था। जिस भारतीय एंग्लो-इंडियन प्रेस ने 'बोल्शेविकों' का इतना भयावह चित्र प्रस्तुत किया था कि वे अश्लील, कामुक, क्रूर और हत्यारे होते हैं उस्मानी के काफिले को उन्हें देखने की उत्सुकता थी और यहाँ आने पर जब ये बोल्शेविक काफिले का स्वागत करते मिले तो इन्होंने महसूस किया कि वे ऊँचे मानवीय आदर्शों वाले लोग हैं जो स्वयं गोरे यूरोपीय होते हुए भी उन काले भारतीयों को 'कॉमरेड' पुकार कर गले मिलते हैं।

बलाख के खंडहरों से होकर पटकेश्वर और फिर वहाँ से तिर्मिज में ज्यों ही प्रवेश किया, इस काफिले का जोरदार स्वागत किया गया। 'भारतीय क्रांति जिन्दाबाद' के नारे दूर-दूर तक गूंजने लगे। मानवता का एक विशाल सागर उमड पड़ा था जिसमें रूसी, तुर्कमान, सर्द, उज्बेक और ताज़िक शामिल थे। सब तरफ लाल झंडे लहरा रहे थे और सैनिक बैड से 'इंटरनेशनल' की ध्वनि बजती हुई सुनाई दे रही थी।

लेकिन भारत को आज़ाद करवाने के लिए सोवियत संघ से हथियार प्राप्त करने के इरादे वाले प्रवासियों और खिलाफ़त के कट्टरवादियों के बीच मतभेद उभर जाने से काफ़िले में दरार पड़ गई। कट्टरवादियों ने टर्की जाने का अनुरोध किया। तिर्मिज से दो नावों में दोनों ग्रुप रवाना हो गये। आगे चलकर भंवर में फंसकर डूबने की दुर्घटना को टालने के लिए दोनों नावों को एक साथ संलग्न कर दिया गया।

आगे चलकर ये प्रतिक्रांतिकारी तुर्की के चंगुल मे फंस गये। आगे का मौत के साक्षात्कार की कष्टदायक घटना का विवरण 'पेशावर से मास्को' और 'क्रांतिकारी की तीन ऐतिहासिक यात्राएं' शीर्षक रचनाओं के अनुसार है।

मौत के टलने के बाद क्रांतिकारियों का दल फिर केरकी पहुँचकर क्रांति के तुर्किमानी दुश्मनों के विरुद्ध संघर्ष में लग जाता है और उन्हें पराजित करके केरकी की रक्षा करने में अहम भूमिका अदा करता है। तुर्किमानी संख्या में अधिक होते हुए भी आत्मसमर्पण करने को विवश हो जाते हैं। बाद में इन तुर्कमानों को यह समझ में आ जाता है कि ये क्रांतिकारी ही उन्हें अमीर और कुलको के दमन से मुक्ति दिलाने वाले है।

फिर यह दल बोखारा पहुंचा जहाँ परिवर्तन की लहर चल रही थीं। वहाँ से रवाना होकर वह फिर कालधान पहुँचे जिसके लिए उन्हें प्रथम दर्जे के डिब्बे

में यात्रा करने की सुविधा दी गई थी। जो दिक्कत चारजुई तक हुई थी, अब उसकी भरपाई हो चुकी थी। तुर्किस्तान में रूसी कॉमरेड्स ने शानदार मेहमान नवाजी की जिस से दल बहुत संतुष्ट हुआ और दल के प्रत्येक व्यक्ति ने उनके प्रति अपना आभार व्यक्त किया। सब लोग अपने पुराने कष्ट से मुक्ति का अनुभव कर रहे थे और नई व्यवस्था के निर्माण की सराहना कर रहे थे।

पांच परिच्छेदों में विभक्त चौथे खंड में ताश्कंद के प्रवासी भारतीय कम्युनिस्ट ग्रुपों का विश्लेषण है। रेलवे स्टेशन पर कुछ 'पेशेवर क्रांतिकारी' पहुँचे जिन्होंने काफ़िले की अगवानी की। इन ग्रुपों में से एक का नेतृत्व एम.एन. राय, अबनी मुकर्जी और मौहम्मद अली कर रहे थे तो दूसरे का मौलाना अब्दुल रब, एम.पी.टी. आचार्य और खलील बे।

उस्मानी और साथियों को 'इंडिया हाउस' नामक बड़ी इमारत में ठहराया गया। दोनों दल अपनी-अपनी बात समझाने की कोशिश करने लगे। उस्मानी स्वयं किसी दल का पक्ष नहीं ले रहे थे जबकि उनके ही कई साथी राय के तर्कों से प्रभावित होकर उनके साथ होने लगे। आचार्य उस समय अन्दीजान में थे जिनका काम काशगर क्रांतिकारियों से सम्पर्क करना था।

नवम्बर 1920 के आरंभ में आचार्य ताशकंद आ पहुँचे। इसी दौरान वहाँ ताशकंद में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की गई। मौहम्मद शफीक को उसका जनरल सैक्रेटरी बनाया गया जो कभी ओबेदुल्ला-राजा महेन्द्र प्रताप की अस्थायी सरकार का पूर्व सदस्य था। उस्मानी ने पार्टी की सदस्यता इसलिए नहीं ली कि उन्हें उस समय तक मार्क्सवादी सिद्धान्तों की शिक्षा नहीं मिल सकी थी।

राय की प्रेरणा से उस्मानी बार-बार अध्ययन में व्यस्त होने लगे। फिर भी वे केवल सैद्धांतिकता तक ही अपने को सीमित नहीं रखना चाहते थे, अत: उन्होंने ताशकंद के आम लोगों से मिलकर व्यावहारिक अनुभवों को प्राप्त करने का निश्चय लिया।

क्रांति के सिद्धांतों और उन्हें व्यवहार में उतारने पर ताशकंद के इन प्रवासी साथियों में रात-दिन अच्छी-खासी बहसें चलती थीं। उस्मानी भी इसमें हिस्सा लेते थे।

दिसम्बर माह में उस्मानी को अन्दीजान में भेजा गया जहाँ आचार्य हथियारों का चार्ज संभाल रहे थे। उन्होंने उस्मानी को चार्ज सौंपा। हथियारों में 'बोतल बम' भी थे। वहाँ कुछ रूसी और सर्द छात्रों से सम्पर्क कायम किये जाने के अलावा विशेष कुछ नहीं किया जा सका।

फिर उस्मानी को वापिस ताशकंद बुला लिया गया। वहाँ उस समय एक सैन्य स्कूल शुरू हो गया था जिसमें काफी साथी भर्ती हो गए थे। भारतीय कॉमरेड्स ने यह निर्णय कर लिया था कि उस्मानी को मॉस्को भेजा जाये जहाँ वे शिक्षा कर सकें। उस्मानी ने इस निर्णय को स्वीकार कर लिया। बाद में [illegible] को

बात भी ज्ञात हुई कि ताशकंद मे जो कम्युनिस्ट बने थे वे कम्युनिस्टों के नाम पर कलंक साबित हुए।

उस्मानी ने सोवियत रूस के उत्तर की ओर से अपनी यात्रा शुरू की जिसका उद्देश्य था मॉस्को पहुँच कर अपनी सैद्धांतिक और व्यावहारिक शिक्षा का सर्वतोभावेन विकास करना।

पांचवें भाग में दो अध्याय हैं। जनवरी 1921 के आरंभ में शौकत उस्मानी सहित तीन छात्र मॉस्को पहुँचे जिन्हें होटल डेलोवोई डेर में ठहराया गया तथा सपत्नी एम.एन. राय, अबनी मुकर्जी और मौम्मद अली डीलक्स में ठहरे। लक्स में जापान, ब्रिटेन और फिनलैण्ड के प्रसिद्ध कम्युनिस्ट नेता भी ठहरे हुए थे। लक्स में ही शिक्षक माइकेल बौन्डिन, फाइनबर्ग और प्रसिद्ध रूसी ट्रेड यूनियन नेता रीन स्टीन थे। जर्मनी के युवा कम्युनिस्ट नेता विली मुंजेन्बर्ग भी उस्मानी के सहशिक्षार्थी थे।

छात्रों को अर्थशास्त्र, राजनीति और ट्रेड यूनियनवाद की सैद्धांतिक शिक्षा के अलावा कुछ सैन्य प्रशिक्षण भी दिया जाता था, लेकिन अधिकतर व्यावहारिक पक्ष पर अधिक जोर दिया जाता था। घूम-फिर कर देखना, दलो में बंटकर संपर्क करना और कृषि और उद्योग संस्थानों का निरीक्षण करना उसका महत्त्वपूर्ण हिस्सा था।

उस्मानी ने अपने लेखन का उद्देश्य सब प्रकार के भ्रमपूर्ण प्रचार के जाल को तोड़कर सच्चाई को प्रकट करना बताया है। क्रांतिकारी सत्य को निश्चित रूप से उद्घाटित करना चाहिये।

ताशकंद हो या मॉस्को उस्मानी जैसे क्रांतिकारियों के लिए सबसे प्रमुख लक्ष्य अपने देश की आजादी के लिए संघर्ष को तेज और तीखा करना था।

7 फरवरी, 1921 को प्रिंस क्रोपाट्किन की मृत्यु हो गई। यद्यपि क्रोपाट्किन एक अराजकतावादी थे किन्तु वे रूसी क्रान्ति के समर्थक थे। सारे कम्युनिस्ट उनका बड़ा सम्मान करते थे। उन्हें श्रद्धांजलि देने के लिए सभी नेता ट्रेड यूनियन हॉल में इकट्ठे हुए। वहाँ क्रांति के नायक लेनिन भी उपस्थित हुए। उस्मानी ने सर्वप्रथम वहीं लेनिन का साक्षात्कार किया। दूसरी बार फिर क्रेमलिन में विदेशी प्रतिनिधियों के साथ, जिनमें उस्मानी भी सम्मिलित हुए थे—उनसे लेनिन की मुलाकात हुई। उस्मानी को यद्यपि लेनिन का चेहरा उतना प्रभावशाली नहीं लगा, किन्तु उनकी नजरे बेहद मर्मभेदी थीं। छोटी किन्तु तेज आंखें थीं वे जिनमे भोगी हुई पूर्व वेदनाओं और भविष्य की उज्जवल आशाओं की गहरी छाप दिखाई दे रही थी। वे वहाँ नई आर्थिक नीति के बारे में बोले थे। इससे पूर्व उन्होंने सब प्रतिनिधियों से स्नेहपूर्वक हाथ मिलाया था।

मॉस्को में उस्मानी अनवर पाशा से भी मिले।

क्रांतिकारियों के चरित्रांकन में उस्मानी ने तीन घटनाओं का उल्लेख किया है—पहली सन् 1921 के अकाल के समय की घटना जब लेनिन ने स्वयं अपने ही दैनिक भोजन मे कटौती कर दी और जब यह बात मालूम हुई और किसान

उनके घर बहुत तादाद में खाद्य पदार्थ लाए, तो लेनिन ने अपनी एक दिन की खुराक रख ली और बाकी कारखानों के मजदूरों के पास भेज दी। दूसरी घटना यह थी कि होटल डी-लक्स की एक मीटिंग में भाग लेने के लिए जब ट्रॉट्स्की गेट के अंदर प्रवेश करने लगा तो दरवाजे पर खड़े व्यक्ति ने 'कार्ड' दिखाने को कहा। 'मैं ट्रॉट्स्की हूँ' कहकर ट्रॉट्स्की ने उसको धमकाया, लेकिन उसे प्रवेश नहीं मिला। आखिर ट्रॉट्स्की को वापिस जाकर अपना कार्ड लाना पडा। तब प्रवेश करने दिया गया। तीसरी घटना स्टालिन द्वारा लाल सेना की परेड का निरीक्षण करते समय की है। जब स्टालिन ने सैनिकों से पूछा कि 'कोई दिक्कत है किसी को।' एक ने कहा—'आपके चमकते बूट और मेरे पुराने फटे बूट को देखिये।' स्टालिन ने फौरन अपने बूट उतारकर उसे पहना दिये और खुद उसके पहन लिए।

अप्रैल के माह में अध्ययन समाप्त हुआ और दुर्योगवश उस्मानी बीमार हो गये। डाक्टरों की टीम ने जांच करके बताया कि उनके दिल में बढ़ोतरी हो गई है। अब उन्हें मॉस्को छोड़ने को विवश होना पड़ा। उन्हें इलाज के लिए सेवास्तोपोल भेज दिया गया।

भाग VI अध्याय 5—अकाल की स्थिति होते हुए भी जिस हॉस्पीटल रेलगाड़ी में अस्वस्थ उस्मानी को ले जाया गया उसमें दवाइयों और दूध तथा अन्य प्रकार की सारी सुविधाएं प्राप्त थीं। बहुत उत्तम खाद्य पदार्थ थे। रोगियों को ऐसी सुविधा समाजवादी व्यवस्था ही दे सकती थी।

इसी समय कॉमिन्टर्न का तीसरा अधिवेशन भी मॉस्को में हो रहा था। उस्मानी रुग्ण होने की वजह से इसमें भाग लेने से वंचित हो गये थे। सभी देशों से प्रतिनिधि भाग लेने पहुँच चुके थे। इधर भारतीय कम्युनिस्टों के व्यक्तिगत मतभेद भी उभर कर सामने आ चुके थे। यद्यपि हॉस्पीटल ट्रेन से रवाना होने से पहले उस्मानी ताशकंद में स्थापित कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य बन चुके थे, लेकिन इस पार्टी के नीति निर्धारण में दूसरों की ही अधिक भूमिका थी। राय कॉमिन्टर्न में प्रतिनिधित्व कर रहे थे।

इस अधिवेशन में लेनिन ने भारतीय आजादी की रणनीति का भी विवेचन किया था और बताया था कि यदि वहाँ के क्रांतिकारी एकताबद्ध पार्टी का वहीं निर्माण करें और कार्यक्रम तय करें तो कॉमिन्टर्न उसे हर संभव सहायता दे सकता है।

आखिर भारतीय कम्यनिस्टों की दलबन्दी ने कॉमिन्टर्न को सहयोग के किसी सर्वसम्मत निर्णय तक नहीं पहुँचने दिया। फिर भारत का मामला कॉमिन्टर्न के सैक्रेटरी कार्ल राडेक को सुपुर्द कर दिया गया।

एक माह तक इलाज कराने के बाद उस्मानी स्वस्थ हो गये और फिर से मॉस्को पहुँचने की तैयारी करने लगे।

मॉस्को पहुँचकर उस्मानी ने सारी परिस्थितियों की जानकारी की। सबसे पहले वे एम.पी.टी. आचार्य से मिले। यहाँ चट्टोपाध्याय भी मिले जिन्होंने बताया कि प्रसंगवश

लेनिन ने उस्मानी का भी हवाला दिया था। फिर आचार्य और चट्टोपाध्याय ने कॉमिन्टर्न से असफल वार्ता की कहानी भी सुनाई।

उस्मानी ने राय के सामने भारत वापिस लौटने का इरादा रखा। लेकिन बाद में उस्मानी और राय में मतभेद स्पष्ट हो गये। फिर वे कॉमिन्टर्न के जनरल सैक्रेटरी रैकोशी से मिले। उन्होंने राडेक से मिलने को कहा और राडेक ने स्टालिन से।

स्टालिन से मिलने की पूरी घटना का विवरण 'मैं स्टालिन से दो बार मिला' नामक पुस्तक से दोहराया गया है।

भाग VII के तीन अध्याय हैं। बाकू को जाने वाली गाड़ी में विदा देने के लिए मॉस्को में C.P.I के सैक्रेटरी आये थे।

बाकू पहुँचने पर उस्मानी वहाँ दो दिन रुके। वहाँ के किसान लंबे, काले और लाल थे और लंबे बालों वाली काकेशस की सुन्दर औरतें थीं।

यह वह समय था जब टर्की फ्रेंको-ब्रिटिश संचालित युद्ध मे उनके विरुद्ध लड़ रहा था। उस्मानी मूसा जफ़रुल्लाह और दूसरों से मिले जो बाकू से टर्की को मदद पहुँचाने की व्यवस्था कर रहे थे। मूसा उस समय मध्य-एशिया और अरब देशों की आजादी के लिए कार्य करने वाले नेताओं में प्रमुख थे। वैसे मूसा बहुत मिलनसार थे, लेकिन उस्मानी को उनका 'इस्लामिक समाजवाद' समझने में दिक्कत पैदा हो रही थी। इसके बाद दोनों की मुलाकात कभी नहीं हुई।

सोवियत सेनाओं ने ब्रिटिश सैनिकों को परास्त कर दिया और पर्शियन कम्युनिस्टों ने मौका देखकर घिलान गणतन्त्र की स्थापना कर दी जिसकी राजधानी रेश्ट रखी। जब उस्मानी रात को रेश्ट पहुँचे तो उसके चारों ओर भयानक स्थिति थी। एक ओर कोचक खान के सैनिक थे तो दूसरी तरफ इम्पीरियल ईरानी फौज। फिर भी घिलान के क्रांतिकारियों में से एक ने उनको सुरक्षित कर दिया।

इसके साथ ही उस्मानी ने उन मुजाहिरों की दशा का भी वर्णन किया है जो टर्की के लिए लड़ने आये थे। टर्की की सरकार ने उनको साफ कह दिया था कि वे पहले भारत से तो ब्रिटिश शासकों को मार भगाएं।

रेश्ट में ही उस्मानी को यह सूचित कर दिया गया कि घिलान गणतंत्र का विलीन होना निश्चित सा है। इसके बाद जल्दी की कम्युनिस्ट वहाँ से चल दिये और बाकू के लिए रवाना हो गये तथा उस्मानी को भी यह सलाह दी गई कि वे भी बाकू चले जाएँ। लेकिन उस्मानी वापिस बाकू जाना उचित नहीं समझते थे और वे ईरान के रास्ते से भारत पहुँचने का विचार कर चुके थे। दो दिन के बाद रेश्ट में रेजा खान की सेना घुस गई थी और उसने रेश्ट पर कब्जा कर लिया था। रेजा शाह पहलवी ने प्रशासन संभाल लिया था।

उस्मानी को एक तरह से होटल में नज़रबन्द-सा होना पड़ा। जब रेजा शाह को यह मालूम हुआ कि उस्मानी भारत का निवासी है। वहीं मेजर अगारे और सुल्तान मौहम्मद मिल गये जो आचार्य के जानकार थे। उस्मानी ने उन्हें आचार्य का पत्र

दिखाया। तब उन्हें फौजी एरिया से निकलने की अनुमति दी गई।

तेहरान में उस्मानी अस्वस्थ हो गये। पर्शियन जानने के कारण पर्शियन पासपोर्ट मिलने में दिक्कत नहीं हुई और दिनांक 22 जनवरी, 1922 ई. को वे बंबई आ पहुचे।

आठवें भाग के एकमात्र अध्याय में विश्लेषणात्मक स्पष्टीकरण अधिक है। जब मुहाजिरीनों के काफ़िले सोवियत यूनियन रवाना हुए थे, कुछ लोग सपने ले रहे थे जनरल या कर्नल बनने के और कुछ भारतीय क्रांति के नेता बनने के। लेकिन ज्यों ही ताशकंद पहुँचे और वहाँ रहने वाले स्वयंभू 'भारतीय-क्रांतिकारियों' को सोवियत संघ की *आरामदेह ऐय्याशियों को भोगते हुए तथा आपस में झगड़ते हुए देखा तो* सपने टूट गए। इसके फलस्वरूप हाथ लगी घोर निराशा या हताशा।

ताशकंद में 'हिन्दुस्तानी सैन्य स्कूल' में बहुसंख्यक मुहाजिरीन भर्ती हो चुके थे, जहाँ से बाद में अच्छा कैडर निकला। उसी की देन थी कि अब्दुल रहीम और सिदिकी जैसे प्रतिभाशाली शहीद तैयार हुए। तीन ने मॉस्को में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शिक्षा ग्रहण की थी। लेकिन अधिकतर प्रवासी शिक्षा तक सीमित नहीं रहना चाहते थे और न ही सोवियत यूनियन में टिके रहना। वे, जिनमें उस्मानी भी शामिल थे चाहते थे कि प्रशिक्षण के अलावा उन्हें हथियार दिये जाएँ ताकि हिन्दुस्तान की आज़ादी की लड़ाई को नई दिशा दी जाय। वे हथियार मिलने का इतजाम करके जल्दी से जल्दी भारत पहुँचकर अंग्रेजी साम्राज्यवाद से भिडना चाहते थे।

शौकत उस्मानी पारसी के वेश में बंबई पहुँचे थे। वहाँ उन्होंने भूमिगत रहकर काम करना शुरू किया। किसी दिन मोची तो कभी पंजाबी कांग्रेसी की बोतल सफाई करने वाले के रूप में तथा इसी प्रकार अन्य प्रकार से दो माह तक काम करते रहे। फिर उत्तरप्रदेश में एक अध्यापक बने। इस दौरान देश में चलने वाले आजादी के आन्दोलन की स्थिति के सम्बन्ध मे मॉस्को के साथियों को सूचित करते रहे। राय ने इन सूचनाओं की बड़ी सराहना की। उस्मानी की रिपोर्ट के अंश उन्होंने 'Masses', 'Advance Guards' तथा 'Vanguard' आदि में प्रकाशित किए। कांग्रेस के गया अधिवेशन को उस्मानी ने ही *'गया में श्राद्ध समारोह' की संज्ञा दी थी।* उस्मानी का मुख्य उद्देश्य कम्युनिस्ट साहित्य का वितरण करना था। वे बिना किसी संगठन का नेतृत्व संभाले मिशनरी के रूप में यह कार्य कर रहे थे। यह साहित्य ज्यादातर हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यापकों व छात्रों तथा कानपुर के मजदूरों को पहुँचाया करते थे। कानपुर मे उन्हें गणेश शंकर विद्यार्थी का सहयोग मिला जिनसे पहला परिचय उस्मानी के ही अध्यापक डॉ. सम्पूर्णानन्द ने करवाया था।

चार माह बाद उस्मानी एक साधारण मजदूर के रूप में पर्सिया में शिराज पहुँचे। वहाँ वे एक पर्सियन कॉमरेड के यहाँ रसोई करने वाले नौकर के रूप में रहने लगे। वहाँ से कम्युनिस्ट साहित्य भेजने का प्रबंध करके सितंबर में उस्मानी **फिर** बंबई आ गये और यहाँ से सीधे बनारस पहुँचे और फिर छात्रों में काम करने

इस आठवें भाग के फुटनोट में एक ऐसी बंगाली पुस्तक जिसे

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास के रूप में पेश किया गया था और जिसमें प्रत्येक के विषय में विकृति से भरपूर विवरण प्रस्तुत किये गये थे—के विषय में विस्तार से स्पष्टीकरण दिये गये हैं और अनेक झूठी बातों का खंडन किया गया है।

अब उस्मानी का प्रमुख कार्यक्षेत्र कानपुर, बनारस और फिर रोहतक जिला हो गया था। डॉ. सम्पूर्णानन्द ने अपनी पुस्तक 'Memories and Reflections' में उस्मानी की कार्यप्रणाली का जिक्र किया है। 'सबसे महत्त्वपूर्ण यह बात थी कि मुझे (उस्मानी के माध्यम से) नवीनतम साहित्य मिलता रहता था जो रूस मे प्रकाशित होता था। यह सिलसिला कभी समाप्त नहीं हुआ। हम में से बहुत से प्रतिबंधित साहित्य को एक हाथ से दूसरे हाथ पहुँचाते रहते थे। ...उस्मानी कुछ समय बनारस में रहें और मैंने उसे गणेश शंकर विद्यार्थी के पास कानपुर भेजा।'

गणेश शंकर विद्यार्थी ने उस्मानी को कानपुर के राष्ट्रीय मुस्लिम हाई स्कूल में द्वितीय अध्यापक बनाया। रात को उस्मानी मजदूरों की क्लास लेते थे और दिन में छात्रों में विचारधारा समझाने और साहित्य वितरित करवाने का काम करते थे। छुट्टियों के दिन सैनिकों से सम्पर्क करते थे।

9 मई, 1923 को उपर्युक्त स्कूल को सेना के द्वारा घेर कर उस्मानी को गिरफ्तार कर लिया गया। फिर 12 या 13 मई को कैंट सैल से बाहर निकालकर पेशावर भेजने के लिए बन्द गाड़ी में रवाना कर दिया गया। इस खबर के फैलते ही अपार भीड़ इस 'बोल्शेविक' को देखने उमड़ पड़ी।

पेशावर पहुँचने पर सदर थाना पुलिस स्टेशन ले जाए गये जहाँ पूछताछ की गई लेकिन उस्मानी टस से मस नहीं हुए, उन्होने किसी सवाल का जवाब नहीं दिया। बेड़ियों और हथकड़ियों से उन्हें जकड़कर बुर्ज हरिसिंह पुलिस थाने में डाल दिया गया। यहाँ से हर सुबह पूछताछ के लिए सदर थाना ले जाया जाता। दो हथियारबंद कांस्टेबल साथ होते। पूछताछ करने वालों को आए दिन नाकामयाबी ही हाथ लगती।

इस नौवें भाग के तीन अध्यायों में जेल यंत्रणाओं का वर्णन है। खुली टांगों के बीच के हिस्से में बेड़ियों से जकड़ने से खून टपक रहा था लेकिन बचाव के लिए पट्टी नहीं थी। दूरी तक पैदल चलकर पेशावर से जमरूद के बीच लाया ले जाया जाता था। अत्यधिक पीड़ा होती थी। खून रोकने की प्राथमिक चिकित्सा नहीं थी। मजिस्ट्रेट एक ही वाक्य कह देता—'कस्टडी में रिमांड पर।' सात अन्य अभियुक्तों को भी आरोपित करके सजा दी गई थी। दस नामों में से आठवां नाम उस गद्दार अब्दुल कादिर का भी है जिसने आगे चलकर भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव को फांसी का आदेश दिया था।

वहाँ से उस्मानी को अब्बोत्ताबाद ले जाया गया जहाँ उन्हें जिले की मुख्य जेलों में रखा गया जो एक सीधा खड़ा जुओं का कारखाना था। जुएं सारे शरीर पर रेंगती थीं और निहायत गंदी कंबल को ओढना ठंड से बचने के लिए अनिवार्य

था। वहाँ तीन अंग्रेज अधिकारियों के द्वारा हर तरह से पूछताछ की गई यद्यपि उस्मानी ने अपना नाम तक नहीं बताया। अंतिम उत्तर था 'कुछ नहीं बताऊँगा, चाहे फांसी लगा दो।'

एक पुलिस अधिकारी ने व्यंग्य कसते हुए पूछा—'तुम्हारा सोवियत हिन्दुस्तान पर कब हमला कर रहा है?' और फिर बेड़ी-हथकड़ी लगे उस्मानी को बेरहमी से बंगले के लॉन पर घसीटने-पटकने लगे। अंग्रेज अधिकारी उस्मानी पर किये जा रहे पाशविक अत्याचार को देखकर मनोरंजक आनंद अथवा मजा ले रहे थे। इस दमन के बाद फिर सड़ियल अंधेरी कोठरी में फेंक दिया जाता था। उस्मानी के पैरों पर बेड़ियों के निशान जिन्दगी भर रहे और यंत्रणाओं की स्मृति कभी नहीं धुंधलाई। अकबर खां कुरेशी के पात्रों में बेड़ियां और हथकड़ियां पेशावर जेल में दस साल तक यों ही कष्ट देती रहीं, यद्यपि कानून की दृष्टि से मजबूरन मशक्कत कराना मना था, लेकिन उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रदेश जिसे आमतौर पर 'अराजक देश' कहा जाता था—यह सब करवाया जा रहा था। इन अपराधियों को दो लोहे के गंदे बर्तन दिये जाते थे—एक पानी के लिए और दूसरा दाल के पानी के लिए। उन्हीं में शौच के बाद की सफाई के लिए पानी दिया जाता था। सब कुछ घृणित—घृणास्पद।

ढाई महीनों से अधिक बीत जाने के बाद सरकार ने यह निर्णय लिया कि सीमांत प्रांत में उस्मानी को सज़ा नहीं दी जा सकती। अब उन्हें सन् 1918 के रेगूलेशन III के अन्तर्गत 'स्टेट अभियुक्त' के रूप में स्थानांतरित कर दिया था। तब से उस्मानी को ट्राइल वार्ड से बदलकर मुख्य जेल में एक कोठरी में डाल दिया गया जो कहीं ज्यादा सुविधाजनक थी। दस माह तक पेशावर जेल में रहे जहाँ वे उन कांग्रेसी नेताओं के आप-पास रहे जिन्हें दो या तीन साल की कठोर सज़ा दी गई थी। उनमें हकीम अब्दुल जलील और सरदार रामसिंह जैसे वफ़ादार राष्ट्रीय चेतना के व्यक्ति थे। जेल के कुछ सहानुभूत कर्मचारियों के कारण उनसे और कुछ अपने ही साथियों से मुलाकात हो जाती थी। इनमें एक उभरता हुआ पत्रकार मीर आलम खान भी था।

इस प्रकार की जीवन प्रक्रिया का भी शीघ्र अंत हो गया। फिर से उन्हें बेड़ियां और हथकड़ियां डालकर वहाँ से 10 मार्च, 1924 की सुबह रवाना कर दिया गया। जेल के दूसरे नंबर के हैड वार्डर की आंखों से उस्मानी को ले जाते देख कर आंसू टपकने लगे। वह इन राजनैतिक कैदियों के प्रति विशेष सहानुभूति रखता था जबकि उसका उच्च अधिकारी उतना ही ज्यादा क्रूर था।

कानपुर पहुँचने पर पूछताछ के बाद उस्मानी को सिविल वार्ड में भेज दिया गया जहाँ एस.ए. डांगे थे। उस्मानी को इस छोटे कद वाले उच्चकोटि के प्रतिभा-संपन्न व्यक्ति (डांगे) को देखकर चकित होना पड़ा। डिप्टी जेलर ने दोनों का पारस्परिक परिचय कराया था। डांगे ने अपनी पुस्तक 'Hell Found' में इस पहली मुलाकात का हवाला दिया है और साथ ही सन् 1924 से सन् 1927 के जेल के अनुभवों का भी।

दो दिनों के बाद बंगाल से मुजफ्फर अहमद और नलिनी दास गुप्ता भी वहाँ लाए गये। अब वे चार हो गये थे।

दसवें भाग के बारह अध्यायों में 'बोल्शेविक षड्यंत्र केस' (कानपुर) के विषय में विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया गया है। 16 मार्च, 1924 को संयुक्त न्यायाधीश क्रिस्टी की अदालत में मुकदमा चालू हुआ जिसमें I.P.C. के सैक्शन 121A के तहत एस.ए. डांगे, नलिनीदास गुप्ता, मुज़फ्फर अहमद और शौकत उस्मानी को हाजिर किया गया। धारा 121A का अर्थ था कि अभियुक्त भारत की सर्वोच्च सत्ता (ब्रिटिश सम्राट) को हटाने का षड्यंत्र कर रहे थे। यद्यपि मुकदमे को गढ़ने में अनेक झूठो को शामिल किया गया था, लेकिन उसमें आधारभूत सत्य भी निहित था कि अभियुक्त भारत को आज़ाद करने के उद्देश्य से ही काम कर रहे थे।

अनेक प्रमाण प्रस्तुत किये गये। इधर कानपुर के सामाजिक और राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं ने बचाव कमेटी का गठन किया जिसके अध्यक्ष गणेश शंकर विद्यार्थी थे। अभियुक्तों मे सबसे प्रमुख 'खतरनाक अपराधी' शौकत उस्मानी को निर्धारित किया गया क्योंकि वह हथियारों के जरिए संघर्ष करके अंग्रेजी शासन को हटाना मिटाना चाहता था। चारों को चार साल की कठोर सजा सुनाई गई। मुज़फ्फर अहमद और नलिनीदास गुप्ता अगले साल अपनी चतुराई, बीमारी अथवा कमजोरी की वजह से छूट गए जबकि डांगे को मई 1927 मे और शौकत उस्मानी को अगस्त 1927 को छोड़ा गया।

जेल जीवन की दुखद स्मृति की घटना का उल्लेख करते हुए उस्मानी ने बताया है कि ट्रायल के दौरान कानपुर जेल में उनके चाचा उमराउद्दीन उनसे मिलने आए। उन्होंने बताया कि उनके तीन परिवारों को जिनमे उस्मानी के खुद का परिवार और दादी के दो भाइयों के परिवारों के सभी सदस्यो को 9 मई, 1923 को उनकी गिरफ्तारी के तत्काल बाद पुलिस कस्टडी में ले लिया गया और उनकी जायदाद को यू.पी. और स्थानीय पुलिस ने रेड करते समय लूट लिया। इसमें औरतो के गहने और नगद राशि भी थी। यह कभी नहीं लौटाई गई। एक सप्ताह बाद महाराजा के हस्तक्षेप से इन परिवारों को छोड़ा गया। चाचा की आंखों में आंसू थे जब वे यह सब बता रहे थे।

जुलाई में जब दमन किया गया तो उस्मानी को भूख हडताल करनी पडी जो 27 दिन तक चली। उन्हें बरेली की जिला जेल में भेजा गया। जबरदस्ती हड़ताल तुड़वाने के अमानुषिक तरीके अपनाए गए। लगातार दमन चलता रहा। लेकिन आखिर नतीजा यह हुआ कि आम कैदी को भी कुछ सुविधाएं दी जाने लगीं। उस्मानी को फिर भी 'बोल्शेविक' होने के नाते जेल यातनाओं का ही सामना करना पड़ा। इससे उस्मानी का स्वास्थ्य काफी गिर गया और उनकी 'बडी आंत में टी.बी.' दर्ज की गई। इससे पहले उन्हें बुखार रहने लगा था।

दूसरी बार उन्हें दो सप्ताह तक फिर भूख हडताल करनी पड़ी। फिर उन्हें देहरादून

की जेल में बदल दिया गया। वहाँ कर्नल बार्बर जेल सुपरिन्टेन्डेंट था, जो अंग्रेज होते हुए भी हिन्दुस्तानी अधिकारियों की अपेक्षा काफी बेहतर था। मूंज बटना, चक्का चलाने का काम करवाया जाता था। फिर बार्बर ने भोजन में सुधार किया और वे काम भी बंद करवा दिये। लंदन से प्रकाशित 'टाइम्स' अखबार भी पढ़ने को दिया गया। वहाँ उन्होंने बागवानी का काम भी किया।

दमन और प्रलोभन और कइयों की सलाह भी उस्मानी को 'खेद प्रकट करने' 'माफी मांगने' या 'समझौता करने' के लिए नहीं झुका सकी। फिर उन्हें अस्पताल भेजा गया। जेल और अस्पताल में उनसे कई लोग मिलने आते।

तत्पश्चात् उन्हें झांसी जेल में बदल दिया गया। वहाँ उन्हें किसी से नहीं मिलने दिया गया, लेकिन एक सप्ताह बाद 26 अगस्त, 1927 को सुबह 10 बजे उन्हें जेल से रिहा कर दिया गया।

कानपुर में उस्मानी का भव्य स्वागत किया गया। बाद में गणेश शंकर विद्यार्थी की प्रेरणा से उन्होंने 'पेशावर से मॉस्को' पुस्तिका लिखी जिसका शीघ्र ही प्रकाशन हो गया। बंबई में भी उनका भव्य अभिनंदन किया गया। जहाँ वहाँ के कम्युनिस्ट दल की विशेष भूमिका थी। वहाँ उस्मानी ने भाषण देते हुए कहा—'वे पूर्ववत् ही कम्युनिस्ट हैं और अपनी जिन्दगी कम्युनिज्म के लिए ही समर्पित करते रहेंगे।' वे डांगे, घाटे आदि अनेक नेताओं से मिले।

ट्रेड यूनियन कांग्रेस का अधिवेशन करवाने में स्वागत समिति के उपाध्यक्ष होने के नाते उन्होंने अथक परिश्रम किया। विद्यार्थी समिति के अध्यक्ष थे। दीवान चमन लाल ए.आई.टी.यू.सी. के प्रेसीडेंट थे।

ए.आई.सी.सी. में उन्होंने राजस्थान के प्रतिनिधि के रूप मे भाग लिया था, क्योंकि उन दिनों उसमे कम्युनिस्ट भी आमंत्रित किये जाते थे। राजस्थान में वे अर्जुनलाल सेठी के सहयोगी थे। A.I.C.C. में मालूम हुआ कि जवाहर लाल नेहरू ने 'पेशावर से मॉस्को' पुस्तक स्वयं खरीदी। फिर कृष्णदत्त पाण्डे के कहने पर कि पंडितजी मिलना चाहते हैं। वे जा ही रहे थे कि नेहरू विषय समिति की बैठक से मंच छोड़कर स्वयं उस्मानी से मिलने आ गए। बाद में जवाहर लाल नेहरू ने उस्मानी की पुस्तक 'रूसी क्रांति का एक पृष्ठ' की प्रस्तावना भी लिखी। लेकिन 1929 में फिर गिरफ्तार होने के कारण यद्यपि वह प्रस्तावना तो सुरक्षित रही, लेकिन किसी अन्य ने अपने नाम से उसे छपवा दिया।

अमरावती जेल में दस साल की सख्त कैद भुगत रहे अकबर खां कुरेशी के लिए उस्मानी पहले से बहुत चिंतित थे। उनके लिए उन्होंने अनेक व्यक्तियों से दिन रात संपर्क किया, लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला।

फिर अनेक साथियों के आग्रह से उस्मानी वापिस सोवियत संघ जाने को तैयार हो गए। वे जब रवाना होकर मॉस्को गए वहाँ कॉमिन्टर्न का छठा अधिवेशन होने वाला था। उन्होंने उसमें कैसे भाग लिया इसका आगे का पूरा विवरण ...

Stalin Twice' में अंकित है जिसे 'आत्मकथा' के इस भाग में भी उद्धृत किया गया है।

खंड-XI अध्याय दो-अक्टूबर के अंत में क्रीमिया से वापिस लौटने की तैयारी की जाने लगी। एक सोवियत साथी की सलाह मानकर उस्मानी ने किसी प्रकार के कागज पत्र अपने साथ नहीं लिए ताकि तलाशी के समय अनावश्यक दिक्कत से बचा जा सके। उस्मानी अत्यन्त अनुशासनप्रिय व्यक्ति थे।

वहाँ से स्विट्जरलैंड पहुँचे और वह उन्हें बहुत पंसद आया। जब तक वहाँ रहे रोज़ जिनेवा झील को देखने जाते। जब इटली पहुँचे तो उनके सारे सामान की उलट-पलट कर तलाशी ली गई। लेकिन कहीं कुछ नही मिला। नेपल्स के होटल में एक अल्बानी राजकुमारी जो उनके पास के कमरे में ठहरी थी और जो फासिस्ट सरकार के खिलाफ बोलती थी—उस्मानी की परिचित हो गई। वह इटली से बाहर उस्मानी के साथ जाना चाहती थी, लेकिन उस्मानी इसके लिए तैयार नहीं थे। उसे मालूम नहीं था कि उस्मानी भारतीय हैं और उन्हें वापिस पहुँच कर राजनीतिक संघर्ष में हिस्सा लेना है। दूसरे उस्मानी का पासपोर्ट भी झूठा था, इसलिए वे उसे साथ लेकर इटली से बाहर नहीं जा सकते थे।

4 दिसम्बर को नाव पूर्व की ओर रवाना हुई। उसमें सवार किसी महिला ने उस्मानी को अपने साथ डांस करने को कहा, लेकिन उन्होंने यह कहकर इंकार कर दिया कि नाव या जहाज में वे नहीं नाचते। अंग्रेज कर्मचारी देख ही रहे थे। इस तरह अनेक आशंकाओं से उन्हें अपने आप को बचाना पड़ा। कहीं यूरोपीय तो कहीं पर्सियन का वेष बनाते हुए। उन्हें कई जगह अपने भारतीय होने की पहचान से भी बचना पड़ा। वैसे उस्मानी पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती और मराठी आसानी से बोल सकते थे फिर भी वे यह बहाना बना रहे थे कि वे अंग्रेजी और पर्सियन के अलावा किसी भाषा को नहीं जानते।

समुद्री यात्रा के दौरान उन्हें यह खबर पढने को मिली कि लाहौर मे लालाजी की मौत के लिए जिम्मेवार व्यक्ति की भारतीय क्रांतिकारियों ने हत्या कर दी है और उसका बदला चुका दिया है।

दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में उस्मानी बंबई पहुँचे। वे मैजेस्टिक होटल मे ठहरे और अपना सामान पहुँचने का इंतजार करने लगे। घंटे डेढ घंटे के भीतर सामान आ पहुँचा। नहा-धोकर वे पार्टी ऑफिस पहुँचे जहाँ उन्हें मालूम हुआ कि कलकत्ता में आल इंडिया वर्कर्स एंड पीजेंट्स कांफ्रेंस होने जा रही है और सारे साथी वहाँ पहुँच गये हैं।

वहाँ से नागपुर होते हुए वे 'डॉ. जॉनसन' बनकर कलकत्ता के लिए रवाना हो गए। लेकिन जब वे कलकत्ता पहुँचे तब तक उपर्युक्त कांफ्रेंस समाप्त हो चुकी थी। उन्होंने दो दिन बाद अपना पासपोर्ट मुजफ्फर अहमद को दिया और पुनः एक साधारण आदमी के रूप में हो गए।

बारहवें भाग के पचपन पृष्ठों में विभाजित बारह अध्यायों में 'मेरठ षड्यंत्र केस' का विस्तृत विवरण है। जिसका आधार अधिकांशतः तत्कालीन समाचार पत्रों में अंकित खबरें तथा टिप्पणियां हैं। पहले मेरठ केस की पृष्ठभूमि को दर्शाया गया है। कलकत्ता से पंजाब में लाहौर पहुंचने पर उस्मानी को अब्दुल मजीद मिले और उन्होंने जोर देकर कहा कि उन्हें लाहौर केस में फंसा लिया जाएगा क्योंकि उस समय लाहौर में सॉन्डर्स की हत्या के कारण क्रांतिकारियों की धरपकड़ चल रही थी। यद्यपि सोहनसिंह जोश की कीर्ति के साथी उस्मानी को वहीं रखना चाहते थे लेकिन मजीद अड़ गए और उस्मानी को तत्काल बंबई रवाना होना पड़ा। बंबई में पहुंचकर 'पयाम-ए-मजदूर' का संपादन संभाला। इधर डांगे मराठी के 'क्रांति' का संपादन संभाले हुए थे।

'पब्लिक सेफ्टी बिल' और ट्रेड डिस्प्यूट बिल' जैसे विधेयकों का लक्ष्य कम्युनिस्ट गतिविधियों पर पाबंदी लगाना, मजदूरों के संघर्षों पर कुठाराघात करना और जनता को आंतकित करना था। मजदूर संगठनों के नेता अपने संगठनों के काम चला रहे थे और प्रचार कार्य जोरों पर था। डांगे गिरनी कामगार यूनियन के जनरल सैक्रेटरी, निम्बकर प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के जनरल सैक्रेटरी, जोगलेकर जी.आई.पी. रेलवे मैन यूनियन के जनरल सैक्रेटरी, घाटे कम्युनिस्ट पार्टी के जनरल सैक्रेटरी, अधिकारी 'क्रांति' निकालने में डांगे के सहायक और शौकत उस्मानी 'पयाम-ए-मजदूर के संपादक और मजदूर नेता के रूप में काम कर रहे थे। बंबई में 17 से 19 मार्च, 1929 को कम्युनिस्ट पार्टी की मीटिंग हुई जिसमें उस्मानी भी थे, उसमें विचार विमर्श के बाद कार्यक्रम की योजना बनाई गई थी।

जब सरकार ने नेताओं के घर पर छापे मारे तो उक्त मीटिंग के कागजात घाटे के यहाँ से मिले। इसमें टी.यू., किसान संगठन, प्रचार-प्रसार कार्य, संगठनात्मक कार्य और राजनैतिक कार्यकलाप हेतु विस्तृत रूपरेखा तैयार करने के लिए एक कमेटी बनाई गई थी जिसमें अधिकारी, खान, उस्मानी और घाटे का नाम शामिल था। सरकारी निर्णय के अनुसार मेरठ के जिला मजिस्ट्रेट द्वारा जारी वारंट के अनुसार देश के हर कोने में तलाशियां और गिरफ्तारियां की जाने लगीं। 20 मार्च, 1929 को बंबई में 10 नेताओं की गिरफ्तारी हुई जिनमें शौकत उस्मानी भी थे। 22 मार्च को उन्हें मेरठ बुलाया गया।

मेरठ केस के अभियुक्तों में वर्ण क्रमानुसार निम्नांकित व्यक्ति थे—

वर्णक्रमानुसार नाम	गिरफ्तारी का स्थान या प्रदेश
1. अब्दुल मजीद	पंजाब
2. अयोध्या प्रसाद	कलकत्ता (बंगाल)
3. अमीर हैदरखां	बरार
4. ए.ए. आल्वे	बंबई
5. डॉ. बी.एन. बनर्जी	यू.पी.

6.	बी.एफ. ब्रैडले	बंबई
7.	धर्मवीर सिंह (एम.एल.सी.)	यू.पी.
8.	डी.आर. थेंगड़ी	पूना
9.	धरणी गोस्वामी	कलकत्ता
10.	गोपेन चक्रवर्ती	कलकत्ता
11.	जी. अधिकारी	बंबई
12.	गौरीशंकर	यू.पी.
13.	गोपाल चन्द्र बासक	कलकत्ता
14.	जी.आर. कास्ले	बंबई
15.	एच.एल.हचिन्सन	बंबई
16.	के.एन. जोगलेकर	बंबई
17.	के.एन. सहगल	पंजाब
18.	किशोरी लाल घोष	कलकत्ता
19.	एम.जी. देसाई	बंबई
20.	लक्ष्मण राव कदम	झांसी
21.	मुजफ्फर अहमद	कलकत्ता
22.	फिलिप स्प्रैट	कलकत्ता
23.	पी.सी. जोशी	इलाहाबाद
24.	आर.आर. मित्रा	कलकत्ता
25.	आर.एस. निम्बकर	अजमेर
26.	एस.एच. झाबवाला	बंबई
27.	शमशुल हुदा	कलकत्ता
28.	सोहनसिंह जोश	अमृतसर
29.	एस.एस. मिराजकर	बंबई
30.	एस.वी. घाटे	बंबई
31.	शिवनाथ बनर्जी	कलकत्ता
32.	एस.ए. डांगे	बंबई
33.	शौकत उस्मानी	बंबई

जेल की कोठरियो का यातनापूर्ण जीवन, हडताल, अभियुक्तों के इन्कलाबी बयान देश के कोने-कोने में मेरठ षड्यंत्र केस की व्यापक अनुगूंज और आजादी की जंग में उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका, बचाव पक्ष में अंसारी, मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू आदि का प्रभावशाली प्रयास, दुनिया के सभी देशों में इसकी प्रतिक्रिया, आइंस्टीन जैसे वैज्ञानिकों का अभियुक्तों का पक्ष लेना, ब्रिटिश पार्लियामेंट में इसकी गूंज, उस्मानी की साइमन के खिलाफ़ ब्रिटिश चुनाव में उम्मीदवारी आदि घटनाओं का ब्यौरेवार वर्णन किया गया है।

शौकत उस्मानी को इस केस में 6 साल 3 महीने और 12 दिन (12 मार्च, 1929 से 1 जुलाई, 1935) की सज़ा भुगतनी पड़ी। कानपुर और मेरठ केस को मिला दें तो उस्मानी 10 साल 6 माह और 27 दिन की और इसमें युद्ध के समय की सज़ा, 4 साल, 4 माह और 24 दिन (14.7.1940 से 6.1.1945) और जोड़ दें तो कुल 14 साल 11 माह और 21 दिन लगभग 15 साल सीखचों में घुटन और कष्ट झेलने पड़े। इसके अलावा पेशावर से मॉस्को तक की यात्रा में उन्हें पाशविक अत्याचार भी सहन करने पड़े। लेकिन हर तकलीफ में 'इंकलाब जिन्दाबाद' ही उनका नारा था।

तेरहवें भाग के चालीस पेज वाले छः अध्यायों में मेरठ षड्यंत्र केस के वर्णन का सिलसिला है। संयुक्त प्रदेश के एम.एल.सी. धर्मवीर को छोड़कर और एक फरार के अलावा 32 अभियुक्तों में से 31 के खिलाफ केस चलाया गया। इसमें खास जोर इस बात पर था कि यूरोप में केन्द्रीय कार्यालय स्थित कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के माध्यम से ब्रिटिश शासन को समाप्त करने का षड्यंत्र रचा गया है।

सन् 1931 की 7 फरवरी को मोतीलाल नेहरू के निधन से बचाव पक्ष को क्षति हुई। इधर कुछ अंदरूनी कारणों से बचाव पक्ष का सारा दायित्त्व अभियुक्तों ने स्वयं संभाल लिया, अतः बाहर से बचाव समिति की सार्थकता जाती रही।

जेल में अभियुक्तों ने मार्च में सरदार भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को फांसी लगाने की घटना पर मातम मनाया। अदालत में घुसते ही अभियुक्तों ने नारे लगाए–'भगतसिंह जिन्दाबाद', 'सुखदेव जिन्दाबाद', 'राजगुरु जिन्दाबाद', 'गोरों का आतंक मुर्दाबाद' और 'इन्कलाब जिन्दाबाद'।

आगे इस भाग में विस्तार के साथ अभियुक्तों के राजनीतिक बयानों का उल्लेख किया गया है जो उन्होंने कटघरे में खड़े होकर दिये। इनमें राधारमण मित्रा, शमशुल हुदा, गोपाल बासक, धरणी गोस्वामी, शिवनाथ बनर्जी, गोपेन चक्रवर्ती, विश्वनाथ मुकर्जी, पी.सी. जोशी, गौरीशंकर, एम.ए. मज़ीद, केदारनाथ सहगल, सोहनसिंह जोश, फिलिप स्प्रैट, मुजफ्फर अहमद, किशोरी लाल घोष, बी.एफ. ब्रैडले, अयोध्याप्रसाद, एच.एल. हचिन्सन, एस.एच. झाबवाला, डी.आर. थेंगड़ी, शौकत उस्मानी, जी.आर. कास्ले, के.एन. जोगलेकर और जी. अधिकारी सम्मिलित हैं।

शौकत उस्मानी ने अपने बयान में कहा–'मैं मार्क्सवादी लेनिनवादी अर्थ में कम्युनिस्ट हूँ। ...कम्युनिज्म ही एकमात्र ऐसा सिद्धान्त है जो सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विषमताओं की समस्याओं का हल कर सकता है। एकमात्र वही मानव द्वारा मानव के शोषण को समाप्त कर सकता है और साम्राज्यवादी औपनिवेशिक गुलामी से आजादी दिला सकता है। ... उसने जोर देकर कहा कि वह कम्युनिस्ट था, है और आगे भी कम्युनिज्म के लिए अपने जीवन को समर्पित करता रहेगा। उस्मानी ने पूंजीवादी साम्राज्यवाद को जंगख़ोर सिद्ध किया, सांप्रदायिकता को जड़ से उखाड़ फेंकने पर जोर दिया और पूंजीवाद के विनाश की अवधारणा व्यक्त की।

उन्होंने 'पेशावर से मॉस्को' पुस्तक का लेखक होने को स्वीकारा, जिसे प्रतिबंधित कर दिया गया था। उन्होंने सोवियत यूनियन और उसके कार्यक्रम की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

चौदहवें भाग में बारह अध्याय हैं जिनमें यू.के. के आम चुनाव में अभियुक्त शौकत उस्मानी की उम्मीदवारी, मेरठ षड्यंत्र केस में सरकारी व्यय, शफ़ीक की गिरावट, शफीक के पत्र की प्रतिक्रिया, कानूनी दलीलें, केस का एकत्रीकरण, उस्मानी के विरुद्ध दलील, अलमोड़ा, अन्तर्विरोध, अलमोड़ा से स्थानांतरण, सामान्य अभिरुचि और भारत की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना के विषय में स्पष्टीकरण आदि पर चर्चा है।

ब्रिटेन के चुनाव में जौन साइमन के विरुद्ध कम्युनिस्ट प्रत्याशी के रूप मे अभियुक्त शौकत उस्मानी को सन् 1924 में स्पेनवेली निर्वाचन क्षेत्र से खड़ा किया गया था। यह उम्मीदवारी राष्ट्रव्यापी फासिस्ट तानाशाही, सुधारवादी लेबर चालबाजी और साम्राज्यवादी राउन्ड टेबल धूर्तता के विरुद्ध कम्युनिस्ट विकल्प के रूप में थी। अदालत ने अभियुक्त की चुनाव लड़ने की जमानती अर्जी रद्द कर दी। उसने चुनाव में अभियुक्त उस्मानी की उम्मीदवारी को भी षड्यंत्र का एक हिस्सा करार दिया।

सरकार की ओर से मेरठ षड्यंत्र केस में जनता से वसूल किय गये उस समय के मूल्य के 12,18,000 (बारह लाख अठारह हजार) रुपये खर्च किये गए। अघोषित या अनौपचारिक खर्चा इसके अलावा था।

शौकत उस्मानी को उस समय गहरा आघात लगा जब शफीक ने उन्हें अकात विभाग के लैटर हैड वाले कागज पर पत्र भेजा, जिसकी उन्हें बिल्कुल आशा नहीं थी। जो व्यक्ति उनका सहयात्री था और ताशकंद में स्थापित कम्युनिस्ट पार्टी का पूर्व सचिव था उसने सरकारी लैटर हैड पर पत्र कैसे भेजा, यह उसका पतन तो था ही–उस्मानी जैसे क्रांतिकारी का भी अपमान था।

सरकारी सुविधाओं का उपभोग करने या न करने को लेकर अभियुक्तों में अन्तर्विरोध पैदा हो गया था। उस्मानी उपभोग करने के विरोधी थे। लेकिन इसमें वे अल्पमत में पड़ गए। उनकी भूख हड़ताल में भी किसी ने सहयोग नहीं किया। इससे क्षुब्ध होकर वे जेल की कम्युनिस्ट कमेटी को छोड़ने को विवश हो गए। सोवियत यूनियन में बनी कम्युनिस्ट पार्टी के राय-आचार्य अन्तर्विरोधों में भी वे इसी तरह तटस्थ हो चुके थे। लेकिन उस्मानी ने कभी भारत की कम्युनिस्य पार्टी को आरोपित नहीं किया जिसे वे अपनी 'मां' मानते थे। वे गुटबाजी और कम्युनिस्ट आचरण में कमजोरी दिखाने वाले साथियों के खिलाफ़ थे।

भाग संख्या पंद्रह में भी बारह परिच्छेद हैं। इसमें मेरठ केस के उपसंहार से लेकर द्वितीय विश्वयुद्ध तक की राजनीतिक परिस्थितियों का विश्लेषण है। मेरठ केस के निर्णय में 31 अभियुक्तों में थेंगड़ी का तो निधन हो गया था। बाकी अभियुक्तों को निम्नांकित सजाएं सुनाई गईं :–

मुजफ्फर अहमद को आजीवन, जोगलेकर, डांगे, घाटे, स्प्रैट और निम्बकर को 12 साल, बैडले, मिराजकर और उस्मानी को 10 साल, सोहन सिंह जोश, अब्दुल मजीद और गोस्वामी को 7 साल, देसाई, अधिकारी, अयोध्याप्रसाद, पी.सी. जोशी को 5 साल, चक्रवर्ती, बासक, हचिन्सन, मित्रा, झाबवाला और सहगल को 4 साल, शमशुल हुदा, आल्वे, कासली, गौरी शंकर और कदम को 3 साल की सजा और के. घोष, वी. मुखर्जी और एस. बनर्जी को छोड़ दिया गया। क्योंकि उपर्युक्त सजाएँ दिए जाने वाले अभियुक्तों ने मेरठ में मजदूरों और किसानों की पार्टी बनाकर सरकार को उलटने के लिए सम्मेलन किया था। अतः इसे 'मेरठ षड्यंत्र केस' का नाम दिया गया।

आगरा जेल में शौकत उस्मानी और काकोरी षड्यंत्र केस के अभियुक्त जोगेश चटर्जी, राजू बाबू और सचीन्द्र नाथ बक्शी एक साथ हो गए। जोगेश चटर्जी वह व्यक्ति थे जिन्होंने 105 दिन भूख हड़ताल करके विश्व रिकार्ड बनाया था।

अपीलें दायर हुईं और बाद में सजाओं को घटा कर कइयो को पहले छोड़ दिया गया। जबकि शौकत उस्मानी और डांगे को सबसे लम्बी अवधि तक सज़ा भोगने के बाद मुक्ति मिली। डांगे को मई 1935 में और उस्मानी को जुलाई 1935 में छोड़ा गया।

रिहाई से कुछ दिन पहले उस्मानी के चचेरे भाई ने बताया कि बीकानेर रियासत में उनके प्रवेश पर पाबंदी अब भी जारी है जिसे सन् 1927 से लगा दिया गया था। इसलिए रिहाई के बाद खाली जेब कहाँ जाए—यह समस्या संकट बनकर सामने खड़ी हो गई। आखिर उन्होंने आगरा से अपने किसी रिश्तेदार के यहाँ अजमेर जाने का निर्णय किया।

शौकत उस्मानी ने कोई जायदाद नहीं बनाई और न ही कोई तकनीकी डिग्री हासिल की थी, इसलिए पुनर्वास अपने आप में एक क्रूर समस्या थी। किशोरावस्था के उत्तरांश में वे सोवियत यूनियन चले गये। वहाँ से आकर गिरफ्तार हो गए और तब से लगातार पुलिस वारंट लिए उनका पीछा करती रही।

बचना चाहते हुए भी ब्यावर में कांग्रेस के स्वर्ण जयंती अवसर पर उन्हें मीटिंगों में भाग लेना पड़ा। वहाँ उन्होंने राजस्थानी में भाषण दिए। इधर जयनारायण व्यास ने भी राजस्थानी में एक साप्ताहिक पत्र निकालना आरंभ कर दिया था। अजमेर में एक रेलवेमैन को किसी यूरोपीय अधिकारी ने ठोकर मार दी। इस पर फिर उन्हें सक्रिय होना पड़ा। वहाँ जब जवाहर लाल नेहरू आए और लोगों ने उनसे ट्रेड यूनियन आन्दोलन को गति देने की मांग की तो नेहरूजी ने कहा—आप इस विषय में उस्मानी से क्यों नहीं बात करते। तब लोग उस्मानी से मिले और उन्होंने उन्हें बी.बी. एंड सी.आई. रेलवेमैन का जनरल सैक्रेटरी चुन लिया। फिर कुछ समय बाद उन्हें अध्यक्ष बनाया गया, लेकिन जिसे जनरल सैक्रेटरी बनाया वह गैर राजनैतिक व्यक्ति था, अतः अधिक समय तक कोई कारगर कार्यक्रम नहीं किया जा सका।

वहाँ से उस्मानी फिर बंबई आ गये। इधर दूसरा विश्व युद्ध छिड़ गया। नाजियों ने चैकोस्लोवाकिया को परास्त किया, पोलेंड पर हमला किया, ब्रिटेन और फ्रांस ने जर्मनी के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी। हिटलर ने पोलेड को जीता और बढ़ते-बढ़ते वह कई छोटे देशों को रौंदता हुआ आगे बढ़ता गया।

भारत में अंग्रेजी हुकूमत ने वामपंथियों पर फिर दमन-चक्र चला दिया। इसी सिलसिले में 14 जुलाई, 1940 को उस्मानी को डिफेंस ऑफ इंडिया रूल (D.I.R.) मे गिरफ्तार कर लिया गया। अब फिर उन्हें घुटन भरे वातावरण को भोगना पड़ा। इसके बाद अनेक नेता गिरफ्तार होकर आगरा जेल में पहुँचाए जाने लगे। आगरा के बाद उन्हें देवली जेल में स्थानांतरित कर दिया गया। देवली में अभियुक्तों को दो दलों में विभाजित किया गया था। एक मे कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य और सहानुभूत थे तो दूसरे में क्रांतिकारी और राष्ट्रवादी। उस्मानी रिवोल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी से जुड़ गए। लेकिन जब जर्मनी ने सोवियत यूनियन पर आक्रमण किया तो अभियुक्तो में भी मतभेद उभर आए। सोवियत संघ के पक्षधर उस्मानी अल्पमत में हो गए और लगभग अलग-थलग पड गए। अब सरकार ने अभियुक्तों का दुबारा वर्गीकरण किया *जिसमें एक ग्रुप में सोवियत विरोधी तथा ब्रिटिश विरोधी अभियुक्त रखे गये* तो दूसरे में ब्रिटिश विरोधी लेकिन सोवियत पक्षधर अभियुक्तों को। जेल से जब उस्मानी ने 'मोलोतोव' को पत्र भेजा और इसकी जानकारी साथी अभियुक्तों को मिली तो वे बहुत नाराज हुए।

इस कालावधि में दो बार उन्हें भूख हड़ताल भी करनी पड़ी जिसमें एक गाँधी जी के अनशन की सहानुभूति के उद्देश्य से की गई थी। 14 जुलाई, 1940 से जेल सजा भुगतने के बाद 8 जनवरी, 1945 को शौकत उस्मानी को रिहा किया गया।

आत्मकथा का अंतिम अर्थात् सोलहवां भाग 94 पृष्ठों के पंद्रह परिच्छेदों में है जो शौकत उस्मानी की 'यह है मेरी जिन्दगी' को चरम स्थिति तक पहुँचा देता है।

जब देवली से पंजाब, यू.पी. और बिहार की विभिन्न जेलों में उलटते-पलटते उस्मानी को तपाया जाता रहा था उस समय से देश में उथल-पुथल के कारण राष्ट्रीय धड़कन तीव्रगति पकड़ने लगी थी। ज्यों-ज्यों दमन बढ़ रहा था, जन-साधारण भी उबलता जा रहा था।

सन् 1946 के फरवरी के तीसरे सप्ताह में नाविक विद्रोह की घटना ने ब्रिटिश शासन को थर्रा दिया। सितम्बर 1946 मे उस्मानी नेशनल सी अफेयर्स यूनियन बंबई के जनरल सैक्रेटरी बना दिये गये। आर.एस.पी. के सोवियत विरोधी रुख के कारण उस्मानी की उनसे भी नहीं पटी।

इसके पश्चात् देश के विभाजन के साथ भारत की आजादी की शुरुआत हुई। उस्मानी विभाजन के खिलाफ थे और स्वतन्त्र भारत को राष्ट्रकुल में रखने के भी विरुद्ध थे। इसलिए अनेक नेताओं से उनकी वैचारिक टकराहट चलती रही।

पाकिस्तान बनने के बाद भी शौकत उस्मानी देश की एकता के लिए प्रयास ते हुए प्रचारक के रूप में पाकिस्तान पहुँचे जहाँ गुलाम मौहम्मद से उनकी मुलाकात और उन्हें डिप्टी मिनिस्टर बनने के लिए कहा गया, लेकिन उस्मानी भारत की नी 'नेशनेलिटी' छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे अतः प्रस्ताव ज्यों का त्यों धरा गया।

पाकिस्तान में अपने एकता मिशन को सार्थक न होते देखकर उस्मानी को ाशा का सामना करना पड़ा। इधर-उधर भटकते रहने के बाद वे किसी साथी सहयोग लेकर 7 सितंबर, 1952 को लंदन पहुँच गए। वहाँ उन्हें भोज्य पदार्थों अनुसंधान करने की प्रेरणा प्राप्त हुई जिसके लिए उन्होंने काम करना चालू किया। दन की यह पहली यात्रा 78 दिनों की रही। इसके बाद फिर भारत लौट आए।

इसके बाद उस्मानी कुछ दुखद घटनाओं का वर्णन करते हैं जिनमें स्टालिन, ा.एन. राय और एम.पी.टी. आचार्य आदि के निधन से संबंधित हैं। इन तीनों प्रति उनके हृदय में बहुत बड़े सम्मान और आत्मीयता की भावना थी। चाहे ाचारों में मतभेद रहे हों किन्तु इसे स्वाभाविक मानते हुए भी वे उनके व्यक्तित्वों प्रभावित थे।

भारत में अनुसंधान के लिए काम करने लायक वातावरण नहीं बन सका। ीवनयापन और आवासीय सुविधा जुटाने के लिए आर्थिक स्थितियाँ भी नहीं बन ा रही थीं और न ही अध्ययन के लिए वांछित सामग्री। उधर लंदन का 'ब्रिटिश यूजियम पुस्तकालय' के उपयोग का आकर्षण इतना तीव्र हो चुका था कि वे वापिस ंदन पहुँचने को छटपटाने लगे।

उस्मानी जिस किसी प्रकार लंदन पहुँच गये जहाँ डॉ. के.डी. कामरिया ने ाम मात्र के किराए पर उन्हें आवासीय कमरा दे दिया। कुछ दिनों तक पोस्ट ऑफिस ं डाक छांटने का काम किया और कुछ पैसा बेरोजगारी भत्ते के रूप में मिलने ागा। इससे अब वे अपने शोध कार्य में जुट गये। जिसका परिणाम 'भोज्य पदार्थों के स्वास्थ्यपरक मूल्यों' शीर्षक पुस्तक के रूप में सामने आया।

लंदन मे रहते हुए वे गोवा मुक्ति आंदोलन पर डिस्पेच भेजते रहे और इस प्रकार उसे आगे बढ़ाने में सार्थक प्रयास किया। लेबर पार्टी की सदस्यता ग्रहण करके उसके मंच का भी भरपूर उपयोग करते रहे। जब 'एशियन फ्लू' ब्रिटेन में प्रवेश कर गया उस समय तक उस्मानी का शोध कार्य काफी विकसित हो चुका था जिसके आधार पर उन्होंने बहुतों को अपना चिकित्सा-पत्र देकर निमोनिया से बचा लिया।

इस प्रकार जीवन बिताते हुए उस्मानी 6 साल (1955 से 1961) तक लंदन में रहे। 'आत्मकथा' में 'ब्रिटिश म्यूजियम पुस्तकालय' के विषय में भी मार्मिक उल्लेख है।

लेखक के अनुसार 'ब्रिटेन की पहचान न तो संसद भवनों के से होती है और न ही सरकारी कार्यालयों से। उसकी पहचान प्राप्त करने

आपको गलियों, मुहल्लों में जाना होगा और आम लोगो के विशाल प्रदर्शनो में शामिल होना पड़ेगा।'

अंतिम अध्याय में शौकत उस्मानी ने अपनी जिन्दगी का सिंहावलोकन किया है। यह स्वाभाविक ही है कि परिपक्व उम्र में और एकाकी वातावरण में शानदार जीवन की भोगी हुई घटनाओं का स्मृति में से निकलकर उन्हें फिर से जीना–आत्मीयता का आनंदप्रद साक्षात्कार करना होता है और वास्तव में उद्देश्यपरक जीने की तुलना तो किसी से की भी नहीं जा सकती।

इसके अलावा उस्मानी ने इसमें एक ओर आलोचकों को आडे हाथ लिया है तो दूसरी ओर अनेक भ्रांतियों का निराकरण भी किया है। एक जगह कहा गया है कि 'हमें अव्यावहारिक आदर्शवादी तो कहा जा सकता है किन्तु 'दुस्साहसी' (Adventurist) कहना भयंकर गलती होगी, क्योंकि हमारे में न तो दुस्साहसियों में पायी जाने वाली महत्त्वाकांक्षाएं थीं और न ही स्वार्थ भावना। वह तो देश को आजाद करवाने के लिए हथियारबंद लड़ाई में अपने जीवन को सार्थक करने की अनुल्लंघनीय तमन्ना थी।

लंदन से वापिस भारत आने पर जब कम्युनिस्ट मित्रों ने शौकत उस्मानी को पार्टी में शामिल होने के लिए कहा तो उन्होंने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल होना स्वीकार कर लिया क्योंकि वे उसके सिद्धान्तों से सहमत थे।

इस देश का दुर्भाग्य था कि स्वतंत्र भारत ने उस्मानी को उपेक्षा के गर्त में फेंक दिया। जब वे कहते हैं 'आधुनिक भारत में मैं कुछ भी नहीं रह गया था, केवल भूतपूर्व भारत की प्रतिमा मात्र था', तो निराला की यह पंक्ति जबान पर आ जाती है:

बाहर मैं कर दिया गया हूँ,
भीतर पर भर दिया गया हूँ।

* * * *

यह है एक अन्तर्राष्ट्रीय और विशेषत: एक भारतीय क्रांतिकारी की आत्मकथा का सार। निधन के 18 साल से भी अधिक बीत जाने के बाद आज तक इसका प्रकाशन नहीं हो पाया। इसकी रचना को तो 28 से भी ऊपर गुजर चुका है। शौकत उस्मानी की तरह उनकी इस 'क्रांतिकथा' को पता नहीं कब तक उपेक्षित पड़े रहना होगा। हो सकता है यह कभी लोकार्पित हो ही नहीं। यह तो लग ही रहा है कि इसे उस्मानी युग का कोई भी 'आज़ादी का दीवाना' पढ़ने को बाकी न बचे।

इसमें रचनाकार के व्यक्तिगत जीवन, भारत के सर्वाधिक मार्मिक अवधि खंड और तत्कालीन विश्वभर की बहुआयामी आबोहवा में घटित वस्तुपरक घटनाओं का वर्णन, चहुँमुखी गतिविधियों का विश्लेषण जंग-ए-आजादी के दौरान भोगी गई स्वयं की, साथियों और जनसाधारण की यातनाओं का हृदयस्पर्शी उच्छवास, आलोचना और आत्मालोचना, आजादी के बाद क्रांतिकारियों की उपेक्षा का हृदयविदारक चित्रण

और अनेक विषयों का संतुलित आकलन सन्निहित है। यह न केवल आत्मनिष्ठ है, अपितु वस्तुनिष्ठ भी है। इसे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय धरोहर कहा जा सकता है।

प्रत्येक आत्मकथा अधूरी होती है। इसकी खास वजह होती है कि लेखक रचना पूरी करने के बाद भी जीवित रहता है, किन्तु वह उसे पहले ही पूरी करके छोड़ देता है। शौकत उस्मानी भी कम से कम अंतिम एक दशक की बात नहीं लिख पाए। कुछ बातें ऐसी भी होती हैं जिन्हें लेखक अपनी गरिमा के अनुकूल नहीं समझता, अत: उन्हें भोगते हुए भी पचा जाता है। उस्मानी ने न अपनी पत्नी का हवाला दिया और न ही अपने एकमात्र पुत्र का जिन्हें वे शुरू में ही छोड़कर चले गये थे। उन पर क्या बीती होगी अथवा उनकी क्या स्मृतियाँ रही होंगी—कहीं उल्लेख नहीं किया। पत्नी कब चल बसी और (इस समय 75 साल का जीवित) पुत्र किन मुसीबतों में जीता रहा आदि बातें लिखी जा सकती थीं। यहाँ उनके मनोवेगों की चर्चा करना समीचीन नहीं होगा, फिर भी जिन्दगी के एक पक्ष को बिल्कुल गायब कर देना भी ठीक नहीं प्रतीत होता।

आत्मकथा में बहुत जगह पुनरावृत्तियाँ हुई हैं और कालक्रम का चक्र कई बार पीछे घूमता दिखाई देता है। पाठक की परेशानी बढ़ जाना स्वाभाविक है। लेखक का दर्द भी बिखर कर इतना फैल गया है कि उसकी टीस मर्मस्थल पर अपेक्षित अथवा केन्द्रीभूत प्रहार करने से वंचित रह गई है।

किसी स्थान पर उस्मानी ने यह संकेत दिया है कि इस रचना के तथ्यों की जांच के लिए इसकी प्रति कहीं भेजी गई है, किन्तु उसके बाद उसका क्या हुआ इसका पता नही चला। यहाँ यह कहा जा सकता है कि इसमें वर्णित सारे वाकयात अपने आप में स्वयं सत्य प्रमाणित हैं जिनकी जाँच की कोई आवश्यकता ही नहीं मालूम होती।

आजादी के बाद उस्मानी पर से बीकानेर में प्रवेश करने का प्रतिबंध हटा लिया, तब भी वे बीकानेर में स्वेच्छा से क्यों नहीं आए इसका उन्होंने कहीं उल्लेख नहीं किया।

निस्संदेह आत्मकथा उसके नायक के अनवरत संघर्षशील व्यक्तित्व, उसकी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापकता, उसकी सुदृढ़ संकल्प शक्ति, उसकी अद्‌भुत साहित्यिक प्रतिभा एवं उसकी अनुपम सहन क्षमता को उजागर करने में सफल हुई है। यहाँ उनकी पत्रकारिता की कुशलता ने उनका भरा-पूरा साथ दिया है।

प्रस्तुत रचना अपनी अभिव्यक्ति में जहाँ संवादमय है वहाँ नाटकीय आभास भी देती है तो कहीं काव्य भाव वाले गद्य में सौंदर्य बोध की झलक भी अंग्रेजी भाषा में उस्मानी उर्दू, फारसी, पंजाबी और राजस्थानी का पुट देकर उसे इंद्रधनुषी आकर्षण दे रहे हैं तो तरह-तरह की कहावतों और मुहावरों में चुटकी भरे ... से धार को पैना कर रहे होते हैं। उद्धरणों, अदालती फैसले, पत्राचार और ... सामग्री ने इसमें अंकित तथ्यों को प्रमाणित करके यह सिद्ध कर दिया है कि

विपरीत जो कोई जहाँ कहीं कुछ कहता लिखता है वह उसका पूर्वाग्रह ही हो सकता है, यथार्थ नहीं।

आत्मकथा में लेखक ने अनेक बातों के स्पष्टीकरण दिये हैं जो सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण हैं। वास्तव में उस्मानी यह सब कुछ नहीं लिखते तो अनेक भ्रांतियों का बना रहना स्वाभाविक हो जाता और उस हालत में अनेक गलत नतीजे निकाले जाने की गुंजाइश कायम रह जाती। भ्रांतियां पैदा करने वालों का मकसद ही होता है किसी समुज्ज्वल प्रतिभा को विकृत कर देना। नायक के जीवन के प्रासंगिक विरोधाभासों को समझना तभी संभव होता है जब सारे संदर्भों के भीतर गहराई से झांककर देखा परखा जाय।

आत्मकथाओं का साहित्य भंडार भी कम समृद्ध नहीं है और वह भी हरेक भाषा में। प्रत्येक नेता, कलाकार अथवा सामाजिक कार्यकर्त्ता कभी खुद अपनी आत्मकथा लिखता है तो कभी दूसरे से लिखवाता है। आत्मकथा आत्मकथ्य के रूप में भी होती है, उपन्यास की शक्ल में भी (जिसे पहचान पाने में कुछ दिक्कत भी होती है) और अन्य विधाओं जैसे 'स्मृति अंकन या व्यंग्य अथवा मंचीय नाटक आदि के रूप में भी। इस आत्मकथा भंडार में उस्मानी की यह कृति 'जलती हुई मशाल' की तरह अपना परिचय स्वयं दे देगी।

यह इतिहास की एक ऐसी कड़ी है जिसे न तो हटाया जा सकता है और न ही अनदेखा किया जा सकता है। इसका अध्ययन किया जा सकता है और अवश्य ही किया जाना चाहिये ताकि हम विकास की शृंखला में एक कडी और बनकर उसे आगे बढ़ा सकें। किसी की आत्मकथा को दुबारा तो नहीं जिया जा सकता। जैसे इतिहास कभी दुहराया नहीं जा सकता किन्तु इससे आगे की कड़ी बन सकने की समझ हासिल की जा सकती है। उस्मानी की इस कृति से यह प्रेरणा उभरती ही है कि सर्वोच्च सार्थकता को पहचानकर उसे जीना ही समाज का अगला कदम है।

शौकत उस्मानी की इस आत्मकथा का प्रकाशन होगा कि नहीं—कहा नहीं जा सकता। यह अवश्य कहा जा सकता है कि इसका प्रकाशन किया ही जाना चाहिये ताकि अनेक गुत्थियों को सुलझाया जा सके। शीघ्रतिशीघ्र इस अंग्रेजी रचना का इसी रूप मे प्रकाशन हो, फिर हिन्दी और उर्दू अनुवाद करवाए जाकर उन्हे प्रकाशित करवाया जाना चाहिए ताकि एक जीवित क्रांतिकारी की उपेक्षा करने का जो गुनाह हो चुका है उसकी आत्मकथा की पांडुलिपि को दीमक के द्वारा खा लिए जाने का अवसर देने के गुनाह को दोहराने की नौबत का सामना न करना पडे।

* * * *

उपलब्ध पत्रों के अंश

यहाँ शौकत उस्मानी के द्वारा लिखे गये कुछ पत्रों के प्रासंगिक अंश दिए जा रहे हैं। मूल उर्दू और अंग्रेजी में हैं, जिन्हें प्रस्तुत रचना की भाषा में अंतरित किया गया है। सभी पत्र आगौज़ा होटल, 3 एम डी तल्लातपाशा स्ट्रीट, आगौज़ा–काहिरा यू.ए.आर. से भेजे गए हैं, सिर्फ दो ही ऐसे हैं जो डॉ. जी. अधिकारी (चेयरमैन कंट्रोल कमीशन), सी.पी.आई. केन्द्रीय कार्यालय, अजय भवन, कोटला मार्ग, नई दिल्ली से प्राप्त हुए हैं। वैसे उस्मानी ने सैकड़ों ही पत्र लिखे होंगे, लेकिन इनके अलावा और कोई पत्र कहीं से प्राप्त नहीं हो सका। इनमें से पाँच अपने भतीजे इफ़्तिख़ार अहमद को संबोधित, सात अपने भाई इलाहीबक्श को, दो अपने पुत्र उस्मान ग़नी को, एक भाई रियाजुद्दीन को (सभी मौहल्ला उस्तान, बीकानेर के पते पर), एक श्री एल. देवानी, मार्फत–क्वार्टर नं. 34 वाई, चित्रगुप्त रोड, नई दिल्ली, एक श्री रतनलाल बंसल को, मार्फत 'धर्मयुग' 'टाइम्स ऑफ इंडिया' बिल्डिंग, बंबई-1 और एक मैनेजिंग डाइरेक्टर 'प्रताप प्रेस' कानपुर, यू.पी. को संबोधित है। कुछ पत्रों में अपने पुत्र उस्मान गनी से पत्राचार का उल्लेख है, लेकिन उनसे संपर्क करने पर केवल दो पत्र ही प्राप्त हो सके। जो पत्र मिले उनके अंश नीचे दिए जा रहे हैं—

1. आगौज़ा होटल, काहिरा से दिनांक 26.11.1966 को अपने भतीजे इफ़्तिख़ार अहमद को संबोधित—(मूल भाषा—उर्दू)

'...यहाँ काहिरा में मेरे पास अपनी किसी रचना की कोई प्रति शेष नहीं है, कुछ रचनाओं की तो एक भी प्रति नहीं रख सका। भारत में मेरे किसी दोस्त के पास होगी तो मैं तुम्हारे लिए उपलब्ध कराने का भरसक प्रयत्न करूँगा। मेरी कुछ पुस्तकें मेरे प्रिय भाई और तुम्हारे पिताजी के पास थीं, संभवतः तुमने उन्हें देखा होगा?

'यहाँ मैं बंबई के 'फ्री प्रेस जर्नल' के प्रतिनिधि के रूप में पत्रकारिता का काम कर रहा हूँ। इस पत्र में यदा-कदा मेरे द्वारा प्रेषित पत्र प्रकाशित होते रहते हैं।'

2. आगौज़ा होटल, काहिरा से दिनांक 26.11.1966 को अपने भाई इलाहीबक्श को संबोधित—(मूल भाषा—उर्दू)

'...ख़त आपका मिला। यह सुन कर कि आपको अपनी (बाबत . शिकायत है, अफ़सोस हुआ।

'इलायची का इस्तेमाल रखें और अजवायन उबाल कर पीठ पर मलें। सेव दस्तयाब हो सके तो उसका इस्तेमाल जरूरी है।'

'और सबसे जरूरी चीज बदन की हड्डियों के लिए करमकल्ला पका हुआ या कच्चा निहायत मुफीद है।'

'...मुझे अपने भतीजे इफ़्तिखार अहमद की अंग्रेजी बहुत पंसद आयी और आपको तीसरे फर्जंद के बारे में मुबारकबाद है। मुझे अपने होनहार भतीजे पर फख़ है।'

'...उस्मान ग़नी की माँ और उस्मान ग़नी को सलामोदुआ।'

3. आगौज़ा होटल काहिरा से (तारीख अंकित नहीं) मैनेजिंग डाइरेक्टर 'प्रताप प्रेस', कानपुर, उत्तरप्रदेश को संबोधित—(मूल भाषा—अंग्रेजी)

प्रिय महोदय,

गणेश शंकर विद्यार्थी, बालकृष्ण शर्मा और हरिशंकर विद्यार्थी—ये तीन नाम उन व्यक्तियों के हैं जिन्हें कानपुर कभी नहीं भूल सकता।

और गणेश शंकर विद्यार्थी तो ऐसे पहले व्यक्ति थे जो सांप्रदायिकता से बहुत ऊपर उठे हुए और किसी भी जाति के विरुद्ध पूर्वाग्रहों से ग्रस्त कतई नहीं थे जबकि सारा देश सांप्रदायिकता की आग में सुलग रहा था। वे हर उस व्यक्ति को शरण देते थे जो भारत की आज़ादी के लिए समर्पित था। मैं उनसे सन् 1922 की बसंत मे मिला था और उन्होने मुझे फरार सेनानी की सर्वोत्तम सुविधा दी थी और जब मैं (9.5.1923 से 26.8.1927) चार साल से अधिक की जेल सजा काट कर वापिस आया, तब भी मैंने पाया कि खतरनाक क्रांतिकारियों की सहायता करने की वजह से अत्यंत संकटों का शिकार होते हुए भी देश के क्रांतिकारियों के लिए सुरक्षित ठहरने का मुख्य स्थान उन्हीं के यहाँ होता था। विदेशी शासको के हाथों उनको अमानुषिक मारपीट मिलती रही और देशवासियों ने भी उपेक्षा ही की, लेकिन वे नहीं झुके।

वे गणेश शंकर विद्यार्थी ही थे जिन्होंने मेरी रिहाई के बाद मुझे मेरी सोवियत संघ की यात्राओं का इतिहास लिखने को कहा था जिसमें उन भारतीय मुहाजिरीनों के पहले दल का विवरण हो, जिसने सोवियत संघ में प्रवेश करके सन् 1920 में लाल फौज के साथ मिल कर लड़ाई लड़ी थी।

और उन्होने मेरे द्वारा लिखित उस विवरण को 'रूस यात्रा' शीर्षक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया था। खेद है कि हमारे देशवासियों ने रूसी क्रांति पर तत्कालीन चर्चा करते समय इस पुस्तक का उपयोग नहीं किया और निर्ममता से तथ्यों को झुठलाते रहे हैं। इसका सबसे ताज़ा उदाहरण बंबई से निकलने वाला 'धर्मयुग' है जिसने तुर्कमानियों के खिलाफ लड़नेवाले मुहाजिरीनों की भूमिका के बारे में पूरी

तरह झूठी तस्वीर पेश की है। श्री रतनलाल बंसल ने उसमें जो कुछ लिखा है—वैसा तो हमारे स्वतंत्रता संग्राम के प्रारंभिक इतिहास की थोड़ी सी जानकारी रखनेवाला भी नहीं लिखता। मैं यहाँ 'धर्मयुग' के दिनांक 12.11.1967 के अंक में प्रकाशित उसके निबंध के बारे में चर्चा कर रहा हूँ।

'रूस यात्रा' के प्रकाशक पर निर्भर करता है कि वह श्री बंसल को उसकी ग़लतबयानी का एहसास करवाए। हमारे दल में कोई हिन्दू नहीं था—यदि कोई होता तो हमारा वह प्रिय साथी होता। मुझे यह समझ मे नहीं आता कि राय ऐसे किस शहीद यात्री से कब मिला जिसने भारत से तुर्कमेनिस्तान का सफर किया और जिसको उसने उसके लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अवसर प्रदान नहीं किया। हमें न तो ताशकंद में और न ही मॉस्को में ऐसे किसी के बारे में जानकारी मिली। यदि सन् 1922 के बाद की कोई घटना है जब हम सब सोवियत संघ से बाहर थे—कुछ भारत की जेलों में थे और दूसरे सन् 1923 के आरंभ में ट्रायल का सामना करने की तैयारी कर रहे थे। इसलिए मेरा अनुरोध है कि आप 'रूस यात्रा' में वर्णित तुर्कमेनियों द्वारा हमें पकड़े जाने और उसके आगे की 'केरकी' फ्रंट पर लड़ने की घटना की रोशनी में अपने किसी 'कॉलम' में बंसल को माकूल जवाब दे दें।

आखिर में मेरा निवेदन है कि 'रूस यात्रा' की एक प्रति मेरे पुत्र मिस्टर उस्मान ग़नी, मौहल्ला उस्तान, इमामबाड़ा के सामने, बीकानेर (राजस्थान) को भेज कर अनुग्रहीत करें।

कानपुर में 'प्रताप प्रेस' के मेरे सभी नये पुराने दोस्तों का अभिवादन।

सधन्यवाद।

आपका विश्वसनीय
शौकत उस्मानी

4. आगौज़ा होटल, काहिरा से दिनांक 1.12.1967 को श्री एल. देवानी, क्वार्टर नं. 34, वाई, चित्रगुप्त रोड, नई दिल्ली को अंग्रेजी में लिखित पत्र—

प्रिय श्री एल. देवानी,

काफ़ी अर्से से तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला। मुझे उम्मीद है तुम्हारी तन्दुरुस्ती बिल्कुल बढ़िया होगी, और हर तरह से बखूबी अपना काम अंजाम दे रहे होंगे।

यदि लंदन में चौधरी को फ़ाइल नहीं भेजी हो, तो मेरा निवेदन है कि अब हमें अपना वायदा पूरा कर लेना चाहिए। वह इसके लिए इंतज़ार कर रहा होगा और निस्संदेह मुझसे नाराज़ हो रहा होगा।

यहाँ इस पत्र के साथ संलग्न एक और पत्र श्री रतनलाल बंसल को संबोधित कर भेजा जा रहा है जिसने अपनी कल्पना के घोड़े सोवियत संघ तक दौड़ाए हैं। कृपया उसके निबंध को 'धर्मयुग' के दिनांक 12.11.1967 के अंक में पढ़

श्रम करें और इस संबंध में आवश्यक कदम उठाएं क्योंकि आप हमारी यात्रा की पूरी जानकारी रखते हैं कि हमारे साथ क्या बीती। मुझे आशा है कि आप उसे माकूल जवाब दे देंगे।

धन्यवाद।

आपका विश्वसनीय
शौकत उस्मानी

5. उपर्युक्त पत्र के साथ अंग्रेजी में लिखित संलग्न पत्र दिनांक 30.11.1967 को श्री रतनलाल बंसल के नाम मार्फत 'धर्मयुग'—'टाइम्स ऑफ इंडिया' बिल्डिंग बंबई-1

प्रिय महोदय,

मैंने बंबई से निकलने वाले सम्मानित पत्र 'धर्मयुग' के दिनांक 12.11.67 के अंक में प्रकाशित आपके लेख 'ताशकंद में भारतीय क्रांतिकारियों की छावनी और ब्रिटिश गुप्तचर' को पढ़ा

अगर आपने मुहाजिरों के खुद के द्वारा (दुर्भाग्यवश जिनमें बहुत से अब पाकिस्तान में हैं) लिखित विवरणों को और मेरी तीन पुस्तकों-'रूस यात्रा' (प्रताप प्रेस, कानपुर से प्रकाशित), 'पेशावर से मॉस्को', या अभी सन् 1962 और 1964 में 'भारत ज्योति' में प्रकाशित मेरे ताज़ा निबंध या मेरी पुस्तिका 'आई मैट स्टालिन ट्वाइस' और अभी के हाल के 'मेनस्ट्रीम' (नई दिल्ली) में किश्तवार निकले लेखों—'रशियन रिवोल्यूशन एंड इंडिया' को पढ़ लिया होता तो मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि आप निराधार तथ्यों को लेकर नहीं लिखते। वस्तुतः हमारे साथ कोई हिन्दू नहीं था, यदि सौभाग्यवश कोई ऐसा साथी हमारे बीच में होता तो हम उसको भरपूर सम्मान देते। दो सालों तक हमारे वहाँ रहने की अवधि में हमें कभी ऐसे शहीद के बारे में जानकारी नहीं मिली जो इसलिए मर गया हो कि जिसके साथ रॉय ने दुर्व्यवहार किया हो क्योंकि वह रूसी नेताओं से मिलकर उन्हें किसी भारतीय नेता का संदेश देना चाहता था।

आप जैसे महानुभाव को मेरी सलाह है कि आप बंबई के किसी विक्रेता या व्यक्ति से मेरी पुस्तिका 'आई मैट स्टालिन ट्वाइस' (मै स्टालिन से दो बार मिला) प्राप्त करें अथवा 1 जुलाई से 5 अगस्त के नई दिल्ली से प्रकाशित 'मेनस्ट्रीम' के अंकों में प्रकाशित मेरी किश्तवार रचनाओं को पढ लें। इनसे प्रतिक्रांतिकारियों के विरुद्ध हमारी लड़ाई और हम सन् 1920 में सोवियत सीमा मे दाखिल होते ही तुर्कमानी प्रतिक्रांतिकारियों की गिरफ्त में कैसे फंसे के बारे में आपके सामने एक बिल्कुल साफ तस्वीर दिखाई देने लगेगी। स्टालिन पर मेरी उपर्युक्त पुस्तिका के प्रकाशक का पता इस प्रकार है—

मिस्टर के.के. कूरियन,
वासवानी मैंशन,
दिनशा वाचा रोड, बंबई-1
(यह पता उस जगह का है जो चर्चगेट रिक्लेमेशन एरिया में है और मिस्टर कूरियन वहाँ किसी विज्ञापन सेवा में कार्यरत हैं।)

ससम्मान और व्यापक चिंतन के साथ

भवदीय
शौकत उस्मानी

6. आग़ौज़ा, काहिरा से दिनांक 26.9.1971 को भतीजे इफ़्तिख़ार अहमद को संबोधित–(भाषा–अंग्रेजी)

यह जानकर बहुत ख़ुशी हुई कि मेरी पौत्रि-भतीजियों (भतीजों अल्लादीन और अल्लाबख़्श की पुत्रियों) की शादियाँ हो रही हैं।

मुझे ऐसे शुभ अवसर पर वहाँ उपस्थित होने पर अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव होता, किन्तु केवल दूरी का ही प्रश्न नहीं है, इसके अलावा कुछ ऐसी विषम परिस्थितियों में जी रहा हूँ जो मुझे रोक रही हैं अर्थात् मैं युद्ध प्रखंड क्षेत्र में रह रहा हूँ जहाँ से हिल सकना भी बहुत मुश्किल है।

...मैं बच्चियों के लिए जीवन भर सुखसमृद्धि की कामना करता हूँ। ...मेरी ओर से दूल्हों को बधाई और उन्हें कहना कि मैं उनके लिए और अपनी बच्चियों के लिए बेहतर भविष्य की कामना करता रहूँगा...।

तुम्हारा प्रिय चाचा
शौकत उस्मानी

7. आग़ौज़ा, काहिरा से दिनांक 12.5.73 को अपने सुपुत्र उस्मान ग़नी को संबोधित— (उर्दू में)

'बर्ख़ुरदार उस्मान ग़नी, सलामत रहो!

मेरा पिछला ख़त कुछ सख़्त था। ...ख़ैर मगर ये बातें ग़ौर से पढ़ो। 1940 की कैद से पेशतर के वाक़यात लिखूंगा। उनके बारे में फ़क़त रफ़ीक़ अहमद का एक फ़िक़रा लिखूंगा—"हिन्दुस्तान की तहरीक में जो अव्वल रोल तुमने प्ले किया और सब भाइयों ने जो तुम्हारी क़द्र की इससे बख़ूबी वाक़िफ़ हैं।" ख़त की तारीख़ 11-11-67। इससे ज्यादा नहीं लिखूंगा।

अब 1940 के बाद के वाक़यात सुनो। 1941 में जब सोवियत यूनियन जंग में दाख़िल हुआ, और लोगों ने अपनी पालिसी तब्दील की तो मैं सोवियत का हामी होते हुए भी हिन्दुस्तान की तहरीके आज़ादी से न हटा और देवली कैम्प के क़ौम परस्त कैदियों में इज़्ज़त बढ़ गई।

चन्द लोगों को मेरा इक़्तेदार पसन्द नहीं आया। मेरी बढ़ती हुई इज़्ज़त

देखकर चन्द लोगों को मेरे पास भेजा और कहा कि तुम अब फलां पार्टी में दाखिल हो जाओ तो हम सब तुम्हारी इज़्ज़त करेंगे। मैंने इन्कार कर दिया, मगर जब चन्द दिनों बाद उस फलां पार्टी के कुछ सिख मेंबर टूट गए तो बतलाया कि तुमने अच्छा *किया के दरख़्वास्त नहीं दी वर्ना दरख़्वास्त रद्द करके तुमको अपने कौमपरस्त साथियों* में बदनाम किया जाता। मैंने कहा क्या इनका खून इतना सफेद है तो जवाब दिया कि ऐसा ही है।

ख़ैर अब एकदम इंग्लैंड का ज़िक्र सुनो। हालांकि हिन्दुस्तान में और भी ऐसे मौके आए कि फलां पार्टी ने न फ़क़त मुझे गुमराने की बल्कि ज़हर देने की कोशिश भी की किस्मत अच्छी थी बच गया। यह 1954 का ज़िक्र है।

1955 के बाद इंग्लैंड में गोवा के बारे में आन्दोलन शुरू हुआ। इस तहरीक में पार्लियामेंट के मैम्बर भी शामिल थे, उन्होंने मेरा तआवुन हासिल किया। मेरे मज़ामिन इंग्लैंड के अखबारों में गोवा की हिमायत में निकले...।

मैं 1961 में आ गया न रहने को जगह मिली न काम, लाहौर में एक नौकरी गन्दे मुहल्ले में मिली।

मिस्र के मेरे जो मजामिन हिन्दुस्तान के अखबारों में निकले अरब और मुस्लिन इसतराकी मुल्कों में इनक़ी बहुत *क़द्र हुई। 18.5.1960 का एक मजमून अरबों को* और खासतौर से मिस्रियों को इतना पसन्द आया ...जिसका उनवान में 1969 से 1972 में आज ढूंढ़े से नहीं मिलता...।

जब मैं 1964 तक हिन्दुस्तान में फ़क़ीरी, गरीबी की जिन्दगी बसर कर रहा था तो सबको मालूम है कि किसी ने मेरी मदद न की।

...उस्मान गनी, अगर तुम किसी के बहकाने में, बरगलाने में खुद या अपनी मां को लेकर मुझे लेने के लिए मिस्र आ गए तो मैं उस दिन लंदन *भाग जाऊँगा* और किसी की न सुनूंगा। तुम्हारी मुहब्बत की कसम मैं तुमसे इतना प्यार करता हूँ, इतना ही प्यार करता हूँ जितना एक बाप को अपने बेटे से करना चाहिए...।

तुम मेरी गाड़ी मत चलाओ मेरी बागडोर मेरे ऊपर रहने दो। किसी पार्टी के समझाने बुझाने पर मुझसे ख़तो किताबत न करो, मेरा पता गैरजरूरी ...।

...फ़र्ज करो उस वक्त किसी तरह भी मुझको सियासी पेंशन मिल जाय और *मैं लिख दूं कि उस्मान गनी को दे दो तो बतलाओ तुम्हारा नुकसान है कि फायदा।* अब इसके बाद जब तुम मुझको ख़त लिखो तो एक बात तो ये है कि तुम मुझको हिन्दी का दोहा न लिखो और साफ खत लिखो। सिवा दुआ सलाम और ख़ैरियत के मैं तुमसे और कुछ सुनना नहीं चाहता। मेरी तरफ से सियासी मैदान में तुम खुदमुख़तारी सोच कर कदम नहीं रखोगे तो फिर तुम जानो तुम्हारा काम। मेरी दुआ शामिले हाल है। सलाम दुआ तुम्हारे साथी खुर्शीद अहमद को सलाम!

तुम्हारा दुआगो बाप
शौकत उस्मानी

8. आग़ौज़ा काहिरा दिनांक 9.6.1973 को चचेरे भाई इलाहीबक्श उस्ता, आर्टिस्ट को संबोधित–(भाषा-उर्दू)

'...मेरे दूसरा कोई भाई नहीं और मैंने इलाहीबक्श को हमेशा ही अपना हकीकी भाई समझा। जी चाहता है कि मुफ़स्सल हाल सुनूं। तबियत कैसी है तो सेहत कैसी है। बाल-बच्चे सब खुशी खुर्रम हैं–यही बातें हैं जो जानना चाहता हूं।

'न जाने क्यूं जब से 1920 में हिन्दुस्तान से हिजरत की थी फिर मुल्क में मेरे पांव नहीं पड़े। वतन किसको प्यारा नहीं मगर रिज़्क जहां का होता है वहीं इन्सान को ले जाता है। बाम्बे का नुमाइन्दा बनकर 1964 में आया था। यकायक 1967 के बाद अख़बार की पालिसी खिलाफ़े अरब बदल गयी और मैं बेकाम हो गया। पहले फिलिस्तीनी पर्चे की एडीटरी में शामिल हुआ अब जब वो ... बंद हुआ तो मैं 'इज़िपशियन गज़ट' में 'सब एडिटर' हो गया। मगर काम चाढ़े चार या पांच बजे से शुरू हो कर रात को 2 बजे खतम होता था तो सेहत खराब हो गई। काम छोड दिया। ...अब मैं दूसरे दफ्तर में अंग्रेजी के ...मैगज़ीन में ...मैं अरबी से तर्जुमा की हुई अंग्रेजी को सुधारता हूं। या ये कहिये कि असली अंग्रेजी में ढालता हूं।'...

आपका खैरन्देश भाई
शौकत उस्मानी

9. आग़ौज़ा, काहिरा से दिनांक 26.2.1974 को अंग्रेजी में भतीजे इफ्तिखार अहमद को संबोधित—

'...व्यक्तिगत रूप से इस बारे में मैं कुछ भी नहीं कर सकूंगा, कारण कि सिर्फ़ पिछले सप्ताह में ही मैं अस्पताल से बाहर आ सका हूं। मुझे आश्चर्य है कि तुम्हें यह भी नहीं मालूम कि 20 सितम्बर 1973 से मैं दो अस्पतालों में भर्ती चलता रहा था, क्योंकि अपने निवास के स्नानघर में दुर्घटनाग्रस्त होने से मेरे सर पर चोट लग गई थी। यद्यपि मैंने 'फूड रैमेडीज़' पर पुस्तक लिखी है, लेकिन उसमें किसी दुर्घटना के लिए कोई नुस्खा नहीं है।'

'और इस दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटना की वजह से काफ़ी खून बहा और मुझे अनेक शारीरिक कष्टों का शिकार होना पड़ा तथा मैं इतना असहाय हो गया था कि बाज़ार तक जा कर उन चीजों को ला सकूं जो मुझे स्वस्थ कर सकें।'

'...जैसा कि मैंने तुम्हें ऊपर बताया कि मैं अभी-अभी अस्पताल से छूट कर आया हूं और फोटो खिंचवाने में असमर्थ हूं और यह भी कि मैं इतना दुबला पतला हो गया हूं कि आईने में खुद के चेहरे को भी नहीं पहचान पा रहा हूं।

घनिष्ट स्नेह के साथ।

तुम्हारा प्रिय
शौकत

10. आग़ौज़ा, काहिरा से दिनांक 21.7.1973 को उर्दू में अपने चचेरे भाई इलाहीबक्श उस्ता को संबोधित—

'आपका खत बामय बच्चों की तहरीरों के पढ़ कर अजहद खुशी हुई। इतनी साफ और सुथरी हिन्दी एक आर्टिस्ट खानदान ही लिख सकता है। पढ़ने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं हुई, वरना हिन्दुस्तान से ऐसे खत भी आते हैं जिनकी हिन्दी पढ़ने से सर चकराता है। एक-एक लफ़्ज़ पर ठहरना पड़ता है।

'ये सुनकर अजहद मस्सरत हुई कि आपका सब खानदान अच्छी तरह है। मेरी नेक तमन्नाएं मेरे भाई भतीजे भतीजियों और उन सबके बच्चों के साथ हैं।'

'...और क्या लिखूँ—अफसोस कि मिस्र से कोई चीज दूसरे मुल्क की बनी हुई नहीं खरीदी जा सकती है और न ही भेजी जा सकती है।'

'...अपनी सेहत का खास खयाल रखियेगा। जब भी मौका मिले संतरे नारंगी का जरूर इस्तेमाल रखें और नीबू का भी बराबर इस्तैमाल करते रहें। जब भी वतन वापस आना होगा, आपको पहले इत्तला कर दूँगा।'

आपका दुआगो बिरादर
शौकत उस्मानी

11. आग़ौज़ा, काहिरा से दिनांक 30.3.74 को अपने भाई रियाज़ुद्दीन को संबोधित उर्दू में—

'...सवालात जो तुमने किये मौजू हैं। गो मैंने अपनी सवानेहयात इन चीजो पर लिखना मुनासिब नहीं समझा, मगर चूंकि तुम खुलूस से ये पूछ रहे हो तो मैं जवाब लिख रहा हूँ। ...जवाब सिलसिलेवार ये हैं—

'खिलाफत की तहरीर जोरों पर थी, मुसलमान अंग्रेजों के लिए ज़िहाद के लिए उबल रहे थे। मैं भी तो अखबार पढ़ता था। बिला कांग्रेस खिलाफत पोस्टर पैम्पलेट मंगाकर फैलाता था कि जब अप्रैल 1920 में अहरार की वापसी वतन में हुई और ओलोमा ने बजरूरत का फतवा दिया तो...36000 के लगभग हिज़रत करने गए। खानदान की मुहब्बत को कुर्बान कर दिया।'

'दो बार बीकानेर आना हुआ है। महज एक बार छुप कर आया था दूसरी बार नागौर से।...

'मेरी सेहत अब सुधर रही है तुम्हारा शुक्रिया अभी तक काम ज्यादा करना मुनासिब नहीं है...।'

तुम्हारा दुआगो भाई
शौकत उस्मानी

'सोवियत यूनियन में ...मैं तो वहाँ एक तालिबे इल्म था। यहाँ कॉमरेड लेनिन को कई बार देखने का मौका हासिल हुआ। सब लंदन के अखबारों में छप चुका है।'

12. ले. कर्नल सतानन्द (रिटायर्ड) प्रेमग्राम आनन्द फार्म, पोस्ट पटपड़गंज, दिल्ली से दिनांक 10.4.1975 को भाई इलाहीबख्श को संबोधित उर्दू में—

'सलामत रहें। मैं आपके रंज में शरीक हूँ। मरहुमा हम दोनों की रिश्तेदार थीं। किस्मत से एक ओर रिश्ता भी बांधा था। ...इज़हार नामुमकिन है। वाकयाते जिन्दगी ऐसे रहे कि मैं किसी भी हम जिन्स का साथ न दे सका। मरहुमा पर गुस्से की बजाय मुझे रहम आता था। एक ऐसे शख्स से उसने रिश्ता बांधा जो अपना जीवन त्याग चुका था।'

'मरनेवाली में बहुत सी खूबियां थीं। साबरा थी, शिकायत भूल कर भी लब पे न लाती थी।'

'हाँ, 1935 के बाद जिन्दगी का साथी ...तालीम दे कर बनाने की कोशिश की मगर पानी सर पर से फिर चुका था। वो पढ़ने लिखने के अहल न थी और मैं सियासत से दरगुज़र न कर सका। अपने दोस्तों और रिश्तेदारों को एक ही मशविरा दूंगा कि शादी रजामन्दी बगैर न करें। तेरा बेटा मेरी बेटी कबूल है ये दोस्तों के दरम्यान की बातचीत–लड़के और लड़की दोनों के लिए हसर साबित होती है। मौहल्ले में मैंने देखा था जितने नाते हुए मियां बीवी दोनों खुश रहते थे। मतलब यह कि लव मैरिज होती थी।'

'भाई इलाहीबख्श भाई क्या कहूँ मरहुमा की याद उसकी मजबूरियां मुद्दत तक याद रहेगी। ...आप और सब हमारे अजीजो अकारिब सब्र करें।'

आपका वफ़ासाआर भाई
शौकत अली

13. ले. कर्नल सतानन्द (रिटायर्ड), प्रेमग्राम आनन्द फार्म, पोस्ट-पटपड़गंज, दिल्ली-110051 से दिनांक 24.4.1975 को भतीजे इख्तियार अहमद को संबोधित उर्दू में—

'...जब तीसरी बार जेल काट मैं रिहा हुआ तो बहुत सी क्रांतिकारी पार्टियों ने मुझे अपने में मिलाने की कोशिश की। जिनमें आर.एस.पी. और आर.सी.पी.आई. के अलावा और पुरानी बंगाली पार्टी के मेम्बर भी थे। मैंने उन सब पार्टियों से ताआवुन किया जो अंग्रेजों के खिलाफ लड़ रही थीं। उस जमाने के बंगाल के बहुत से मशहूर इन्कलाबियों से मुलाकात हुई और उनके साथ काम करता रहा। मगर जब आर.एस.पी. ने मुझे पाकिस्तान भेज दिया तो वापसी पर आर.एस.पी. में शामिल हो गया और इस पार्टी का मेंबर था क्योंकि हिन्दुस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी जंग के वक्त का नारा देकर अंग्रेजों का साथ दे रही थी पर उनसे कोई समझौता नहीं हो सका। अब मेरा सब पार्टियों से दोस्ताना है। मगर अभी मैं इस हालत में नहीं हूँ कि सरगर्म सियासी काम करूं। सी.पी.आई. के टॉप लीडर से भी अच्छे ताआल्लुकात हैं। मुझे देहली के एयरपोर्ट पर लेने आये थे। अच्छे लोग हैं। बंगाल से मुझे दो मर्तबा मिलने

थे और अब फिर भी आयेंगे। ...सावन भादौं में बीकानेर आने का प्रोग्राम बना रहा हूँ, जब तय करूँगा तो तुम्हारे भाई उस्मान ग़नी को लिख दूंगा। वो सबको इत्तला कर देगा। सबको घर पै सलाम। तुमको बहुत-बहुत दुआ।

तुम्हारा अंकल
शौकत अली

14. ले. कर्नल सतानन्द (रिटायर्ड), प्रेमधाम, आनन्द फार्म, पोस्ट-पटपड़गंज, दिल्ली-110057 से दिनांक 3.5.76 को इलाहीबख़्श को उर्दू में—

'...मुबारकबाद सदहज़ार मुबारकबाद। मुझे किस कदर खुशी होती कि मैं अपने प्यारे भतीजे की शादी में आ सकता। मगर जो कुछ मैने मेरे अजीज भतीजे इफ्तिखार को लिखा है हरुफ ब हरुफ सच है। मेरी तन्दुरुस्ती ठीक नहीं है व गर्मी बरदाश्त नहीं होती। ...मैं माफी का तालिब हूँ और उम्मीद है कि सब खानदान खुश हो कर कह देगे कि कोई हर्ज नहीं है। अपनी सेहत को सुधारिये। मेरे दिमाग में बीकानेर का सफर बहुत अरसे से मंडरा रहा है और मैं जरूर आऊँगा। मगर अभी तो हर तरह से नामुमकिन है।

माफी का ख़्वास्तगार भाई
शौकत अली उस्मानी

15. ले.कर्नल सतानन्द (रिटायर्ड), प्रेमधाम-आनन्द फार्म, पोस्ट-पटपड़गंज, दिल्ली-110051 से दिनांक 6.8.76 को अपने भाई इलाहीबक्श को उर्दू में संबोधित—

1. '...मैं बीकानेर तीन रोज के लिए आना चाहता हूँ।'
2. '...मौहल्ले के मकान में रहना मुश्किल होगा।'
3. '...या तो मैं निजी तौर पर किसी अच्छे होटल मे आकर उतरूंगा या...'
4. 'अगर कोई पोलिटिकल पार्टी बुलाती है तो उनको मेरे रहने का अच्छा बन्दोबस्त करना होगा।'
5. '...लंच के बाद रिहायश पर आराम न कर लूं तो मेरी तबियत ठीक नहीं रहती या लंच बिल्कुल ही न करूँगा।'
6. 'पैदल चलना फिरना ज्यादा से ज्यादा चौथाई किलोमीटर तक मुमकिन है वर्ना सवारी की जरूरत पड़ेगी। मैं बीकानेर में आने का फैसला सितम्बर महीने का ही कर सकता हूँ।

'... *क्या अब भी बीकानेर की सब पोलिटिकल पार्टियां मेरे वतन (बीकानेर)* में आना अच्छा समझेंगी? क्या वो यह बात मुझे ऊपर लिखे हुए पते पर लिख कर भेजेंगी। मै शुक्रिया अदा करूँगा।...'

आपका फ़कत भाई
शौकत उस्मानी

इसी पत्र के पीछे के भाग में अंग्रेजी में जो कुछ लिखा है वह यह—

Dear Brother,

After the January of 1922 it will be first time I will be visiting Bikaner. My entry was also banned by the Bikaner Maharajas till they ruled. Usman Ghani has asked me as to how I escaped with the ring of police and military surrounding my escape route on my secret visit to Bikaner in 1922. In simple words, I escaped in the guise of a cobbler with a sack of old shoes on my shoulder and a frightfully dirty kurta, short (upto knees) dhoti and a rag on head. I escaped to Bhatinda. Now please, apprise the political friends there: 1. I do not want any demonstration on my visit. I will come as an ordinary citizen and meet them. Either I can write to a hotel for my accommodation (suggestions are requested) or they should help me in finding out modern accommodation quite hygienic. I propose to come home by September, 2. As this Farm, where I am living is going to be taken over by the Delhi Administration, I can come to Bikaner only after I get some suitable accommodation in Delhi. I hope it will be done before long. I am once more with the C.P.I

With best regards and thanks. Nameste to all friends.

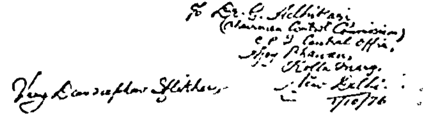
Yours fraternally
Shoukat Usmani

16. सी.पी.आई. केन्द्रीय कार्यालय, अजय भवन, 15 कोटला मार्ग, नई दिल्ली से दिनांक 8.10.1976 को अपने पुत्र उस्मान गनी को उर्दू में लिखे पत्र में मुख्यतया मेरठ केस के संबंध में नीचे लिखे दो बिन्दुओं की तरफ संकेत किया है—

1. 'मेरठ षड्यंत्र केस के तहत दी गई सज़ा के खिलाफ़ मैंने कोई अपील नहीं की।'

2. 'हम क्रांतिकारी यदि किसी से कुछ उधार लेते भी है तो हमेशा उसे वापिस चुकाते है।'

शौकत उस्मानी


To Dr. G. Adhikari
(Chairman Control Commission)
C.P.I. Central Office,
Ajoy Bhavan,
Kotla Marg.
New Delhi.
7/10/76

Very Dear comrade Adhikari,

Thanks for organising a nice programme in our Mohalla. Please, convey my best regards to all in our Mohalla & love to children.

People are generally surprised that when convicted to Ten (10) years Rigorous Imprisonment, I did not appeal.

As I have mentioned this in my life story & other writings I did not appeal:

(a) I did not want to beg to the British Government that they should show me any kindness & reduce my sentence.

(b) Even when the Meerut Prisoners' Defence Committee sent a Vakil to me in Agra jail to persuade me to appeal I refused. Then Comrade V.H. Joshi came & I again refused.

(c) As for our defence during the Meerut Conspiracy Case there was a Defence Committee with Pandit Motilal ji Nehru (father of Pt. Jawahar Lal ji) as Chairman (President) of this Committee & Dr. Ansari as General Secretary. Most of the money came from foreign countries & especially from the Meerut Prisoners' Defence Committee in London. Nobody's relative gave anything; on the contrary the general public looked upon the relatives of the Meerut Prisoners sympathetically & helped them in their difficulties if they accepted their help.

Now to come to myself: Chief Justice Sulaiman of the Allahabad High Court said in his judgment: "Although Shaukat Usmani has not appealed I regard his case at par with S.A. Dange & Muzaffar Ahmed".

Now, I should thank you once more & tell you as my nephew and [illegible] that it will not be possible for me to come to Bikaner so soon. But Bikaner & Mohalla [illegible] will remain always in my mind.

Jai Hind.

Yours, loving uncle

Shaukat Usmani

18. कॉ. आर.सी. शर्मा, एम.एस.सी., के.डी. 40-ए, अशोक विहार, दिल्ली-110052 से दिनांक 6.12.1976 को भाई इलाहीबक्श को उर्दू में—

'देहली छोड़ कर बंबई में जा रहना ग़ैर मुमकिन है, क्योंकि रिहायश का बन्दोबस्त होना ना मुमकिन है। जयपुर की कम्युनिस्ट ब्रांच वहाँ बुलाना चाहती है मगर मैं इस मंजिल में हूँ कि मुझे इकराम की जरूरत है और जयपुर में दौड़-धूप करनी पड़ेगी। वैसे सिवाय बीकानेर, अजमेर व ब्यावर के राजस्थान में बहुत कम लोग मेरे माझी से वाकिफ़ हैं। देहली में ...ख़ातिरख़्वाह इन्तजाम हो गया है। फ़िक्र की जरूरत नहीं है।'

'मौहल्ले में सबको यह बता दिया जाये कि मेरा मुल्की एम.पी. या राजस्थान के एम.एल.ए. से दोस्ताना नहीं है। लिहाजा यह बात ज़हन में रहे कि मैं किसी के काम नहीं आ सकता। फक्त इतना ही लिखना काफी है।'

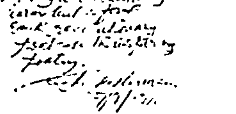
'शायद मैं फिर बीकानेर कभी आऊँ मगर मौहल्ले में कोई मीटिंग न की जाये। वैसे मिलूँगा सबसे। यह जब होगा मैं बीकानेर आऊँ। ...मुझको भी पता नहीं है और क्या लिखूँ। मेरी किताब इस महीने में छप जायगी। मुझे फक़त छः कापियाँ मिलेंगी और 10% रॉयल्टी मिलेगी जो किताब बिकने पर हर साल अप्रैल में हिसाब करने पर होगी...।'

आपका दुआगो भाई
शौकत उस्मानी

विशेष : शौकत उस्मानी के बारे में उनके पुत्र उस्मान गनी—

"जब से मैंने होश संभाला और जहाँ जिस हालत में अपने पिता शौकत उस्मानी से मिला तो मुझे महसूस हुआ कि वे अपनी घरेलू जिन्दगी को ताक में रख कर दुनिया भर के मज़दूरों के संघर्षों को ही तरजीह देते थे।"

"मैंने उनका हर प्रकार से आदर किया है और जितना जिस तरह से भी बन पड़ा उस्मानी साहब की सहायता करता रहा हूँ। इसकी वजह से दूसरों के लिए मैं एक मिसाल बन गया था। मैंने और किसी पार्टी में खुल कर काम नहीं किया। मेरे लिए वही पार्टी थे, वही सब कुछ।"



जनकवि
मोहम्मद
के

शहीद एवं स्वतंत्रतासेनानी स्मारक स्तंभ

भारत की आज़ादी के 25 वर्ष पूरे होने पर (15 अगस्त, 1972 से 14 अगस्त, 1973 तक के रजत जयंती वर्ष के उपलक्ष में) सरकार द्वारा स्थापित 'बीकानेर के स्वंतत्रता संग्राम के शहीदों एवं सेनानियों के नामों को सूचित करने वाला स्मारक स्तंभ :

1. श्री रघुवर दयाल गोयल, वकील, बीकानेर
2. श्री रामनारायण शर्मा, जस्सूसर गेट, बीकानेर
3. श्री नानक सिंह, मकान नं. 8, नगरपालिका के पास, बीकानेर
4. श्री किशन गोपाल 'महर महाराज', कन्दोई बाज़ार, बीकानेर
5. श्री पहाड़सिंह, माजी सा का बास, बीकानेर
6. श्री हीरालाल शर्मा पुत्र श्री नेमीचन्द, बीदासर चूरू
7. श्री गंगादास कौशिक
8. श्री देवीदत्त पंत
9. श्री शौकत उस्मानी
10. श्री लक्ष्मीदास स्वामी 'अथक'

नोट : सूची अपूर्ण ही रह गई।

* * *